॥ श्रीहरिः ॥

1417

शिवस्तोत्ररत्नाकर

गीताप्रेस, गोरखपुर

1417

॥ श्रीहरिः ॥

शिवस्तोत्ररत्नाकर

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

श्रुति कहती है—'सृष्टिके पूर्व न सत् (कारण) था, न असत् (कार्य); केवल एक निर्विकार शिव ही विद्यमान थे।' अतः 'जो वस्तु सृष्टिके पूर्व हो, वही जगत्का कारण है और जो जगत्का कारण है, वही ब्रह्म है।' इससे यह बात सिद्ध होती है कि 'ब्रह्म'का ही नाम 'शिव' है। ये शिव नित्य और अजन्मा हैं, इनका आदि और अन्त न होनेसे ये अनादि और अनन्त हैं। ये सभी पवित्र करनेवाले पदार्थोंको भी पवित्र करनेवाले हैं। इस प्रकार भगवान् शिव सर्वोपरि परात्पर तत्त्व हैं अर्थात् जिनसे परे और कुछ भी नहीं है—'यस्मात् परं नापरमस्ति किञ्चित्।'

भगवान् शङ्करके चरित्र बड़े ही उदात्त एवं अनुकम्पापूर्ण हैं। ये ज्ञान, वैराग्य तथा साधुताके परम आदर्श हैं। चन्द्र-सूर्य इनके नेत्र हैं, स्वर्ग सिर है, आकाश नाभि है, दिशाएँ कान हैं। इनके समान न कोई दाता है, न तपस्वी है, न ज्ञानी है, न त्यागी है, न वक्ता है, न उपदेष्टा और न कोई ऐश्वर्यशाली ही है। ये सदा सब वस्तुओंसे परिपूर्ण हैं।

भगवान् शिवके विविध नाम हैं। उनके अनेक रूपोंमें उमामहेश्वर, अर्धनारीश्वर, हरिहर, मृत्युञ्जय, पञ्चवक्त्र, एकवक्त्र, पशुपति, कृत्तिवास, दक्षिणामूर्ति, योगीश्वर तथा नटराज आदि रूप बहुत प्रसिद्ध हैं। भगवान् शिवका एक विशिष्ट रूप लिङ्ग-रूप भी है, जिनमें ज्योतिर्लिङ्ग, स्वयम्भूलिङ्ग, नर्मदेश्वरलिङ्ग और अन्य रत्नादि तथा धात्वादि लिङ्ग एवं पार्थिव आदि लिङ्ग हैं। इन सभी रूपोंकी स्तुति-उपासना तथा कीर्तन भक्तजन बड़ी श्रद्धाके

साथ करते हैं।

भूतभावन भगवान् सदाशिवकी महिमाका गान कौन कर सकता है? किसी मनुष्यमें इतनी शक्ति नहीं, जो भगवान् शङ्करके गुणोंका वर्णन कर सके। परम तत्त्वज्ञ भीष्मपितामहसे नीति, धर्म और मोक्षके सूक्ष्म रहस्योंका विवेचन सुनते हुए महाराज युधिष्ठिरने जब शिवमहिमाके सम्बन्धमें प्रश्न किया तो वृद्ध पितामहने अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए स्पष्ट शब्दोंमें कहा—

'साक्षात् विष्णुके अवतार भगवान् श्रीकृष्णके अतिरिक्त मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं कि वह भगवान् सदाशिवकी महिमाका वर्णन कर सके।'

भीष्मपितामहके प्रार्थना करनेपर भगवान् श्रीकृष्णने भी यही कहा—

'हिरण्यगर्भ, इन्द्र और महर्षि आदि भी शिवतत्त्व जाननेमें असमर्थ हैं, मैं उनके कुछ गुणोंका ही व्याख्यान करता हूँ'—ऐसी स्थितिमें हम-जैसे तुच्छ जीवोंके लिये तो भगवान् शिवकी महिमाका वर्णन करना एक अनधिकार चेष्टा ही कही जायगी, किंतु इसका समाधान श्रीपुष्पदन्ताचार्यने अपने शिवमहिम्नः-स्तोत्रके आरम्भमें ही कर दिया है—

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥

यदि आपकी महिमाको पूर्णरूपसे बिना जाने स्तुति करना

अनुचित हो तो ब्रह्मादिकी वाणी रुक जायगी और कोई भी स्तुति नहीं कर सकेगा; क्योंकि आपकी महिमाका अन्त कोई जान ही नहीं सकता। अनन्तका अन्त कैसे जाना जाय? तब अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार जो जितना समझ पाया है, उसे उतना कह देनेका अधिकार दूषित नहीं ठहराया जाय तो मुझ-जैसा तुच्छ जीव भी स्तुतिके लिये कमर क्यों न कसे? कुछ तो हम भी जानते ही हैं, जितना जानते हैं, उतना क्यों न कहें! आकाश अनन्त है, सृष्टिमें कोई भी पक्षी ऐसा नहीं जो आकाशका अन्त पा ले, किंतु इसके लिये वे उड़ना नहीं छोड़ते, प्रत्युत जिसके पक्षोंमें जितनी शक्ति है, उतनी उड़ान वह आकाशमें भरता है। हंस अपनी शक्तिके अनुसार उड़ता है और कौआ अपनी शक्तिके अनुसार। यदि वे नहीं उड़ें तो उनका पक्षी-जीवन ही निरर्थक हो जाय। इसी प्रकार अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार अनन्त शिवतत्त्वको जितना समझ सके, उतना समझते हुए और उसका मनन करते हुए परमात्म-प्रभु सदाशिवकी महिमा और उनके गुणोंका गान किये बिना शिवभक्त रह नहीं सकते।'

अतः यहाँ यह प्रयास किया गया है कि भगवान् शङ्करकी स्तुति, सहस्त्रनाम, आरती और उनसे सम्बन्धित स्तोत्रोंको एक स्थानपर संगृहीत कर लिया जाय, जिससे भक्तजनोंको पठन-पाठन, कीर्तन और मनन करनेमें सुविधा हो।

आशा है, भक्तजन इससे लाभान्वित होंगे।

—राधेश्याम खेमका

विषय-सूची

~~~ ✹ ~~~
~~~

ॐ

॥ नमः शिवाय ॥

शिवस्तोत्ररत्नाकर

भगवान् शिवको नमस्कार

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥

तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्॥

कल्याण एवं सुखके मूल स्रोत भगवान् शिवको नमस्कार है। कल्याणके विस्तार करनेवाले तथा सुखके विस्तार करनेवाले भगवान् शिवको नमस्कार है। मङ्गलस्वरूप और मङ्गलमयताकी सीमा भगवान् शिवको नमस्कार है।

जो सम्पूर्ण विद्याओंके ईश्वर, समस्त भूतोंके अधीश्वर, ब्रह्म-वेदके अधिपति, ब्रह्म-बल-वीर्यके प्रतिपालक तथा साक्षात् ब्रह्मा एवं परमात्मा हैं, वे सच्चिदानन्दमय शिव मेरे लिये नित्य कल्याणस्वरूप बने रहें।

तत्पदार्थ—परमेश्वररूप अन्तर्यामी पुरुषको हम जानें, उन महादेवका चिन्तन करें, वे भगवान् रुद्र हमें सद्धर्मके लिये प्रेरित करते रहें।

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः
सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥

वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥

सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः।
भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥
नमः सायं नमः प्रातर्नमो रात्र्या नमो दिवा।
भवाय च शर्वाय चोभाभ्यामकरं नमः ॥
यस्य निःश्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्।
निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थं महेश्वरम् ॥

जो अघोर हैं, घोर हैं, घोरसे भी घोरतर हैं और जो सर्वसंहारी रुद्ररूप हैं, आपके उन सभी स्वरूपोंको मेरा नमस्कार हो।

प्रभो! आप ही वामदेव, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, रुद्र, काल, कलविकरण, बलविकरण, बल, बलप्रमथन, सर्वभूतदमन तथा मनोन्मन आदि नामोंसे प्रतिपादित होते हैं, इन सभी नाम-रूपोंमें आपके लिये मेरा बारम्बार नमस्कार है।

मैं सद्योजात [शिव]-की शरण लेता हूँ। सद्योजातको मेरा नमस्कार है। किसी जन्म या जगत्‌में मेरा अतिभव—पराभव न करें। आप भवोद्भवको मेरा नमस्कार है।

हे रुद्र! आपको सायंकाल, प्रातःकाल, रात्रि और दिनमें भी नमस्कार है। मैं भवदेव तथा रुद्रदेव दोनोंको नमस्कार करता हूँ।

वेद जिनके निःश्वास हैं, जिन्होंने वेदोंसे सारी सृष्टिकी रचना की और जो विद्याओंके तीर्थ हैं, ऐसे शिवकी मैं वन्दना करता हूँ।
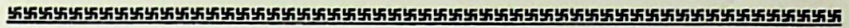
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु।

~~ ❋ ~~

तीन नेत्रोंवाले, सुगन्धयुक्त एवं पुष्टिके वर्धक शंकरका हम पूजन करते हैं, वे शंकर हमको दुःखोंसे ऐसे छुड़ायें जैसे खरबूजा पककर बन्धनसे अपने-आप छूट जाता है, किंतु वे शंकर हमें मोक्षसे न छुड़ायें।

जो रुद्र उमापति हैं वही सब शरीरोंमें जीवरूपसे प्रविष्ट हैं, उनके निमित्त हमारा प्रणाम हो। प्रसिद्ध एक अद्वितीय रुद्र ही पुरुष है, वह ब्रह्मलोकमें ब्रह्मारूपसे, प्रजापतिलोकमें प्रजापतिरूपसे, सूर्यमण्डलमें वैराटरूपसे तथा देहमें जीवरूपसे स्थित हुआ है; उस महान् सच्चिदानन्दस्वरूप रुद्रको बारम्बार प्रणाम हो। समस्त चराचरात्मक जगत् जो विद्यमान है, हो गया है तथा होगा, वह सब प्रपञ्च रुद्रकी सत्तासे भिन्न नहीं हो सकता, यह सब कुछ रुद्र ही है, इस रुद्रके प्रति प्रणाम हो।

~~ ❋ ~~

श्रीशिवप्रातःस्मरणस्तोत्रम्

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं
गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम्।
खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ १ ॥
प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्द्धदेहं
सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम् ।
विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोऽभिरामं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ २ ॥

जो सांसारिक भयको हरनेवाले और देवताओंके स्वामी हैं, जो गङ्गाजीको धारण करते हैं, जिनका वृषभ वाहन है, जो अम्बिकाके ईश हैं तथा जिनके हाथमें खट्वाङ्ग, त्रिशूल और वरद तथा अभयमुद्रा है, उन संसार-रोगको हरनेके निमित्त अद्वितीय औषधरूप 'ईश' (महादेवजी)-का मैं प्रातःसमयमें स्मरण करता हूँ॥ १ ॥

भगवती पार्वती जिनका आधा अङ्ग हैं, जो संसारकी सृष्टि, स्थिति और प्रलयके कारण हैं, आदिदेव हैं, विश्वनाथ हैं, विश्व-विजयी और मनोहर हैं, सांसारिक रोगको नष्ट करनेके लिये अद्वितीय औषधरूप उन 'गिरीश' (शिव)-को मैं प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ॥ २ ॥

प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यं
वेदान्तवेद्यमनघं पुरुषं महान्तम्।
नामादिभेदरहितं च विकारशून्यं
संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥ ३ ॥

प्रातः समुत्थाय शिवं विचिन्त्य
श्लोकत्रयं येऽनुदिनं पठन्ति।
ते दुःखजातं बहुजन्मसञ्चितं
हित्वा पदं यान्ति तदेव शम्भोः ॥ ४ ॥

॥ इति श्रीशिवप्रातःस्मरणस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

जो अन्तसे रहित आदिदेव हैं, वेदान्तसे जानने योग्य, पापरहित एवं महान् पुरुष हैं तथा जो नाम आदि भेदोंसे रहित, छः विकारों, (जन्म, वृद्धि, स्थिरता, परिणमन, अपक्षय और विनाश)-से शून्य, संसार-रोगको हरनेके निमित्त अद्वितीय औषध हैं, उन एक शिवजीको मैं प्रातःकाल भजता हूँ ॥ ३ ॥

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर शिवका ध्यान कर प्रतिदिन इन तीनों श्लोकोंका पाठ करते हैं, वे लोग अनेक जन्मोंके संचित दुःखसमूहसे मुक्त होकर शिवजीके उसी कल्याणमय पदको पाते हैं ॥ ४ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवप्रातःस्मरणस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

शिव-महिमा और स्तुति

एको हि रुद्रो न द्वितीयाय तस्थु-
र्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।
प्रत्यङ् जनांस्तिष्ठति संचुकोचान्तकाले
संसृज्य विश्वा भुवनानि गोपाः॥
यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च
विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः।
हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं
स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु॥

जो अपनी स्वरूपभूत विविध शासन-शक्तियोंद्वारा इन सब लोकोंपर शासन करता है, वह रुद्र एक ही है, (इसीलिये विद्वान् पुरुषोंने जगत्के कारणका निश्चय करते समय) दूसरेका आश्रय नहीं लिया, वह परमात्मा समस्त जीवोंके भीतर स्थित हो रहा है। सम्पूर्ण लोकोंकी रचना करके उनकी रक्षा करनेवाला परमेश्वर, प्रलयकालमें इन सबको समेट लेता है।

जो रुद्र इन्द्रादि देवताओंकी उत्पत्तिका हेतु और वृद्धिका हेतु है तथा (जो) सबका अधिपति (और) महान् ज्ञानी (सर्वज्ञ) है, (जिसने) पहले हिरण्यगर्भको उत्पन्न किया था, वह परमदेव परमेश्वर हमलोगोंको शुभ बुद्धिसे संयुक्त करे।

या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी।
तया नस्तनुवा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि॥
ततः परं ब्रह्मपरं बृहन्तं
यथानिकायं सर्वभूतेषु गूढम्।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितार-
मीशं तं ज्ञात्वामृता भवन्ति॥
सर्वाननशिरोग्रीवः सर्वभूतगुहाशयः।
सर्वव्यापी स भगवांस्तस्मात् सर्वगतः शिवः॥
महान् प्रभुर्वै पुरुषः सत्त्वस्यैष प्रवर्तकः।
सुनिर्मलामिमां प्राप्तिमीशानो ज्योतिरव्ययः॥

हे रुद्रदेव! तेरी जो भयानकतासे शून्य (सौम्य) पुण्यसे प्रकाशित होनेवाली (तथा) कल्याणमयी मूर्ति है, हे पर्वतपर रहकर सुखका विस्तार करनेवाले शिव! उस परम शान्त मूर्तिसे (तू कृपा करके) हमलोगोंको देख।

पूर्वोक्त जीव-समुदायरूप जगत्‌के परे (और) हिरण्यगर्भरूप ब्रह्मासे भी श्रेष्ठ, समस्त प्राणियोंमें उनके शरीरोंके अनुरूप होकर छिपे हुए (और) सम्पूर्ण विश्वको सब ओरसे घेरे हुए उस महान् सर्वत्र व्यापक एकमात्र देव परमेश्वरको जानकर (ज्ञानीजन) अमर हो जाते हैं।

वह भगवान् सब ओर मुख, सिर और ग्रीवावाला है। समस्त प्राणियोंके हृदयरूप गुफामें निवास करता है (और) सर्वव्यापी है, इसलिये वह कल्याणस्वरूप परमेश्वर सब जगह पहुँचा हुआ है।

निश्चय ही यह महान् समर्थ, सबपर शासन करनेवाला, अविनाशी (एवं) प्रकाशस्वरूप परमपुरुष पुरुषोत्तम अपनी प्राप्तिरूप इस अत्यन्त निर्मल लाभकी ओर अन्तःकरणको प्रेरित करनेवाला है।

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥
सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥
सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत्॥
अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्॥

जो अबसे पहले हो चुका है, जो भविष्यमें होनेवाला है और जो खाद्य पदार्थोंसे इस समय बढ़ रहा है, यह समस्त जगत् परम पुरुष परमात्मा ही है और (वही) अमृतस्वरूप मोक्षका स्वामी है।

वह परम पुरुष परमात्मा सब जगह हाथ-पैरवाला, सब जगह आँख, सिर और मुखवाला (तथा) सब जगह कानोंवाला है, (वही) ब्रह्माण्डमें सबको सब ओरसे घेरकर स्थित है।

(जो परम पुरुष परमात्मा) समस्त इन्द्रियोंसे रहित होनेपर भी समस्त इन्द्रियोंके विषयोंको जाननेवाला है (तथा) सबका स्वामी, सबका शासक (और) सबसे बड़ा आश्रय है।

वह परमात्मा हाथ-पैरोंसे रहित होकर भी समस्त वस्तुओंको ग्रहण करनेवाला (तथा) वेगपूर्वक सर्वत्र गमन करनेवाला है, आँखोंके बिना ही वह सब कुछ देखता है (और) कानोंके बिना ही सब कुछ सुनता है, वह जो कुछ भी जाननेमें आनेवाली वस्तुएँ हैं उन सबको जानता है परंतु उसको जाननेवाला (कोई) नहीं है, (ज्ञानी पुरुष) उसे महान् आदि पुरुष कहते हैं।

अणोरणीयान् महतो महीया-
नात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः।
तमक्रतुं पश्यति वीतशोको
धातुः प्रसादान्महिमानमीशम्॥
मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्।
तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत्॥
यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको
यस्मिन्निदं सं च वि चैति सर्वम्।
तमीशानं वरदं देवमीड्यं
निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति॥

(वह) सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म (तथा) बड़ेसे भी बहुत बड़ा परमात्मा इस जीवकी हृदयरूप गुफामें छिपा हुआ है, सबकी रचना करनेवाले परमेश्वरकी कृपासे (जो मनुष्य) उस संकल्परहित परमेश्वरको (और) उसकी महिमाको देख लेता है (वह) सब प्रकारके दुःखोंसे रहित (हो जाता है)।

माया तो प्रकृतिको समझना चाहिये और मायापति महेश्वरको समझना चाहिये, उसीके अङ्गभूत कारण-कार्य-समुदायसे यह सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो रहा है।

जो अकेला ही प्रत्येक योनिका अधिष्ठाता हो रहा है, जिसमें यह समस्त जगत् प्रलयकालमें विलीन हो जाता है और सृष्टिकालमें विविध रूपोंमें प्रकट भी हो जाता है, उस सर्वनियन्ता वरदायक स्तुति करनेयोग्य परमदेव परमेश्वरको तत्त्वसे जानकर (मनुष्य) निरन्तर बनी रहनेवाली इस (मुक्तिरूप) परम शान्तिको प्राप्त हो जाता है।

योदेवानां प्रभवश्चोद्भवश्च
विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः।
हिरण्यगर्भं पश्यत जायमानं
स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु॥
सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये
विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम्।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं
ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति॥
घृतात् परं मण्डमिवातिसूक्ष्मं
ज्ञात्वा शिवं सर्वभूतेषु गूढम्।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं
ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः॥

जो रुद्र इन्द्रादि देवताओंको उत्पन्न करनेवाला और बढ़ानेवाला है तथा (जो) सबका अधिपति (और) महान् ज्ञानी (सर्वज्ञ) है (जिसने सबसे पहले) उत्पन्न हुए हिरण्यगर्भको देखा था, वह परमदेव परमेश्वर हमलोगोंको शुभ बुद्धिसे संयुक्त करे।

(जो) सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म हृदयगुहारूप गुह्यस्थानके भीतर स्थित, अखिल विश्वकी रचना करनेवाला, अनेक रूप धारण करनेवाला (तथा) समस्त जगत्‌को सब ओरसे घेर रखनेवाला है (उस) एक (अद्वितीय) कल्याणस्वरूप महेश्वरको जानकर (मनुष्य) सदा रहनेवाली शान्तिको प्राप्त होता है।

कल्याणस्वरूप एक (अद्वितीय) परमदेवको मक्खनके ऊपर रहनेवाले सारभागकी भाँति अत्यन्त सूक्ष्म (और) समस्त प्राणियोंमें छिपा हुआ जानकर (तथा) समस्त जगत्‌को सब ओरसे घेरकर स्थित हुआ जानकर (मनुष्य) समस्त बन्धनोंसे छूट जाता है।

यदातमस्तन्न दिवा न रात्रि-
र्न सन्न चासञ्छिव एव केवलः।
तदक्षरं तत्सवितुर्वरेण्यं
प्रज्ञा च तस्मात् प्रसृता पुराणी॥
भावग्राह्यमनीडाख्यं भावाभावकरं शिवम्।
कलासर्गकरं देवं ये विदुस्ते जहुस्तनुम्॥

~~ ❋ ~~

जब अज्ञानमय अन्धकारका सर्वथा अभाव हो जाता है, उस समय (अनुभवमें आनेवाला तत्त्व) न दिन है न रात है, न सत् है और न असत् है, एकमात्र विशुद्ध कल्याणमय शिव ही है वह सर्वथा अविनाशी है, वह सूर्याभिमानी देवताका भी उपास्य है तथा उसीसे (यह) पुराना ज्ञान फैला है।

श्रद्धा और भक्तिके भावसे प्राप्त होने योग्य, आश्रयरहित कहे जानेवाले (तथा) जगत्की उत्पत्ति और संहार करनेवाले, कल्याणस्वरूप (तथा) सोलह कलाओंकी रचना करनेवाले परमदेव परमेश्वरको जो साधक जान लेते हैं, वे शरीरको (सदाके लिये) त्याग देते हैं—जन्म-मृत्युके चक्करसे छूट जाते हैं।

~~ ❋ ~~

सदाशिवके विभिन्न स्वरूपोंका ध्यान

भगवान् सदाशिव

यो धत्ते भुवनानि सप्त गुणवान् स्त्रष्टा रजःसंश्रयः
संहर्ता तमसान्वितो गुणवतीं मायामतीत्य स्थितः।
सत्यानन्दमनन्तबोधममलं ब्रह्मादिसंज्ञास्पदं
नित्यं सत्त्वसमन्वयादधिगतं पूर्णं शिवं धीमहि॥

परमात्मप्रभु शिव

वेदान्तेषु यमाहुरेकपुरुषं व्याप्य स्थितं रोदसी
यस्मिन्नीश्वर इत्यनन्यविषयः शब्दो यथार्थाक्षरः।

भगवान् सदाशिव

जो रजोगुणका आश्रय लेकर संसारकी सृष्टि करते हैं, सत्त्वगुणसे सम्पन्न हो सातों भुवनोंका धारण-पोषण करते हैं, तमोगुणसे युक्त हो सबका संहार करते हैं तथा त्रिगुणमयी मायाको लाँघकर अपने शुद्ध स्वरूपमें स्थित रहते हैं, उन सत्यानन्दस्वरूप, अनन्त बोधमय, निर्मल एवं पूर्णब्रह्म शिवका हम ध्यान करते हैं। वे ही सृष्टिकालमें ब्रह्मा, पालनके समय विष्णु और संहारकालमें रुद्र नाम धारण करते हैं तथा सदैव सात्त्विकभावको अपनानेसे ही प्राप्त होते हैं।

परमात्मप्रभु शिव

वेदान्तग्रन्थोंमें जिन्हें एकमात्र परम पुरुष परमात्मा कहा गया है, जिन्होंने समस्त द्यावा—पृथिवीको अन्तर्बाह्य—सर्वत्र व्याप्त कर रखा है, जिन एकमात्र महादेवके लिये 'ईश्वर' शब्द अक्षरशः यथार्थरूपमें प्रयुक्त होता है और जो किसी दूसरेके विशेषणका विषय नहीं बनता, अपने

अन्तर्यश्च मुमुक्षुभिर्नियमितप्राणादिभिर्मृग्यते
स स्थाणुः स्थिरभक्तियोगसुलभो निःश्रेयसायास्तु वः ॥

मङ्गलस्वरूप भगवान् शिव

कृपाललितवीक्षणं स्मितमनोज्ञवक्त्राम्बुजं
शशाङ्ककलयोज्ज्वलं शमितघोरतापत्रयम्।
करोतु किमपि स्फुरत्परमसौख्यसच्चिद्वपु-
र्धराधरसुताभुजोद्वलयितं महो मङ्गलम्॥

भगवान् अर्धनारीश्वर

नीलप्रवालरुचिरं विलसत्त्रिनेत्रं
पाशारुणोत्पलकपालत्रिशूलहस्तम् ।

अन्तर्हृदयमें समस्त प्राणोंको निरुद्ध करके मोक्षकी इच्छावाले योगीजन जिनका निरन्तर चिन्तन और अन्वेषण करते रहते हैं, वे नित्य एक समान सुस्थिर रहनेवाले, महाप्रलयमें भी विक्रियाको प्राप्त न होनेवाले और भक्तियोगसे शीघ्र प्रसन्न होनेवाले भगवान् शिव आप सभीका परम कल्याण करें।

मङ्गलस्वरूप भगवान् शिव

जिनकी कृपापूर्ण चितवन बड़ी ही सुन्दर है, जिनका मुखारविन्द मन्द मुसकानकी छटासे अत्यन्त मनोहर दिखायी देता है, जो चन्द्रमाकी कला-जैसे परम उज्ज्वल हैं, जो आध्यात्मिक आदि तीनों तापोंको शान्त कर देनेमें समर्थ हैं, जिनका स्वरूप सच्चिन्मय एवं परमानन्दरूपसे प्रकाशित होता है तथा जो गिरिराजनन्दिनी पार्वतीके भुजापाशसे आवेष्टित हैं, वे शिव नामक कोई अनिर्वचनीय तेजःपुञ्ज सबका मङ्गल करें।

भगवान् अर्धनारीश्वर

श्रीशंकरजीका शरीर नीलमणि और प्रवालके समान सुन्दर (नीललोहित) है, तीन नेत्र हैं, चारों हाथोंमें पाश, लाल कमल, कपाल

अर्धाम्बिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं
बालेन्दुबद्धमुकुटं प्रणमामि रूपम्॥
यो धत्ते निजमाययैव भुवनाकारं विकारोज्झितो
यस्याहुः करुणाकटाक्षविभवौ स्वर्गापवर्गाभिधौ।
प्रत्यग्बोधसुखाद्वयं हृदि सदा पश्यन्ति यं योगिन-
स्तस्मै शैलसुताञ्चितार्धवपुषे शश्वन्नमस्तेजसे॥

भगवान् शंकर

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं
पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम्।

और त्रिशूल हैं, आधे अङ्गमें अम्बिकाजी और आधेमें महादेवजी हैं। दोनों अलग-अलग शृङ्गारोंसे सज्जित हैं, ललाटपर अर्धचन्द्र है और मस्तकपर मुकुट सुशोभित है, ऐसे स्वरूपको नमस्कार है।

जो निर्विकार होते हुए भी अपनी मायासे ही विराट् विश्वका आकार धारण कर लेते हैं, स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) जिनके कृपा-कटाक्षके ही वैभव बताये जाते हैं तथा योगीजन जिन्हें सदा अपने हृदयके भीतर अद्वितीय आत्मज्ञानानन्दस्वरूपमें ही देखते हैं, उन तेजोमय भगवान् शंकरको, जिनका आधा शरीर शैलराजकुमारी पार्वतीसे सुशोभित है, निरन्तर मेरा नमस्कार है।

भगवान् शंकर

वन्दना करनेसे जिनका मन प्रसन्न हो जाता है, जिन्हें प्रेम अत्यन्त प्यारा है, जो प्रेम प्रदान करनेवाले, पूर्णानन्दमय, भक्तोंकी अभिलाषा पूर्ण करनेवाले, सम्पूर्ण ऐश्वर्योंके एकमात्र आवासस्थान और कल्याणस्वरूप हैं,
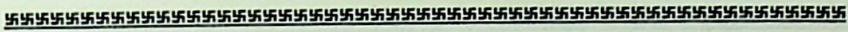
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं
विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शंकरम्॥

गौरीपति भगवान् शिव

विश्वोद्भवस्थितिलयादिषु हेतुमेकं
गौरीपतिं विदिततत्त्वमनन्तकीर्तिम्।
मायाश्रयं विगतमायमचिन्त्यरूपं
बोधस्वरूपममलं हि शिवं नमामि॥

महामहेश्वर

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।

सत्य जिनका श्रीविग्रह है, जो सत्यमय हैं, जिनका ऐश्वर्य त्रिकालाबाधित है, जो सत्यप्रिय एवं सत्यप्रदाता हैं, ब्रह्मा और विष्णु जिनकी स्तुति करते हैं, स्वेच्छानुसार शरीर धारण करनेवाले उन भगवान् शंकरकी मैं वन्दना करता हूँ।

गौरीपति भगवान् शिव

जो विश्वकी उत्पत्ति, स्थिति और लय आदिके एकमात्र कारण हैं, गौरी गिरिराजकुमारी उमाके पति हैं, तत्त्वज्ञ हैं, जिनकी कीर्तिका कहीं अन्त नहीं है, जो मायाके आश्रय होकर भी उससे अत्यन्त दूर हैं तथा जिनका स्वरूप अचिन्त्य है, उन विमल बोधस्वरूप भगवान् शिवको मैं प्रणाम करता हूँ।

महामहेश्वर

चाँदीके पर्वतके समान जिनकी श्वेत कान्ति है, जो सुन्दर चन्द्रमाको आभूषणरूपसे धारण करते हैं, रत्नमय अलंकारोंसे जिनका शरीर उज्ज्वल है, जिनके हाथोंमें परशु तथा मृग, वर और अभय मुद्राएँ हैं, जो प्रसन्न

पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

पञ्चमुख सदाशिव

मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखैः पञ्चभिः
त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम्।
शूलं टङ्ककृपाणवज्रदहनान् नागेन्द्रघण्टाङ्कुशान्
पाशं भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलं चिन्तयेत्॥

हैं, पद्मके आसनपर विराजमान हैं, देवतागण जिनके चारों ओर खड़े होकर स्तुति करते हैं, जो बाघकी खाल पहनते हैं, जो विश्वके आदि, जगत्‌की उत्पत्तिके बीज और समस्त भयको हरनेवाले हैं, जिनके पाँच मुख और तीन नेत्र हैं, उन महेश्वरका प्रतिदिन ध्यान करना चाहिये।

पञ्चमुख सदाशिव

जिन भगवान् शंकरके पाँच मुखोंमें क्रमशः ऊर्ध्वमुख गजमुक्ताके समान हलके लाल रंगका, पूर्व-मुख पीतवर्णका, दक्षिण-मुख सजल मेघके समान नील-वर्णका, पश्चिम-मुख मुक्ताके समान कुछ भूरे रंगका और उत्तर-मुख जवापुष्पके समान प्रगाढ़ रक्तवर्णका है, जिनकी तीन आँखें हैं और सभी मुखमण्डलोंमें नीलवर्णके मुकुटके साथ चन्द्रमा सुशोभित हो रहे हैं, जिनके मुखमण्डलकी आभा करोड़ों पूर्ण चन्द्रमाके तुल्य आह्लादित करनेवाली हैं, जो अपने हाथोंमें क्रमशः त्रिशूल, टङ्क (परशु), तलवार, वज्र, अग्नि, नागराज, घण्टा, अङ्कुश, पाश तथा अभयमुद्रा धारण किये हुए हैं एवं जो अनन्त कल्पवृक्षके समान कल्याणकारी हैं, उन सर्वेश्वर भगवान् शंकरका ध्यान करना चाहिये।
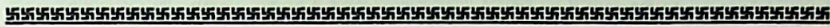
अम्बिकेश्वर

आद्यन्तमङ्गलमजातसमानभाव-
मार्यं तमीशमजरामरमात्मदेवम्।
पञ्चाननं प्रबलपञ्चविनोदशीलं
सम्भावये मनसि शंकरमम्बिकेशम्॥

पार्वतीनाथ भगवान् पञ्चानन

शूलाही टङ्कघण्टासिशृणिकुलिशपाशाग्न्यभीतीर्दधानं
दोर्भिः शीतांशुखण्डप्रतिघटितजटाभारमौलिं त्रिनेत्रम्।
नानाकल्पाभिरामापघनमभिमतार्थप्रदं सुप्रसन्नं
पद्मस्थं पञ्चवक्त्रं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि॥

अम्बिकेश्वर

जो आदि और अन्तमें (तथा मध्यमें भी) नित्य मङ्गलमय हैं, जिनकी समानता अथवा तुलना कहीं भी नहीं है, जो आत्माके स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले देवता (परमात्मा) हैं, जिनके पाँच मुख हैं और जो खेल-ही-खेलमें—अनायास जगत्की रचना, पालन और संहार तथा अनुग्रह एवं तिरोभावरूप पाँच प्रबल कर्म करते रहते हैं, उन सर्वश्रेष्ठ अजर-अमर ईश्वर अम्बिकापति भगवान् शंकरका मैं मन-ही-मन चिन्तन करता हूँ।

पार्वतीनाथ भगवान् पञ्चानन

जो अपने करकमलोंमें क्रमशः त्रिशूल, सर्प, टङ्क (परशु), घण्टा, तलवार, अङ्कुश, वज्र, पाश, अग्नि तथा अभयमुद्रा धारण किये हुए हैं, जिनका प्रत्येक मुखमण्डल द्वितीयाके चन्द्रमासे युक्त जटाओंसे सुशोभित हो रहा है, जिनके चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि—ये तीन नेत्र हैं, जो अनेक कल्पवृक्षोंके समान अपने भक्तोंको स्थिर रहनेवाले मनोरथोंसे परिपूर्ण कर देते हैं और जो सदा अत्यन्त प्रसन्न ही रहते हैं, जो कमलके ऊपर विराजित हैं, जिनके पाँच मुख हैं तथा जिनका वर्ण स्फटिकमणिके समान दिव्य प्रभासे आभासित हो रहा है, उन पार्वतीनाथ भगवान् शंकरको मैं नमस्कार करता हूँ।

भगवान् महाकाल

स्त्रष्टारोऽपि प्रजानां प्रबलभवभयाद् यं नमस्यन्ति देवा
यश्चित्ते सम्प्रविष्टोऽप्यवहितमनसां ध्यानमुक्तात्मनां च।
लोकानामादिदेवः स जयतु भगवाञ्छ्रीमहाकालनामा
बिभ्राणः सोमलेखामहिवलययुतं व्यक्तलिङ्गं कपालम्॥

श्रीनीलकण्ठ

बालार्कायुततेजसं धृतजटाजूटेन्दुखण्डोज्ज्वलं
नागेन्द्रैः कृतभूषणं जपवटीं शूलं कपालं करैः।
खट्वाङ्गं दधतं त्रिनेत्रविलसत्पञ्चाननं सुन्दरं
व्याघ्रत्वक्परिधानमब्जनिलयं श्रीनीलकण्ठं भजे॥

भगवान् महाकाल

प्रजाकी सृष्टि करनेवाले प्रजापति देव भी प्रबल संसार-भयसे मुक्त होनेके लिये जिन्हें नमस्कार करते हैं, जो सावधानचित्तवाले ध्यानपरायण महात्माओंके हृदयमन्दिरमें सुखपूर्वक विराजमान होते हैं और चन्द्रमाकी कला, सर्पोंके कङ्कण तथा व्यक्त चिह्नवाले कपालको धारण करते हैं, सम्पूर्ण लोकोंके आदिदेव उन भगवान् महाकालकी जय हो।

श्रीनीलकण्ठ

भगवान् श्रीनीलकण्ठ दस हजार बालसूर्योंके समान तेजस्वी हैं, सिरपर जटाजूट, ललाटपर अर्धचन्द्र और मस्तकपर सर्पोंका मुकुट धारण किये हैं, चारों हाथोंमें जपमाला, त्रिशूल, नर-कपाल और खट्वाङ्ग-मुद्रा है। तीन नेत्र हैं, पाँच मुख हैं, अति सुन्दर विग्रह है, बाघम्बर पहने हुए हैं और सुन्दर पद्मपर विराजित हैं। इन श्रीनीलकण्ठदेवका भजन करना चाहिये।
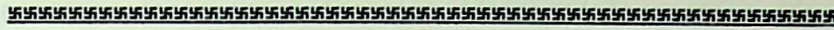
पशुपति

मध्याह्नार्कसमप्रभं शशिधरं भीमाट्टहासोज्ज्वलं
त्र्यक्षं पन्नगभूषणं शिखिशिखाश्मश्रुस्फुरन्मूर्धजम्।
हस्ताब्जैस्त्रिशिखं समुद्गरमसिं शक्तिं दधानं विभुं
दंष्ट्राभीमचतुर्मुखं पशुपतिं दिव्यास्त्ररूपं स्मरेत्॥

भगवान् दक्षिणामूर्ति

मुद्रां भद्रार्थदात्रीं सपरशुहरिणां बाहुभिर्बाहुमेकं
जान्वासक्तं दधानो भुजगवरसमाबद्धकक्षो वटाधः।

पशुपति

जिनकी प्रभा मध्याह्नकालीन सूर्यके समान दिव्य रूपमें भासित हो रही है, जिनके मस्तकपर चन्द्रमा विराजित है, जिनका मुखमण्डल प्रचण्ड अट्टहाससे उद्भासित हो रहा है, सर्प ही जिनके आभूषण हैं तथा चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि—ये तीन जिनके तीन नेत्रोंके रूपमें अवस्थित हैं, जिनकी दाढ़ी और सिरकी जटाएँ चित्र-विचित्र रंगके मोरपंखके समान स्फुरित हो रही हैं, जिन्होंने अपने करकमलोंमें त्रिशूल, मुद्गर, तलवार तथा शक्तिको धारण कर रखा है और जिनके चार मुख तथा दाढ़ें भयावह हैं, ऐसे सर्वसमर्थ, दिव्य रूप एवं अस्त्रोंको धारण करनेवाले पशुपतिनाथका ध्यान करना चाहिये।

भगवान् दक्षिणामूर्ति

जो भगवान् दक्षिणामूर्ति अपने करकमलोंमें अर्थ प्रदान करनेवाली भद्रामुद्रा, मृगीमुद्रा और परशु धारण किये हुए हैं और एक हाथ घुटनेपर टेके हुए हैं, कटिप्रदेशमें नागराजको लपेटे हुए हैं तथा
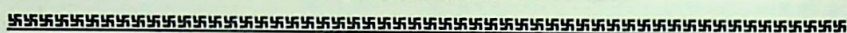
आसीनश्चन्द्रखण्डप्रतिघटितजटः क्षीरगौरस्त्रिनेत्रो
दद्यादाद्यैः शुकाद्यैर्मुनिभिरभिवृतो भावशुद्धिं भवो वः॥

महामृत्युञ्जय

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्।
अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलासकान्तं शिवं
स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटं देवं त्रिनेत्रं भजे॥

वटवृक्षके नीचे अवस्थित हैं, जिनके प्रत्येक सिरके ऊपर जटाओंमें द्वितीयाका चन्द्रमा जटित है और वर्ण धवल दुग्धके समान उज्ज्वल है, सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि—ये तीनों जिनके तीन नेत्रके रूपमें स्थित हैं, जो सनकादि एवं शुकदेव [नारद] आदि मुनियोंसे आवृत हैं, वे भगवान् भव—शंकर आपके हृदयमें विशुद्ध भावना (विरक्ति) प्रदान करें।

महामृत्युञ्जय

त्र्यम्बकदेव अष्टभुज हैं। उनके एक हाथमें अक्षमाला और दूसरेमें मृगमुद्रा है, दो हाथोंसे दो कलशोंमें अमृतरस लेकर उससे अपने मस्तकको आप्लावित कर रहे हैं और दो हाथोंसे उन्हीं कलशोंको थामे हुए हैं। शेष दो हाथ उन्होंने अपने अङ्कपर रख छोड़े हैं और उनमें दो अमृतपूर्ण घट हैं। वे श्वेत पद्मपर विराजमान हैं, मुकुटपर बालचन्द्र सुशोभित है, मुखमण्डलपर तीन नेत्र शोभायमान हैं। ऐसे देवाधिदेव कैलासपति श्रीशंकरकी मैं शरण ग्रहण करता हूँ।
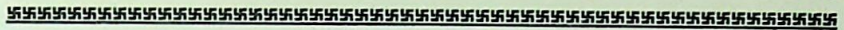
हस्ताम्भोजयुगस्थकुम्भयुगलादुद्धृत्य तोयं शिरः
सिञ्चन्तं करयोर्युगेन दधतं स्वाङ्के सकुम्भौ करौ।
अक्षस्त्रङ्मृगहस्तमम्बुजगतं मूर्धस्थचन्द्रस्त्रव-
त्पीयूषार्द्रतनुं भजे सगिरिजं त्र्यक्षं च मृत्युञ्जयम्॥

जो अपने दो करकमलोंमें रखे हुए दो कलशोंसे जल निकालकर उनसे ऊपरवाले दो हाथोंद्वारा अपने मस्तकको सींचते हैं। अन्य दो हाथोंमें दो घड़े लिये उन्हें अपनी गोदमें रखे हुए हैं तथा शेष दो हाथोंमें रुद्राक्ष एवं मृगमुद्रा धारण करते हैं, कमलके आसनपर बैठे हैं, सिरपर स्थित चन्द्रमासे निरन्तर झरते हुए अमृतसे जिनका सारा शरीर भीगा हुआ है तथा जो तीन नेत्र धारण करनेवाले हैं, उन भगवान् मृत्युञ्जयका, जिनके साथ गिरिराजनन्दिनी उमा भी विराजमान हैं, मैं भजन (चिन्तन) करता हूँ।

को जाँचिये संभु तजि आन।
दीनदयालु भगत-आरति-हर, सब प्रकार समरथ भगवान॥
कालकूट-जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि किये बिष पान।
दारुन दनुज, जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान॥
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत संत, श्रुति, सकल पुरान।
सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदासिव सबहिं समान॥
सेवत सुलभ, उदार कलपतरु, पारबती-पति परम सुजान।
देहु काम-रिपु राम-चरन-रति, तुलसिदास कहँ कृपानिधान॥
(विनय-पत्रिका ३)

शिवमहिम्नःस्तोत्रम्

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः॥ १॥

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।

(गन्धर्वराज पुष्पदन्त भगवान् शङ्करकी स्तुतिके उपक्रममें कहते हैं—) 'हे पाप हरण करनेवाले शङ्करजी! आपकी महिमाके आर-पारके ज्ञानसे रहित सामान्य (अल्प ज्ञानवान्) व्यक्तिके द्वारा की गयी आपकी स्तुति यदि आपके स्वरूप (माहात्म्य)-वर्णनके अनुरूप नहीं है तो (फिर) ब्रह्मादि देवोंकी वाणी भी आपकी स्तुतिके अनुरूप नहीं है (क्योंकि वे भी आपके गुणोंका सर्वथा वर्णन नहीं कर सकते)। किंतु जब सभी लोग अपनी-अपनी बुद्धि (-की शक्ति)-के अनुसार स्तुति करते हुए उपालम्भके योग्य नहीं माने जाते हैं, तब मेरा भी स्तुति करनेका (यह) प्रयास अपवादरहित ही होना चाहिये' (यह प्रयास खण्डनीय नहीं है)॥ १॥

'आपकी महिमा वाणी और मनकी पहुँचसे परे है। आपकी उस महिमाका वेद भी (आश्चर्य-) चकित (भयभीत) होकर (निषेधमुखेन) नेति-नेति कहते हुए आशयरूपमें वर्णन करते हैं।

स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥ २ ॥
मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥ ३ ॥

फिर तो ऐसे अचिन्त्य महिमामय आप किसकी स्तुतिके विषय (वर्ण्य) हो सकते हैं? अर्थात् किसीकी स्तुति तदर्थ समर्थ नहीं हो सकती; क्योंकि आपके गुण न जाने कितने प्रकारके हैं अर्थात् अनन्त हैं। फिर भी हे प्रभो! नवीन परम रमणीय आपके (सगुण-) रूपके विषयमें वर्णनके लिये किसका मन आसक्त नहीं होता और किसकी वाणी उसमें प्रवृत्त नहीं होती? अर्थात्—सबके मन-वचन सगुणरूपमें संलग्न हो जाते हैं—सभी अपनी वाणीको प्रेरित करके वर्णनमें लगा देते हैं'॥ २॥

'हे भगवन्! मधुसे सिक्त-सी अत्यन्त मधुर एवं परम उत्तम अमृतरूप वेदवाणीकी रचना करनेवाले देवाधिदेव ब्रह्मदेवकी वाणी भी क्या आपके गुणोंको प्रकाशितकर आपको चमत्कृत कर सकती है? (कदापि नहीं) फिर भी हे त्रिपुरारि! मेरी बुद्धि आपके गुणानुवादजनित पुण्यसे अपनी इस (मलिन वासनासे भरी अतएव अपवित्र) वाणीको पवित्र करनेके लिये (ही) आपके गुण-कथनके द्वारा (की जानेवाली) स्तुतिके विषयमें उद्यत है' (न कि अपने स्तुति-कौशलसे आपका अनुरञ्जन करूँगा—यह मेरा अभिप्राय है)॥ ३॥

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन् वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः ॥ ४ ॥
किमीहः किं कायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥ ५ ॥

'हे वर देनेवाले शिवजी! आप विश्वका सृजन, पालन एवं संहार करते हैं—ऐसा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद (वेदत्रयी) निष्कर्षरूपसे वर्णन करते हैं। इसी प्रकार तीनों गुणोंसे विभिन्न त्रिमूर्तियों (ब्रह्मा-विष्णु-महेश)-में बँटा हुआ जो इस ब्रह्माण्डमें आपका वह प्रख्यात (रचनात्मक, पालनात्मक एवं संहारात्मक) ऐश्वर्य है, उसके विषयमें खण्डन करनेके लिये कुछ जडबुद्धि अकल्याणभागी (मन्दों) अभागों (नास्तिकों)-को मनोहर लगनेवाला पर वास्तवमें अशोभनीय या हानिकारक व्यर्थका मिथ्याप्रलाप (बकवाद) उठाते हैं'॥ ४॥

'हे वरद भगवन्! वह विधाता त्रिभुवनका निर्माण करता है तो उसकी कैसी चेष्टा होती है? उसका स्वरूप क्या है? फिर उसके साधन क्या हैं? आधार अर्थात् जगत्का उपादान कारण क्या है?—इस प्रकारका कुतर्क, सब तर्कोंसे परे अचिन्त्य ऐश्वर्यवाले आपके विषयमें निराधार एवं नगण्य (उपेक्षित) होता हुआ भी सांसारिक (साधारण) जनोंको भ्रममें डालनेके लिये कुछ मूर्खोंको वाचाल बना देता है'॥ ५॥

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे॥ ६॥

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥ ७॥

'हे देव! श्रेष्ठ अवयववाले (शरीरधारी) होते हुए भी ये लोक क्या बिना जन्मके ही हैं? (नहीं, कदापि नहीं;) क्या विश्वकी सृष्टि-पालन-संहार आदि क्रियाएँ बिना (अधिष्ठान) कर्ताके माने सम्भव हो सकती हैं? या ईश्वरके बिना कोई सामान्य जीव ही अधिष्ठान या कर्ता हो सकता है? (नहीं; क्योंकि) यदि असमर्थ जीव ही कर्ता है तो चौदह भुवनोंकी सृष्टिके लिये उसके पास क्या साधन हो सकता है? (इस प्रकार आपके अस्तित्वके प्रमाण सिद्ध होनेपर भी) यतः वे (जडबुद्धि) शङ्का करते हैं, अतः वे बड़े अभागी हैं'॥ ६॥

'ऋक्, यजुः, साम—ये वेद, सांख्यशास्त्र, योगशास्त्र, पाशुपतमत, वैष्णवमत आदि विभिन्न मत-मतान्तर हैं। इनमें (सभी लोग हमारा) यह मत उत्तम है, हमारा मत लाभप्रद है (दूसरोंका नहीं;)—इस प्रकारकी रुचियोंकी विचित्रतासे सीधे-टेढ़े नाना मार्गोंसे चलनेवाले साधकोंके लिये एकमात्र प्राप्तव्य (गन्तव्य) आप ही हैं। जैसे सीधे-टेढ़े मार्गोंसे बहती हुई सभी नदियाँ अन्तमें समुद्रमें ही पहुँचती हैं, उसी प्रकार सभी मतानुयायी आपके ही पास पहुँचते हैं'॥ ७॥

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति च भवद्भ्रूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति॥ ८॥
ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता॥ ९॥

'हे वरदानी शङ्कर! बूढ़ा बैल, खटियेका पावा, फरसा, चर्म, भस्म, सर्प, कपाल—बस इतनी ही आपके कुटुम्ब-पालनकी सामग्री है। फिर भी इन्द्रादि देवताओंने आपके कृपाकटाक्षसे ही उन अपनी विलक्षण (अतुलनीय) समृद्धियों (भोगों)-को प्राप्त किया है; किंतु आपके पास भोगकी कोई वस्तु नहीं है; क्योंकि विषयवासनारूपी मृगतृष्णा स्वरूपभूत चैतन्य आत्माराममें रमण करनेवालेको भ्रमित नहीं कर पाती है'॥ ८॥

'हे त्रिपुरारि! कोई वादी इस सम्पूर्ण जगत्को ध्रुव (नित्य) कहता है, कोई इस सबको अध्रुव (असत् या अनित्य) बताता है और कोई तो विश्वके समस्त पदार्थोंमें कुछ नित्य और कुछ अनित्य है—ऐसा कहता है। उन सब वादोंसे आश्चर्यचकित-सा मैं उन्हीं वादों (स्तुति-प्रकारों)-से आपकी स्तुति करता हुआ लज्जित नहीं हो रहा हूँ; क्योंकि मुखरता (वाचालता) धृष्ट होती ही है' (उसे लज्जा कहाँ?)॥ ९॥

तवैश्वर्यं यत्नाद् यदुपरि विरिञ्चो हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति॥ १०॥

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद् बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान्।
शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्॥ ११॥

'हे गिरिश! (अग्नि-स्तम्भके समान) आपका जो लिङ्गाकार तैजस रूप (ऐश्वर्य) प्रकट हुआ उसके ओर-छोरको जाननेके लिये ऊपरकी ओर ब्रह्मा तथा नीचेकी ओर विष्णु बड़े प्रयत्नसे गये; पर, (वे दोनों ही) पार पानेमें असमर्थ रहे। तब उन दोनोंने श्रद्धा और भक्तिसे पूर्ण बुद्धिसे नतमस्तक हो आपकी स्तुति की। (तब उनकी स्तुतिसे प्रसन्न हो) आप उन दोनोंके समक्ष स्वयं प्रकट हो गये। हे भगवन्! श्रद्धा-भक्तिपूर्वक की गयी आपकी सेवा (स्तुति) क्या फलीभूत नहीं होती?' (अर्थात् अवश्य फलीभूत होती है)॥ १०॥

'हे त्रिपुरारि! दशमुख रावणने तीनों भुवनोंका निष्कण्टक राज्य बिना प्रयत्न (अनायास) प्राप्तकर जो अपनी भुजाओंकी युद्ध करनेकी खुजलाहट न मिटा सका (प्रतिभटसे युद्ध करनेकी इच्छा पूर्ण न कर सका; क्योंकि कोई प्रतिभट मिला ही नहीं), यह आपके चरणकमलोंमें अपने दस सिररूपी कमलोंकी बलि प्रदान करनेमें प्रवृत्त आपमें अविचल भक्तिका ही प्रभाव है'॥ ११॥
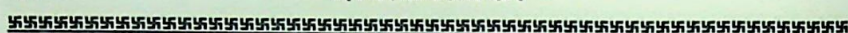
अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात् कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः॥ १२॥
यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयस्त्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः॥ १३॥

'हे त्रिपुरारि! आपकी सेवासे रावणकी भुजाओंमें शक्ति प्राप्त हुई थी। अभिमानमें आकर वह अपना भुजबल आपके निवास-स्थान कैलासके उठानेमें भी तौलने लगा, पर आपने जो पैरके अँगूठेकी नोकसे जरा-सा कैलासको दबा दिया तो उस रावणकी प्रतिष्ठा (स्थिति) पातालमें भी दुर्लभ हो गयी। (वह नीचे-ही-नीचे खिसकता चला गया।) प्रायः यह निश्चित है कि नीच व्यक्ति समृद्धिको पाकर मोहमें फँस जाता है' (कृतघ्न हो जाता है)॥ १२॥

'हे वरदानी शङ्कर! त्रिभुवनको वशवर्ती बनानेवाले बाणासुरने इन्द्रकी अपार (परमोच्च) सम्पत्तिको भी जो अपने समक्ष नीचा कर दिया, वह आपके चरणोंके शरणागत (सेवक) उस बाणासुरके विषयमें यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योंकि आपके समक्ष सिर झुकाना (नतमस्तक होना) किसकी (किस-किस विषयकी) उन्नतिके लिये नहीं होता? अर्थात् आपके चरणोंमें सिर झुकानेसे सबकी सब प्रकारकी उन्नति होती है'॥ १३॥

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद्यस्त्रिनयनविषं संहृतवतः।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः॥ १४॥

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरः स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः॥ १५॥

'हे त्रिनेत्र शङ्कर! समुद्रमन्थनसे उत्पन्न विषकी विषम ज्वालासे असमयमें ही ब्रह्माण्डके नाशके भयसे चकित देवों और दानवोंपर दयार्द्र होकर विषपान करनेवाले आपके कण्ठमें जो कालापन (नीला धब्बा) है, वह क्या आपकी शोभा नहीं बढ़ा रहा है। (अर्थात् महोपकारके कार्यसे उत्पन्न होनेके कारण और अधिक शोभा बढ़ा रहा है।) वस्तुतः संसारके भयको दूर करनेके स्वभाववाले महापुरुषोंका विकार भी प्रशंसनीय होता है'॥ १४॥

'हे जगदीश! जिस कामदेवके बाण देव, असुर एवं नरसमूहरूप विश्वमें नित्य विजेता रहे, कहीं भी असफल होकर नहीं लौटते थे, वही कामदेव जब आपको अन्य देवताओंके समान (जेय) समझने लगा, तब आपके देखते ही वह स्मृतिमात्र शेष रह गया (भस्म हो गया) और (सच है कि) जितेन्द्रियोंका अपमान (उन्हें विचलित करनेका उपक्रम) कल्याणकारी नहीं (अपितु घातक) होता है'॥ १५॥

महीं पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौःस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता॥ १६॥
वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद् द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः॥ १७॥

'हे ईश! जब आप ताण्डव (नर्तन) करते हैं तब आपके पैरोंके आघात (चोट)-से पृथ्वी अचानक संशय (संकट)-को प्राप्त हो जाती है; आकाशमण्डलके ग्रह-नक्षत्र-तारे आपके घूमते हुए भुजदण्ड (की चोट)-से पीडित हो जाते हैं (अतः आकाशमण्डल भी संकटग्रस्त हो जाता है)। स्वर्ग आपकी खुली (बिखरी) हुई जटाओंके किनारोंकी चोटसे बारम्बार दुःखद स्थितिको प्राप्त हो जाता है। यद्यपि आप जगत्की रक्षाके लिये ही ताण्डव करते हैं; फिर भी आपकी प्रभुता (तो) वाम (क्षोभद) हो ही जाती है' (सच है सम्पत्तिवालेका उचित कार्य भी विक्षोभ उत्पन्न कर देता है)॥ १६॥

'हे जगदीश! समस्त आकाशमें फैले तारोंके सदृश फेनकी शोभावाला जो गङ्गाजलका प्रवाह है, वह आपके सिरपर जलविन्दुके समान (छोटा) दिखायी पड़ा और (सिरसे नीचे गिरनेपर) उसी जलविन्दुने समुद्ररूपी करधनी (वलय)-के भीतर संसारको द्वीपके समान बना दिया। बस, इसीसे आपका दिव्य शरीर सर्वोत्कृष्ट है—यह अनुमेय हो जाता है'॥ १७॥

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः॥ १८॥
हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्रकमलम्।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम्॥ १९॥

'हे परमेश्वर! त्रिपुरासुररूपी तृणको दग्ध करनेके इच्छुक आपने पृथ्वीको रथ, ब्रह्माको सारथि, सुमेरुपर्वतको धनुष, चन्द्र और सूर्यको रथके दोनों चक्के और चक्रपाणि विष्णुको (जो) बाण बनाया, (तो) यह सब आडम्बर (समारम्भ) करनेका क्या प्रयोजन था? (सर्वसमर्थ आप उसे अपने इच्छामात्रसे जला सकते थे) निश्चय ही अपने वशवर्ती (हाथमें स्थित) खिलौनोंसे खेलती हुई ईश्वरकी बुद्धि पराधीन नहीं होती' (अर्थात् वह स्वतन्त्ररूपसे अपने खिलौनोंसे खेलती रहती है)॥ १८॥

'हे त्रिपुरारि! भगवान् विष्णुने आपके चरणोंमें एक हजार कमल चढ़ानेका संकल्प किया था। उनमें जो एक कमल कम पड़ गया तो उन्होंने अपना ही नेत्रकमल उखाड़ कर चढ़ा दिया। बस, उनकी यही भक्तिकी पराकाष्ठा सुदर्शन चक्रका स्वरूप धारण कर त्रिभुवनकी रक्षाके लिये सदा जागरूक है' (भगवान् शङ्करने प्रसन्न होकर श्रीविष्णुको चक्र प्रदान कर दिया था, जो विश्वका संरक्षण अनुग्रह-निग्रहद्वारा करता है)॥ १९॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः॥ २०॥
क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रेषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः॥ २१॥

'हे त्रिपुरारि! (बिना फल दिये ही) यज्ञादिके समाप्त हो जानेपर यज्ञकर्ताओंका यज्ञफलसे सम्बन्ध करनेके लिये (फल दिलानेके लिये) आप तत्पर रहते हैं। कर्म तो करनेके बाद नष्ट हो जाता है (वह जड है)। अतः चेतन परमेश्वरकी आराधनाके बिना वह नष्ट कर्म फल देनेमें समर्थ नहीं होता है। इसलिये आपको यज्ञोंके फल देनेमें समर्थ दाता देखकर पुण्यात्मालोग वेदवाक्योंमें श्रद्धा-विश्वास रखकर (यज्ञ-) कर्ममें तत्पर रहते हैं'॥ २०॥

'हे शरणदाता शङ्कर! कार्यमें कुशल प्रजाजनोंका स्वामी प्रजापति दक्ष यज्ञका यजमान (क्रतुपति) बना था। त्रिकालदर्शी ऋषिगण याज्ञिक (यज्ञ करानेवाले होता आदि) थे। देवगण यज्ञके सामान्य सदस्य थे। फिर भी यज्ञफलके वितरणके व्यसनी आपसे ही यज्ञका विध्वंस हो गया। अतः यह निश्चित है कि अश्रद्धासे किये गये यज्ञ (कर्म) कर्ताके विनाशके लिये ही सिद्ध होते हैं' (दक्षने श्रद्धावर्जित यज्ञ किया था)॥ २१॥
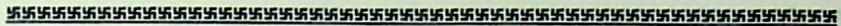
प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः॥ २२॥
स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणवत्
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि।

'हे स्वामिन्! (एक बार) कामुक ब्रह्माने अपनी दुहितासे हठपूर्वक रमण करनेकी इच्छा की। वह लज्जासे मृगी बनकर भागी; तब ब्रह्मा भी मृग बनकर उसके पीछे दौड़े। आपने भी उन्हें दण्ड देनेके लिये मृगके शिकारीके वेगके समान हाथमें धनुष लेकर बाण चला दिया। स्वर्गमें जानेपर भी ब्रह्मा आपके बाणसे भयभीत हो रहे हैं। उन्हें बाणने आज भी नहीं छोड़ा है; अर्थात् ब्रह्मा 'मृगशिरा' नक्षत्र बनकर भागे तो बाण 'आर्द्रा' नक्षत्र बनकर आज भी पीछा करता है' (ये दोनों आकाशमण्डलमें आगे-पीछे देखे जा सकते हैं)॥ २२॥

[यह पौराणिक कथा है कि एक बार ब्रह्मा अपनी दुहिता सन्ध्याको अत्यन्त रूप-लावण्यवती देखकर मोहित हो गये। उन्होंने उपगमन करना चाहा। सन्ध्या लज्जाके मारे मृगी बनकर भाग चली। ब्रह्माने मृगरूप बना लिया और पीछा किया। इस अनर्थको देखकर भगवान् भूतभावनने प्रजानाथको दण्डित करनेके लिये पिनाक चढ़ाकर बाण छोड़ दिया। उससे पीडित तथा लज्जित होकर ब्रह्मा मृगशिरा नक्षत्र हो गये। फिर रुद्रका बाण भी आर्द्रा नक्षत्र होकर उनके पीछे-भागमें लग गया। वह आज भी उनके पीछे लगा हुआ दीखता है।]

'हे त्रिपुरारि! हे यमनियमपरायण! हे वरद शङ्कर! अपने सौन्दर्यसे शिवपर विजय प्राप्त कर लूँगा'—इस सम्भावनासे हाथमें

यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्धघटना-
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः॥ २३॥
श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि॥ २४॥
मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः।

धनुष उठाये हुए कामदेवको सामने ही तुरंत आपके द्वारा तिनकेकी भाँति भस्म होता हुआ देखकर भी यदि देवी (पार्वतीजी) अर्धनारीश्वर (आधे शरीरमें पार्वतीको स्थान देने)-के कारण आपको स्त्रीभक्त जानती हैं तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योंकि स्त्रियाँ (स्वभावतः) अज्ञानी होती हैं'॥ २३॥

'हे कामरिपु! हे वरद शङ्करजी! आप श्मशानोंमें क्रीडा करते हैं, प्रेत-पिशाचगण आपके साथी हैं, चिताकी भस्म आपका अङ्गराग है, आपकी माला भी मनुष्यकी खोपड़ियोंकी है। इस प्रकार यह सब आपका अमङ्गल स्वभाव (स्वाँग) देखनेमें भले ही अशुभ हो, फिर भी स्मरण करनेवाले भक्तोंके लिये तो आप परम मङ्गलमय ही हैं'॥ २४॥

'हे प्रभो! (शम-दम आदि साधनोंसे सम्पन्न) यमीलोग शास्त्रोपदिष्ट विधिसे—वायु रोककर (प्राणायामकर) हृदयकमलमें मनको बहिर्मुखी (संकल्प-विकल्पात्मक) सभी वृत्तियोंसे शून्य करके अपने भीतर जिस किसी विलक्षण (आनन्दरूप परब्रह्म चिन्मात्र) तत्त्वका

यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत् किल भवान्॥ २५॥
त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि॥ २६॥
त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत् तीर्णविकृति।

दर्शन कर रोमाञ्चित हो जाते हैं और उनकी आँखें आनन्दके आँसुओंसे भर जाती हैं। उस समय मानो वे अमृतके समुद्रमें अवगाहन कर दिव्य आनन्दका अनुभव करते हैं; वह निर्गुण आनन्दस्वरूप ब्रह्म निश्चयरूपसे आप ही हैं'॥ २५॥

'हे भगवन्! परिपक्व बुद्धिवाले प्रौढ़ विद्वान्—आप सूर्य हैं, आप चन्द्र हैं, आप पवन हैं, आप अग्नि हैं, आप जल हैं, आप आकाश हैं, आप पृथ्वी हैं, आप आत्मा हैं—इस प्रकारकी सीमित अर्थयुक्त वाणी आपके विषयमें कहते रहे हैं; पर हम तो विश्वमें ऐसा कोई तत्त्व (वस्तु) नहीं देखते (जानते) जो स्वयं साक्षात् आप न हों'॥ २६॥

'हे शरण देनेवाले! ओम्—यह शब्द अपने व्यस्त (पृथक्-पृथक् अक्षरवाले) अकार, उकार, मकाररूपसे तीनों वेद (ऋक्, यजुः, साम), तीनों अवस्था (जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्ति), तीनों लोक (स्वर्ग-भूमि-पाताल), तीनों देवता (ब्रह्मा-विष्णु-महेश), तीनों शरीर (स्थूल-सूक्ष्म-कारण), तीनों रूप (विश्व-तैजस-प्राज्ञ) आदिके रूपमें आपका

तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः

समस्तं व्यस्तं त्वं शरणद गृणात्योमिति पदम्॥ २७॥

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहां-

स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।

अमुष्मिन् प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि

प्रियायास्मै धाम्ने प्रविहितनमस्योऽस्मि भवते॥ २८॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो

नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।

ही प्रतिपादन करता है तथा अपने अवयवोंके समष्टि (संयुक्त-समस्त)-रूप (ओम्)-से निर्विकार निष्कल तीन अवस्था एवं त्रिपुटियोंसे रहित आपके तुरीय स्वरूपकी सूक्ष्म ध्वनियोंसे ग्रहणकर प्रतिपादन करता है' (ॐ आपके स्वरूपका सर्वतः निर्वचन करता है)॥ २७॥

'हे महादेव! आपके जो आठ अभिधान (नाम)—भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम और ईशान हैं, उनमें प्रत्येकमें वेदमन्त्र भी पर्याप्त मात्रामें विचरण करते हैं और वेदानुगामी पुराण भी इन नामोंमें विचरते हैं; अर्थात् वेद-पुराण सभी उन आठों नामोंका अतिशय प्रतिपादन करते हैं। अतः परम प्रिय एवं प्रत्यक्ष समस्त जगत्‌के आश्रय आपको मैं साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ'॥ २८॥

'हे अति निकटवर्ती और एकान्त (निर्जन) वन-विहारके प्रेमी! आपको प्रणाम है; अति दूरवर्ती आपको प्रणाम है। हे कामारि! अति लघु (सूक्ष्मरूपधारी) आपको प्रणाम है। हे अति महान्! आपको प्रणाम है।
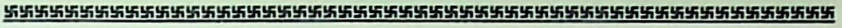
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः ॥ २९ ॥
बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३० ॥
कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः।

हे त्रिनेत्र! वृद्धतम आपको नमस्कार है; अत्यन्त युवक! आपको प्रणाम है। सर्वस्वरूप! आपको नमस्कार है; परोक्ष, प्रत्यक्ष पदसे परे अनिर्वचनीय सबके अधिष्ठानस्वरूप! आपको नमस्कार है'॥ २९॥

'विश्वकी सृष्टिके लिये रजोगुणकी अधिकता धारण करनेवाले ब्रह्मारूपधारी! आपको बारम्बार नमस्कार है। विश्वके संहारके लिये तमोगुणकी अधिकता धारण करनेवाले हर (रुद्र)-रूपधारी! आपको बारम्बार नमस्कार है। समस्त जीवोंके सुख (पालन)-के लिये सत्त्वगुणकी अधिकता धारण करनेवाले विष्णुरूपधारी (आप) मृडको बारम्बार नमस्कार है। स्वयं प्रकाश मोक्षके लिये त्रिगुणातीत, समस्त द्वैतसे रहित मङ्गलमय अद्वैत (आप) शिवको बारम्बार नमस्कार है'॥ ३०॥

'हे वरद शिव! (अविद्या आदि) कष्टोंके वशीभूत (अल्प शक्तियुक्त) कहाँ तो यह मेरा चित्त और कहाँ सम्पूर्ण गुणोंकी सीमाके बाहर पहुँची सदा (त्रिकाल) स्थायिनी आपकी ऋद्धि (विभूति)।

इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्
वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम्॥ ३१॥
असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति॥ ३२॥
असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य।
सकलगणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार॥ ३३॥

(दोनोंमें बहुत असमानता है।) इसी भयसे ग्रस्त आपके चरणोंकी भक्तिने मुझे उत्साहित कर आपके चरणोंमें मुझसे वाक्यरूपी पुष्पोपहार, वाक्यकुसुमाञ्जलि, वाक्यचयकी स्तुतिरूपी अञ्जलि समर्पित करायी है'॥ ३१॥

'हे ईश! यदि काले पर्वतके समान स्याही हो, समुद्रकी दावात हो, कल्पवृक्षकी शाखाओंकी कलम बने, पृथ्वी कागज बने और इन साधनोंसे यदि सरस्वती (स्वयं) सर्वदा (जीवनपर्यन्त) आपके गुणोंको लिखें तब भी वे आपके गुणोंका पार नहीं पा सकेंगी'॥ ३२॥

'इस प्रकार शिवके सभी गणोंमें श्रेष्ठ पुष्पदन्त नामक गन्धर्वने दैत्येन्द्रों, सुरेन्द्रों एवं मुनीन्द्रोंसे पूजित, समस्त गुणोंसे परिपूर्ण होते हुए भी निर्गुण जगदीश्वर चन्द्रशेखर भगवान् शिवजीके इस सुन्दर स्तोत्रको बड़े छन्दोंमें (स्तुति-हेतु) बनाया'॥ ३३॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथात्र
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च॥ ३४॥
महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्॥ ३५॥
दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।
महिम्नः स्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ ३६॥
कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शिशुशशिधरमौलेर्देवदेवस्य दासः।

'जो व्यक्ति पवित्र अन्तःकरण (हृदय)-से परम भक्तिके साथ भगवान् शङ्करके इस प्रशंसनीय स्तोत्रका नित्य पाठ करता है, वह इस लोकमें पर्याप्त धन एवं आयुको पाता है, पुत्रवान् और यशस्वी होता है तथा (मृत्युके बाद) शिवलोकको प्राप्तकर शिवके समान (आनन्दमग्न) रहता है'॥ ३४॥

'महेशसे बढ़कर (उत्तम) कोई देवता नहीं है, (इस) शिवमहिम्नः-स्तोत्रसे बढ़कर कोई स्तोत्र नहीं है। अघोरमन्त्रसे बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है, गुरुसे बढ़कर कोई तत्त्व नहीं है'॥ ३५॥

'मन्त्र आदिकी दीक्षा, दान, तप, तीर्थाटन, ज्ञान तथा यज्ञादि—ये सब शिवमहिम्नःस्तोत्रकी सोलहवीं कला (अंश)-को भी नहीं पा सकते'॥ ३६॥

'बालचन्द्रको सिरपर धारण करनेवाले देवाधिदेव महादेवका पुष्पदन्तनामक एक दास, जो सभी गन्धर्वोंका राजा था, इन शिवजीके

स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्
स्तवनमिदमकार्षीद् दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥ ३७ ॥
सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः ।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥ ३८ ॥
आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गन्धर्वभाषितम् ।
अनौपम्यं मनोहारि शिवमीश्वरवर्णनम् ॥ ३९ ॥
इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः ।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥ ४० ॥

कोपसे अपने ऐश्वर्यसे च्युत हो गया था। (उसके बाद) उसने इस परम दिव्य शिवमहिम्नःस्तोत्रकी रचना की' (जिससे पुनः उसने उनकी कृपा प्राप्त की) ॥ ३७ ॥

'यदि मनुष्य हाथ जोड़कर एकाग्रचित्तसे देवताओं, मुनियोंके पूज्य, स्वर्ग एवं मोक्षको देनेवाले, पुष्पदन्तरचित इस अमोघ (अवश्य फल देनेवाले) स्तोत्रका पाठ करता है तो वह किन्नरोंसे स्तुति (प्रशंसा) प्राप्त करता हुआ भगवान् शिवके समीप (शिवलोकमें) पहुँच जाता है' ॥ ३८ ॥

'पुष्पदन्तरचित यह सम्पूर्ण स्तोत्र (आदिसे अन्ततक) पवित्र है, अनुपम है, मनोहर है, शिव (मङ्गलमय) है। इसमें ईश्वर (शिव)-का वर्णन है' ॥ ३९ ॥

'उस पुष्पदन्तने यह शिवमयी पूजा श्रीमान् शङ्करके चरणोंमें समर्पित की है। उसी प्रकार मैंने भी (पाठरूपी पूजा) समर्पित की है। अतः इससे सदाशिव मुझपर (भी) प्रसन्न हों' ॥ ४० ॥
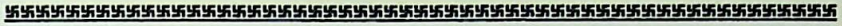
तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः॥ ४१॥
एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते॥ ४२॥
श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः॥ ४३॥

॥ इति शिवमहिम्नःस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

'हे महेश्वर! मैं आपका तत्त्व (वास्तविक रूप) नहीं जानता, आप कैसे हैं—इसका ज्ञान मुझे नहीं है। आप चाहे जैसे हों, वैसे ही आपको बार-बार प्रणाम है'॥ ४१॥

'जो मनुष्य शिवमहिम्नःस्तोत्रका पाठ एक समय, दोनों समय या तीनों समय करेगा, वह समस्त पापोंसे छुटकारा पाकर शिवलोकमें पूजित होगा'॥ ४२॥

'पुष्पदन्तके मुखकमलसे निकले हुए पापहारी शिवजीके प्रिय इस स्तोत्रको कण्ठस्थ (याद)-कर एकाग्रचित्त (मनोयोग)-से पाठ करनेसे समस्त प्राणियोंके स्वामी महेश बहुत प्रसन्न होते हैं'॥ ४३॥

॥ इस प्रकार शिवमहिम्नःस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

शिवमानसपूजा

रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च दिव्याम्बरं
नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदाङ्कितं चन्दनम्।
जातीचम्पकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा
दीपं देव दयानिधे पशुपते हृत्कल्पितं गृह्यताम्॥ १॥
सौवर्णे नवरत्नखण्डरचिते पात्रे घृतं पायसं
भक्ष्यं पञ्चविधं पयोदधियुतं रम्भाफलं पानकम्।
शाकानामयुतं जलं रुचिकरं कर्पूरखण्डोज्ज्वलं
ताम्बूलं मनसा मया विरचितं भक्त्या प्रभो स्वीकुरु॥ २॥
छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं निर्मलं
वीणाभेरिमृदङ्गकाहलकला गीतं च नृत्यं तथा।

हे दयानिधे! हे पशुपते! हे देव! यह रत्ननिर्मित सिंहासन, शीतल जलसे स्नान, नाना रत्नावलिविभूषित दिव्य वस्त्र, कस्तूरिकागन्धसमन्वित चन्दन, जुही, चम्पा और बिल्वपत्रसे रचित पुष्पाञ्जलि तथा धूप और दीप यह सब मानसिक [पूजोपहार] ग्रहण कीजिये॥ १॥

मैंने नवीन रत्नखण्डोंसे खचित सुवर्णपात्रमें घृतयुक्त खीर, दूध और दधिसहित पाँच प्रकारका व्यञ्जन, कदलीफल, शर्बत, अनेकों शाक, कपूरसे सुवासित और स्वच्छ किया हुआ मीठा जल तथा ताम्बूल—ये सब मनके द्वारा ही बनाकर प्रस्तुत किये हैं; प्रभो! कृपया इन्हें स्वीकार कीजिये॥ २॥

छत्र, दो चँवर, पंखा, निर्मल दर्पण, वीणा, भेरी, मृदङ्ग,
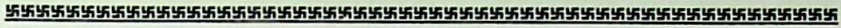
साष्टाङ्गं प्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत् समस्तं मया
सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥ ३ ॥
आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः ।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥ ४ ॥
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम् ।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥ ५ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचिता शिवमानसपूजा सम्पूर्णा ॥

दुन्दुभीके वाद्य, गान और नृत्य, साष्टाङ्ग प्रणाम, नानाविधि स्तुति—ये सब मैं संकल्पसे ही आपको समर्पण करता हूँ; प्रभो! मेरी यह पूजा ग्रहण कीजिये ॥ ३ ॥

हे शम्भो! मेरी आत्मा तुम हो, बुद्धि पार्वतीजी हैं, प्राण आपके गण हैं, शरीर आपका मन्दिर है, सम्पूर्ण विषयभोगकी रचना आपकी पूजा है, निद्रा समाधि है, मेरा चलना-फिरना आपकी परिक्रमा है तथा सम्पूर्ण शब्द आपके स्तोत्र हैं; इस प्रकार मैं जो-जो भी कार्य करता हूँ, वह सब आपकी आराधना ही है ॥ ४ ॥

हाथोंसे, पैरोंसे, वाणीसे, शरीरसे, कर्मसे, कर्णोंसे, नेत्रोंसे अथवा मनसे भी जो अपराध किये हों, वे विहित हों अथवा अविहित, उन सबको हे करुणासागर महादेव शम्भो! आप क्षमा कीजिये। आपकी जय हो, जय हो ॥ ५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित शिवमानसपूजा सम्पूर्ण हुई ॥

श्रीशिवापराधक्षमापनस्तोत्रम्

आदौ कर्मप्रसङ्गात् कलयति कलुषं मातृकुक्षौ स्थितं मां
विण्मूत्रामेध्यमध्ये क्वथयति नितरां जाठरो जातवेदाः।
यद्यद्वै तत्र दुःखं व्यथयति नितरां शक्यते केन वक्तुं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ १॥

बाल्ये दुःखातिरेको मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासा
नो शक्तश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता जन्तवो मां तुदन्ति।
नानारोगादिदुःखाद्रुदनपरवशः शङ्करं न स्मरामि
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ २॥

पहले कर्मप्रसंगसे किया हुआ पाप मुझे माताकी कुक्षिमें ला बिठाता है, फिर उस अपवित्र विष्ठा-मूत्रके बीच जठराग्नि खूब संतप्त करता है। वहाँ जो-जो दुःख निरन्तर व्यथित करते रहते हैं, उन्हें कौन कह सकता है? हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!॥ १॥

बाल्यावस्थामें दुःखकी अधिकता रहती थी, शरीर मल-मूत्रसे लिथड़ा रहता था और निरन्तर स्तनपानकी लालसा रहती थी; इन्द्रियोंमें कोई कार्य करनेकी सामर्थ्य न थी; शैवी मायासे उत्पन्न हुए नाना जन्तु मुझे काटते थे; नाना रोगादि दुःखोंके कारण मैं रोता ही रहता था, (उस समय भी) मुझसे शङ्करका स्मरण नहीं बना, इसलिये हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!॥ २॥
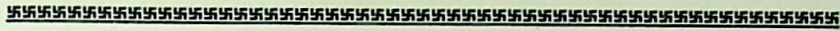
प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैः पञ्चभिर्मर्मसन्धौ
दष्टो नष्टो विवेकः सुतधनयुवतिस्वादसौख्ये निषण्णः।
शैवीचिन्ताविहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिरूढं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ ३॥
वार्द्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतिमतिश्चाधिदैवादितापैः
पापै रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपुः प्रौढिहीनं च दीनम्।
मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटेर्ध्यानशून्यं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ ४॥
नो शक्यं स्मार्तकर्म प्रतिपदगहनप्रत्यवायाकुलाख्यं
श्रौते वार्ता कथं मे द्विजकुलविहिते ब्रह्ममार्गे सुसारे।

जब मैं युवा-अवस्थामें आकर प्रौढ हुआ तो पाँच विषयरूपी सर्पोंने मेरे मर्मस्थानोंमें डँसा, जिससे मेरा विवेक नष्ट हो गया और मैं धन, स्त्री और संतानके सुख भोगनेमें लग गया। उस समय भी आपके चिन्तनको भूलकर मेरा हृदय बड़े घमण्ड और अभिमानसे भर गया। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!॥ ३॥

वृद्धावस्थामें भी, जब इन्द्रियोंकी गति शिथिल हो गयी है, बुद्धि मन्द पड़ गयी है और आधिदैविकादि तापों, पापों, रोगों और वियोगोंसे शरीर जर्जरित हो गया है, मेरा मन मिथ्या मोह और अभिलाषाओंसे दुर्बल और दीन होकर (आप) श्रीमहादेवजीके चिन्तनसे शून्य ही भ्रम रहा है। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो!॥ ४॥

पद-पदपर अति गहन प्रायश्चित्तोंसे व्याप्त होनेके कारण मुझसे तो स्मार्तकर्म भी नहीं हो सकते, फिर जो द्विजकुलके लिये साररूपमें विहित हैं, उन ब्रह्मप्राप्तिके मार्गस्वरूप पूर्णतः प्रमाणित श्रौतकर्मोंकी तो बात ही

नास्था धर्मे विचारः श्रवणमननयोः किं निदिध्यासितव्यं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥ ५ ॥
स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ नाहृतं गाङ्गतोयं
पूजार्थं वा कदाचिद्बहुतरगहनात् खण्डबिल्वीदलानि ।
नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धपुष्पे त्वदर्थं
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥ ६ ॥
दुग्धैर्मध्वाज्ययुक्तैर्दधिसितसहितैः स्नापितं नैव लिङ्गं
नो लिप्तं चन्दनाद्यैः कनकविरचितैः पूजितं न प्रसूनैः ।
धूपैः कर्पूरदीपैर्विविधरसयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥ ७ ॥

क्या है ? धर्ममें आस्था नहीं है और श्रवण-मननके विषयमें विचार ही नहीं होता, निदिध्यासन (ध्यान) भी कैसे किया जाय ? अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो! ॥ ५ ॥

प्रातःकाल स्नान करके आपका अभिषेक करनेके लिये मैं गङ्गाजल लेकर प्रस्तुत नहीं हुआ, न कभी आपकी पूजाके लिये वनसे बिल्वपत्र ही लाया और न आपके लिये तालाबमें खिले हुए कमलोंकी माला तथा गन्ध-पुष्प ही लाकर अर्पण किये। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरा अपराध क्षमा करो! क्षमा करो! ॥ ६ ॥

मधु, घृत, दधि और शर्करायुक्त दूध (पञ्चामृत)-से मैंने आपके लिङ्गको स्नान नहीं कराया; चन्दन आदिसे अनुलेपन नहीं किया; धतूरेके खिले हुए फूलों, धूप, दीप, कपूर तथा नाना रसोंसे युक्त नैवेद्योंद्वारा पूजन भी नहीं किया। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधोंको क्षमा करो! क्षमा करो! ॥ ७ ॥
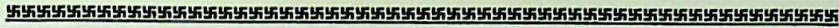
ध्यात्वा चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव दत्तं द्विजेभ्यो
हव्यं ते लक्षसंख्यैर्हुतवहवदने नार्पितं बीजमन्त्रैः।
नो तप्तं गाङ्गतीरे व्रतजपनियमै रुद्रजाप्यैर्न वेदैः
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ ८ ॥
स्थित्वा स्थाने सरोजे प्रणवमयमरुत्कुण्डले सूक्ष्ममार्गे
शान्ते स्वान्ते प्रलीने प्रकटितविभवे ज्योतिरूपे पराख्ये।
लिङ्गज्ञे ब्रह्मवाक्ये सकलतनुगतं शङ्करं न स्मरामि
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो॥ ९ ॥
नग्नो निःसङ्गशुद्धस्त्रिगुणविरहितो ध्वस्तमोहान्धकारो
नासाग्रे न्यस्तदृष्टिर्विदितभवगुणो नैव दृष्टः कदाचित्।

मैंने चित्तमें शिव नामक आपका स्मरण करके ब्राह्मणोंको प्रचुर धन नहीं दिया, न आपके एक लक्ष बीजमन्त्रोंद्वारा अग्निमें आहुतियाँ दीं और न व्रत एवं जपके नियमसे तथा रुद्रजाप और वेदविधिसे गङ्गातटपर कोई साधना ही की। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधोंको क्षमा करो! क्षमा करो!॥ ८॥

जिस सूक्ष्ममार्गप्राप्य सहस्रदल कमलमें पहुँचकर प्राणसमूह प्रणवनादमें लीन हो जाते हैं और जहाँ जाकर वेदके वाक्यार्थ तथा तात्पर्यभूत पूर्णतया आविर्भूत ज्योतिरूप शान्त परमतत्त्वमें लीन हो जाता है, उस कमलमें स्थित होकर मैं सर्वान्तर्यामी कल्याणकारी आपका स्मरण नहीं करता हूँ। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधोंको क्षमा करो! क्षमा करो!॥ ९॥

नग्न, निःसङ्ग, शुद्ध और त्रिगुणातीत होकर, मोहान्धकारका ध्वंस कर तथा नासिकाग्रमें दृष्टि स्थिरकर मैंने (आप) शङ्करके गुणोंको

उन्मन्यावस्थया त्वां विगतकलिमलं शंकरं न स्मरामि
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भो श्रीमहादेव शम्भो ॥ १० ॥
चन्द्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे गङ्गाधरे शंकरे
सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे।
दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे
मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमखिलामन्यैस्तु किं कर्मभिः ॥ ११ ॥
किं वानेन धनेन वाजिकरिभिः प्राप्तेन राज्येन किं
किं वा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किम्।
ज्ञात्वैतत्क्षणभङ्गुरं सपदि रे त्याज्यं मनो दूरतः
स्वात्मार्थं गुरुवाक्यतो भज भज श्रीपार्वतीवल्लभम् ॥ १२ ॥

जानकर कभी आपका दर्शन नहीं किया और न उन्मनी-अवस्थासे कलिमलरहित आप कल्याणस्वरूपका स्मरण ही करता हूँ। अतः हे शिव! हे शिव! हे शिव! हे महादेव! हे शम्भो! अब मेरे अपराधोंको क्षमा करो! क्षमा करो! ॥ १० ॥

चन्द्रकलासे जिनका ललाट-प्रदेश उद्भासित हो रहा है, जो कन्दर्पदर्पहारी हैं, गङ्गाधर हैं, कल्याणस्वरूप हैं, सर्पोंसे जिनके कण्ठ और कर्ण भूषित हैं, नेत्रोंसे अग्नि प्रकट हो रहा है, हस्तिचर्मकी जिनकी कन्था है तथा जो त्रिलोकीके सार हैं, उन शिवमें मोक्षके लिये अपनी सम्पूर्ण चित्तवृत्तियोंको लगा दे; और कर्मोंसे क्या प्रयोजन है ? ॥ ११ ॥

इस धन, घोड़े, हाथी और राज्यादिकी प्राप्तिसे क्या? पुत्र, स्त्री, मित्र, पशु, देह और घरसे क्या ? इनको क्षणभङ्गुर जानकर रे मन! दूरहीसे त्याग दे और अविलम्ब आत्मानुभवके लिये गुरुवचनानुसार पार्वतीवल्लभ श्रीशङ्करका भजन कर ॥ १२ ॥

आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं
प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः।
लक्ष्मीस्तोयतरङ्गभङ्गचपला विद्युच्चलं जीवितं
तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना॥ १३॥

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो॥ १४॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीशिवापराधक्षमापनस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

देखते-देखते आयु नित्य नष्ट हो रही है; यौवन प्रतिदिन क्षीण हो रहा है; बीते हुए दिन फिर लौटकर नहीं आते; काल सम्पूर्ण जगत्को खा रहा है। लक्ष्मी जलकी तरङ्गमालाके समान चपल है; जीवन बिजलीके समान चञ्चल है; अतः हे शरणागतवत्सल शङ्कर! मुझ शरणागतकी अब तुम रक्षा करो! रक्षा करो!॥ १३॥

हाथोंसे, पैरोंसे, वाणीसे, शरीरसे, कर्मसे, कर्णोंसे, नेत्रोंसे अथवा मनसे भी जो अपराध किये हों, वे विहित हों अथवा अविहित, उन सबको हे करुणासागर महादेव शम्भो! क्षमा कीजिये। आपकी जय हो, जय हो॥ १४॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित श्रीशिवापराधक्षमापनस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीशिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम्

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय
भस्माङ्गरागाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय
तस्मै 'न'काराय नमः शिवाय॥ १॥

मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय
नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय ।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै 'म'काराय नमः शिवाय॥ २॥

शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द-
सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय
तस्मै 'शि'काराय नमः शिवाय॥ ३॥

जिनके कण्ठमें साँपोंका हार है, जिनके तीन नेत्र हैं, भस्म ही जिनका अङ्गराग (अनुलेपन) है; दिशाएँ ही जिनका वस्त्र हैं [अर्थात् जो नग्न हैं], उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है॥ १॥

गङ्गाजल और चन्दनसे जिनकी अर्चा हुई है, मन्दार-पुष्प तथा अन्यान्य कुसुमोंसे जिनकी सुन्दर पूजा हुई है, उन नन्दीके अधिपति प्रमथगणोंके स्वामी महेश्वर 'म'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है॥ २॥

जो कल्याणस्वरूप हैं, पार्वतीजीके मुखकमलको विकसित (प्रसन्न) करनेके लिये जो सूर्यस्वरूप हैं, जो दक्षके यज्ञका नाश करनेवाले हैं, जिनकी ध्वजामें बैलका चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकण्ठ 'शि'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है॥ ३॥

वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्य-
मुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय ।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय
तस्मै 'व'काराय नमः शिवाय॥ ४॥

यक्षस्वरूपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै 'य'काराय नमः शिवाय॥ ५॥

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ ६॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

वसिष्ठ, अगस्त्य और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियोंने तथा इन्द्र आदि देवताओंने जिनके मस्तककी पूजा की है, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं, उन 'व'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है॥ ४॥

जिन्होंने यक्षरूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथमें पिनाक है, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगम्बर देव 'य'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है॥ ५॥

जो शिवके समीप इस पवित्र पञ्चाक्षरस्तोत्रका पाठ करता है, वह शिवलोकको प्राप्त करता है और वहाँ शिवजीके साथ आनन्दित होता है॥ ६॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित श्रीशिवपञ्चाक्षरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

वेदसारशिवस्तवः

पशूनां पतिं पापनाशं परेशं
गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम्।
जटाजूटमध्ये स्फुरद्गाङ्गवारिं
महादेवमेकं स्मरामि स्मरारिम्॥ १॥
महेशं सुरेशं सुरारार्तिनाशं
विभुं विश्वनाथं विभूत्यङ्गभूषम्।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्नित्रिनेत्रं
सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चवक्त्रम्॥ २॥
गिरीशं गणेशं गले नीलवर्णं
गवेन्द्राधिरूढं गणातीतरूपम्।
भवं भास्वरं भस्मना भूषिताङ्गं
भवानीकलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम्॥ ३॥

जो सम्पूर्ण प्राणियोंके रक्षक हैं, पापका ध्वंस करनेवाले हैं, परमेश्वर हैं, गजराजका चर्म पहने हुए हैं तथा श्रेष्ठ हैं और जिनके जटाजूटमें श्रीगङ्गाजी खेल रही हैं, उन एकमात्र कामारि श्रीमहादेवजीका मैं स्मरण करता हूँ॥ १॥

चन्द्र, सूर्य और अग्नि—तीनों जिनके नेत्र हैं, उन विरूपनयन महेश्वर, देवेश्वर, देवदु:खदलन, विभु, विश्वनाथ, विभूतिभूषण, नित्यानन्दस्वरूप, पञ्चमुख भगवान् महादेवकी मैं स्तुति करता हूँ॥ २॥

जो कैलासनाथ हैं, गणनाथ हैं, नीलकण्ठ हैं, बैलपर चढ़े हुए हैं, अगणित रूपवाले हैं, संसारके आदिकारण हैं, प्रकाशस्वरूप हैं, शरीरमें भस्म लगाये हुए हैं और श्रीपार्वतीजी जिनकी अर्द्धाङ्गिनी हैं, उन पञ्चमुख महादेवजीको मैं भजता हूँ॥ ३॥

शिवाकान्त शम्भो शशाङ्कार्धमौले
महेशान शूलिन् जटाजूटधारिन्।
त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप
प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप॥ ४॥

परात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं
निरीहं निराकारमोङ्कारवेद्यम्।
यतो जायते पाल्यते येन विश्वं
तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम्॥ ५॥

न भूमिर्न चापो न वह्निर्न वायु-
र्न चाकाश आस्ते न तन्द्रा न निद्रा।
न ग्रीष्मो न शीतो न देशो न वेषो
न यस्यास्ति मूर्तिस्त्रिमूर्तिं तमीडे॥ ६॥

हे पार्वतीवल्लभ महादेव! हे चन्द्रशेखर! हे महेश्वर! हे त्रिशूलिन्! हे जटाजूटधारिन्! हे विश्वरूप! एकमात्र आप ही जगत्में व्यापक हैं। हे पूर्णरूप प्रभो! प्रसन्न होइये, प्रसन्न होइये॥ ४॥

जो परमात्मा हैं, एक हैं, जगत्के आदिकारण हैं, इच्छारहित हैं, निराकार हैं और प्रणवद्वारा जाननेयोग्य हैं तथा जिनसे सम्पूर्ण विश्वकी उत्पत्ति होती है और पालन होता है और फिर जिनमें उसका लय हो जाता है, उन प्रभुको मैं भजता हूँ॥ ५॥

जो न पृथ्वी हैं, न जल हैं, न अग्नि हैं, न वायु हैं और न आकाश हैं; न तन्द्रा हैं, न निद्रा हैं, न ग्रीष्म हैं और न शीत हैं तथा जिनका न कोई देश है, न वेष है, उन मूर्तिहीन त्रिमूर्तिकी मैं स्तुति करता हूँ॥ ६॥

अजं शाश्वतं कारणं कारणानां
शिवं केवलं भासकं भासकानाम्।
तुरीयं तमःपारमाद्यन्तहीनं
प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम्॥ ७॥
नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते
नमस्ते नमस्ते चिदानन्दमूर्ते।
नमस्ते नमस्ते तपोयोगगम्य
नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञानगम्य॥ ८॥
प्रभो शूलपाणे विभो विश्वनाथ
महादेव शम्भो महेश त्रिनेत्र।
शिवाकान्त शान्त स्मरारे पुरारे
त्वदन्यो वरेण्यो न मान्यो न गण्यः॥ ९॥

जो अजन्मा हैं, नित्य हैं, कारणोंके भी कारण हैं, कल्याणस्वरूप हैं, एक हैं, प्रकाशकोंके भी प्रकाशक हैं, अवस्थात्रयसे विलक्षण हैं, अज्ञानसे परे हैं, अनादि और अनन्त हैं, उन परमपावन अद्वैतस्वरूपको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ७॥

हे विश्वमूर्ते! हे विभो! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे चिदानन्दमूर्ते! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे तप तथा योगसे प्राप्तव्य प्रभो! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे वेदवेद्य भगवन्! आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ८॥

हे प्रभो! हे त्रिशूलपाणे! हे विभो! हे विश्वनाथ! हे महादेव! हे शम्भो! हे महेश्वर! हे त्रिनेत्र! हे पार्वतीप्राणवल्लभ! हे शान्त! हे कामारे! हे त्रिपुरारे! तुम्हारे अतिरिक्त न कोई श्रेष्ठ है, न माननीय है और न गणनीय है॥ ९॥

शम्भो महेश करुणामय शूलपाणे
गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन्।
काशीपते करुणया जगदेतदेक-
स्त्वं हंसि पासि विदधासि महेश्वरोऽसि॥ १०॥
त्वत्तो जगद्भवति देव भव स्मरारे
त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ।
त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश
लिङ्गात्मकं हर चराचरविश्वरूपिन्॥ ११॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतो वेदसारशिवस्तवः सम्पूर्णः॥

~~ ❁ ~~

हे शम्भो! हे महेश्वर! हे करुणामय! हे त्रिशूलिन्! हे गौरीपते! हे पशुपते! हे पशुबन्धमोचन! हे काशीश्वर! एक तुम्हीं करुणावश इस जगत्की उत्पत्ति, पालन और संहार करते हो; प्रभो! तुम ही इसके एकमात्र स्वामी हो॥ १०॥

हे देव! हे शङ्कर! हे कन्दर्पदलन! हे शिव! हे विश्वनाथ! हे ईश्वर! हे हर! हे चराचरजगद्रूप प्रभो! यह लिङ्गस्वरूप समस्त जगत् तुम्हींसे उत्पन्न होता है, तुम्हींमें स्थित रहता है और तुम्हींमें लय हो जाता है॥ ११॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यकृत वेदसारशिवस्तव सम्पूर्ण हुआ॥

~~ ❁ ~~

द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणम्

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारममलेश्वरम्॥ १॥
परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशङ्करम्।
सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने॥ २॥
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे।

---

(१) सौराष्ट्र प्रदेश (काठियावाड़)-में श्रीसोमनाथ[1], (२) श्रीशैल[2]पर श्रीमल्लिकार्जुन, (३) उज्जयिनी (उज्जैन)-में श्रीमहाकाल[3], (४) ॐकारेश्वर[4] अथवा अमलेश्वर॥ १॥ (५) परलीमें वैद्यनाथ[5] (६) डाकिनी नामक स्थानमें श्रीभीमशङ्कर[6], (७) सेतुबन्धमें श्रीरामेश्वर[7], (८) दारुकावनमें श्रीनागेश्वर[8]॥ २॥ (९) वाराणसी (काशी)-

---

१. श्रीसोमनाथ काठियावाड़प्रदेशके अन्तर्गत प्रभासक्षेत्रमें विराजमान है। २. यह पर्वत मद्रास प्रान्तके कृष्णा जिलेमें कृष्णा नदीके तटपर है, इसे दक्षिणका कैलास कहते हैं। ३. श्रीमहाकालेश्वर मालवाप्रदेशमें क्षिप्रा नदीके तटपर उज्जैन नगरमें विराजमान है, उज्जैनको अवन्तिकापुरी भी कहते हैं। ४. ॐकारेश्वरका स्थान मालवा प्रान्तमें नर्मदा नदीके तटपर है। उज्जैनसे खण्डवा जानेवाली रेलवे लाइनपर मोरटक्का नामक स्टेशन है, वहाँसे यह स्थान ६ मील दूर है। यहाँ ॐकारेश्वर और अमलेश्वरके दो पृथक्-पृथक् लिङ्ग हैं, परंतु ये एक ही लिङ्गके दो स्वरूप हैं। ५. आन्ध्र प्रदेशके हैदराबाद नगरसे पहले परभनी नामक जंकशन है, वहाँसे परलीतक एक ब्रांच लाइन गयी है, इस परली स्टेशनसे थोड़ी दूरपर परली ग्रामके निकट श्रीवैद्यनाथ नामक ज्योतिर्लिङ्ग है। शिवपुराणमें **'वैद्यनाथं चिताभूमौ'** ऐसा पाठ है, इसके अनुसार संथाल परगनेमें ई० आई० रेलवेके जैसीडीह स्टेशनके पासवाला वैद्यनाथ-शिवलिङ्ग ही वास्तविक वैद्यनाथज्योतिर्लिङ्ग सिद्ध होता है; क्योंकि यही चिताभूमि है। ६. श्रीभीमशङ्करका स्थान बम्बई (मुंबई)-से पूर्व और पूनासे उत्तर भीमा नदीके किनारे सह्यपर्वतपर है। यह स्थान लारीके रास्तेसे नासिकसे लगभग १२० मील दूर है। सह्यपर्वतके एक शिखरका नाम डाकिनी है। इससे अनुमान होता है कि कभी यहाँ डाकिनी और भूतोंका निवास था। शिवपुराणकी एक कथाके आधारपर भीमशङ्कर ज्योतिर्लिङ्ग आसामके कामरूप जिलेमें ए० बी० रेलवेपर गोहाटीके पास ब्रह्मपुर पहाड़ीपर स्थित बतलाया जाता है।

हिमालये तु केदारं घुश्मेशं च शिवालये॥ ३॥
एतानि ज्योतिर्लिङ्गानि सायं प्रातः पठेन्नरः।
सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति॥ ४॥

॥ इति द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणं सम्पूर्णम्॥

में श्रीविश्वनाथ[९], (१०) गौतमी (गोदावरी)-के तटपर श्रीत्र्यम्बकेश्वर[१०], (११) हिमालयपर केदारखण्डमें श्रीकेदारनाथ[११] और (१२) शिवालयमें श्रीघुश्मेश्वरको[१२] स्मरण करना चाहिये॥ ३॥

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल और संध्याकालमें इन बारह ज्योतिर्लिङ्गोंके नामोंका स्मरण करता है, उसके सात जन्मोंका किया हुआ पाप इन लिङ्गोंके स्मरणमात्रसे नष्ट हो जाता है॥ ४॥

॥ इस प्रकार द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरण सम्पूर्ण हुआ॥

कुछ लोग कहते हैं कि नैनीताल जिलेके उज्जनक नामक स्थानमें एक विशाल शिवमन्दिर है, वही भीमशङ्करका स्थान है। ७. श्रीरामेश्वर तीर्थ प्रसिद्ध है, यह तमिलनाडु (मद्रास) प्रान्तके रामनद जिलेमें है। ८. यह स्थान बड़ौदा राज्यान्तर्गत गोमतीद्वारकासे ईशानकोणमें १२-१३ मीलकी दूरीपर है। कोई-कोई निजाम हैदराबाद राज्यके अन्तर्गत औढ़ाग्राममें स्थित शिवलिङ्गको ही 'नागेश्वर' ज्योतिर्लिङ्ग मानते हैं। कुछ लोगोंके मतसे अल्मोड़ासे १७ मील उत्तर-पूर्वमें यागेश (जागेश्वर) शिवलिङ्ग ही नागेश ज्योतिर्लिङ्ग है। ९. काशीके श्रीविश्वनाथजी प्रसिद्ध ही हैं। १०. यह ज्योतिर्लिङ्ग महाराष्ट्र प्रान्तके नासिक जिलेमें नासिक-पञ्चवटीसे (जहाँ शूर्पणखाकी नाक कटी थी) १८ मीलकी दूरीपर ब्रह्मगिरिके निकट गोदावरीके किनारे है। ११. श्रीकेदारनाथ हिमालयके केदार नामक शृङ्गपर स्थित हैं। शिखरके पूर्वकी ओर अलकनन्दाके तटपर श्रीबदरीनाथ अवस्थित हैं और पश्चिममें मन्दाकिनीके किनारे श्रीकेदारनाथ विराजमान हैं। यह स्थान हरद्वारसे १५० मील और ऋषिकेशसे १३२ मील दूर है। १२. श्रीघुश्मेश्वरको घुसृणेश्वर या घृष्णेश्वर भी कहते हैं। इनका स्थान दौलताबाद स्टेशनसे बारह मील दूर बेरूल गाँवके पास है।

द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रम्

सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये
ज्योतिर्मयं चन्द्रकलावतंसम्।
भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं
तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये॥ १॥
श्रीशैलशृङ्गे विबुधातिसङ्गे
तुलाद्रितुङ्गेऽपि मुदा वसन्तम्।
तमर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं
नमामि संसारसमुद्रसेतुम्॥ २॥
अवन्तिकायां विहितावतारं
मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम्।
अकालमृत्योः परिरक्षणार्थं
वन्दे महाकालमहासुरेशम्॥ ३॥

जो अपनी भक्ति प्रदान करनेके लिये अत्यन्त रमणीय तथा निर्मल सौराष्ट्र प्रदेश (काठियावाड़)-में दयापूर्वक अवतीर्ण हुए हैं, चन्द्रमा जिनके मस्तकका आभूषण है, उन ज्योतिर्लिङ्गस्वरूप भगवान् श्रीसोमनाथकी शरणमें मैं जाता हूँ॥ १॥

जो ऊँचाईके आदर्शभूत पर्वतोंसे भी बढ़कर ऊँचे श्रीशैलके शिखरपर, जहाँ देवताओंका अत्यन्त समागम होता रहता है, प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं तथा जो संसार-सागरसे पार करानेके लिये पुलके समान हैं, उन एकमात्र प्रभु मल्लिकार्जुनको मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

संतजनोंको मोक्ष देनेके लिये जिन्होंने अवन्तिपुरी (उज्जैन)-में अवतार धारण किया है, उन महाकाल नामसे विख्यात महादेवजीको मैं अकालमृत्युसे बचनेके लिये नमस्कार करता हूँ॥ ३॥

कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे
समागमे सज्जनतारणाय।
सदैव मान्धातृपुरे वसन्त-
मोङ्कारमीशं शिवमेकमीडे॥ ४॥

पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने
सदा वसन्तं गिरिजासमेतम्।
सुरासुराराधितपादपद्मं
श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि॥ ५॥

याम्ये सदङ्गे नगरेऽतिरम्ये
विभूषिताङ्गं विविधैश्च भोगैः।
सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं
श्रीनागनाथं शरणं प्रपद्ये॥ ६॥

महाद्रिपार्श्वे च तटे रमन्तं
सम्पूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः।

जो सत्पुरुषोंको संसार-सागरसे पार उतारनेके लिये कावेरी और नर्मदाके पवित्र संगमके निकट मान्धाताके पुरमें सदा निवास करते हैं, उन अद्वितीय कल्याणमय भगवान् ॐकारेश्वरका मैं स्तवन करता हूँ॥ ४॥

जो पूर्वोत्तर दिशामें चिताभूमि (वैद्यनाथ-धाम)-के भीतर सदा ही गिरिजाके साथ वास करते हैं, देवता और असुर जिनके चरण-कमलोंकी आराधना करते हैं, उन श्रीवैद्यनाथको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

जो दक्षिणके अत्यन्त रमणीय सदङ्ग नगरमें विविध भोगोंसे सम्पन्न होकर सुन्दर आभूषणोंसे भूषित हो रहे हैं, जो एकमात्र सद्भक्ति और मुक्तिको देनेवाले हैं, उन प्रभु श्रीनागनाथकी मैं शरणमें जाता हूँ॥ ६॥

जो महागिरि हिमालयके पास केदारशृङ्गके तटपर सदा निवास करते

सुरासुरैर्यक्षमहोरगाद्यैः
केदारमीशं शिवमेकमीडे॥ ७॥
सह्याद्रिशीर्षे विमले वसन्तं
गोदावरीतीरपवित्रदेशे ।
यद्दर्शनात् पातकमाशु नाशं
प्रयाति तं त्र्यम्बकमीशमीडे॥ ८॥
सुताम्रपर्णीजलराशियोगे
निबध्य सेतुं विशिखैरसंख्यैः।
श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं
रामेश्वराख्यं नियतं नमामि॥ ९॥
यं डाकिनीशाकिनिकासमाजे
निषेव्यमाणं पिशिताशनैश्च।
सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं
तं शङ्करं भक्तहितं नमामि॥ १०॥

हुए मुनीश्वरोंद्वारा पूजित होते हैं तथा देवता, असुर, यक्ष और महान् सर्प आदि भी जिनकी पूजा करते हैं, उन एक कल्याणकारक भगवान् केदारनाथका मैं स्तवन करता हूँ॥ ७॥

जो गोदावरीतटके पवित्र देशमें सह्यपर्वतके विमल शिखरपर वास करते हैं, जिनके दर्शनसे तुरंत ही पातक नष्ट हो जाता है, उन श्रीत्र्यम्बकेश्वरका मैं स्तवन करता हूँ॥ ८॥

जो भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके द्वारा ताम्रपर्णी और सागरके संगमपर अनेक बाणोंद्वारा पुल बाँधकर स्थापित किये गये हैं, उन श्रीरामेश्वरको मैं नियमसे प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

जो डाकिनी और शाकिनीवृन्दमें प्रेतोंद्वारा सदैव सेवित होते हैं, उन भक्तहितकारी भगवान् भीमशङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

सानन्दमानन्दवने वसन्त-
मानन्दकन्दं हतपापवृन्दम्।
वाराणसीनाथमनाथनाथं
श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये॥ ११॥

इलापुरे रम्यविशालकेऽस्मिन्
समुल्लसन्तं च जगद्वरेण्यम्।
वन्दे महोदारतरस्वभावं
घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये॥ १२॥

ज्योतिर्मयद्वादशलिङ्गकानां
शिवात्मनां प्रोक्तमिदं क्रमेण।
स्तोत्रं पठित्वा मनुजोऽतिभक्त्या
फलं तदालोक्य निजं भजेच्च॥ १३॥

॥ इति द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो स्वयं आनन्दकन्द हैं और आनन्दपूर्वक आनन्दवन (काशीक्षेत्र)-में वास करते हैं, जो पापसमूहके नाश करनेवाले हैं, उन अनाथोंके नाथ काशीपति श्रीविश्वनाथकी शरणमें मैं जाता हूँ॥ ११॥

जो इलापुरके सुरम्य मन्दिरमें विराजमान होकर समस्त जगत्के आराधनीय हो रहे हैं, जिनका स्वभाव बड़ा ही उदार है, उन घृष्णेश्वर नामक ज्योतिर्मय भगवान् शिवकी शरणमें मैं जाता हूँ॥ १२॥

यदि मनुष्य क्रमशः कहे गये इन बारहों ज्योतिर्मय शिवलिङ्गोंके स्तोत्रका भक्तिपूर्वक पाठ करे तो इनके दर्शनसे होनेवाले फलको प्राप्त कर सकता है॥ १३॥

॥ इस प्रकार द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

शिवताण्डवस्तोत्रम्

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्॥ १॥
जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनि ।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम॥ २॥
धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे ।

जिन्होंने जटारूपी अटवी (वन)-से निकलती हुई गङ्गाजीके गिरते हुए प्रवाहोंसे पवित्र किये गये गलेमें सर्पोंकी लटकती हुई विशाल मालाको धारणकर, डमरूके डम-डम शब्दोंसे मण्डित प्रचण्ड ताण्डव (नृत्य) किया, वे शिवजी हमारे कल्याणका विस्तार करें॥ १॥

जिनका मस्तक जटारूपी कड़ाहमें वेगसे घूमती हुई गङ्गाकी चञ्चल तरङ्ग-लताओंसे सुशोभित हो रहा है, ललाटाग्नि धक्-धक् जल रही है, सिरपर बाल चन्द्रमा विराजमान हैं, उन (भगवान् शिव)-में मेरा निरन्तर अनुराग हो॥ २॥

गिरिराजकिशोरी पार्वतीके विलासकालोपयोगी शिरोभूषणसे समस्त दिशाओंको प्रकाशित होते देख जिनका मन आनन्दित हो रहा है,

कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि

क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥ ३ ॥

जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभा-

कदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे ।

मदान्धसिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे

मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि ॥ ४ ॥

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-

प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः ।

भुजङ्गराजमालया निबद्धजाटजूटकः

श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः ॥ ५ ॥

जिनकी निरन्तर कृपादृष्टिसे कठिन आपत्तिका भी निवारण हो जाता है, ऐसे किसी दिगम्बर तत्त्वमें मेरा मन विनोद करे ॥ ३ ॥

जिनके जटाजूटवर्ती भुजङ्गमोंके फणोंकी मणियोंका फैलता हुआ पिङ्गल प्रभापुञ्ज दिशारूपिणी अङ्गनाओंके मुखपर कुङ्कुमरागका अनुलेप कर रहा है, मतवाले हाथीके हिलते हुए चमड़ेका उत्तरीय वस्त्र (चादर) धारण करनेसे स्निग्धवर्ण हुए उन भूतनाथमें मेरा चित्त अद्भुत विनोद करे ॥ ४ ॥

जिनकी चरणपादुकाएँ इन्द्र आदि समस्त देवताओंके [प्रणाम करते समय] मस्तकवर्ती कुसुमोंकी धूलिसे धूसरित हो रही हैं; नागराज (शेष)-के हारसे बँधी हुई जटावाले वे भगवान् चन्द्रशेखर मेरे लिये चिरस्थायिनी सम्पत्तिके साधक हों ॥ ५ ॥

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गभा-
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालि सम्पदे शिरो जटालमस्तु नः॥ ६॥

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम॥ ७॥

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुर-
त्कुहूनिशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः
कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः॥ ८॥

जिसने ललाट-वेदीपर प्रज्वलित हुई अग्निके स्फुलिङ्गोंके तेजसे कामदेवको नष्ट कर डाला था, जिसे इन्द्र नमस्कार किया करते हैं, सुधाकरकी कलासे सुशोभित मुकुटवाला वह [श्रीमहादेवजीका] उन्नत विशाल ललाटवाला जटिल मस्तक हमारी सम्पत्तिका साधक हो॥ ६॥

जिन्होंने अपने विकराल भालपट्टपर धक्-धक् जलती हुई अग्निमें प्रचण्ड कामदेवको हवन कर दिया था, गिरिराजकिशोरीके स्तनोंपर पत्रभङ्गरचना करनेके एकमात्र कारीगर उन भगवान् त्रिलोचनमें मेरी धारणा लगी रहे॥ ७॥

जिनके कण्ठमें नवीन मेघमालासे घिरी हुई अमावास्याकी आधी रातके समय फैलते हुए दुरूह अन्धकारके समान श्यामता अङ्कित है; जो गजचर्म लपेटे हुए हैं, वे संसारभारको धारण करनेवाले चन्द्रमा [-के सम्पर्क]-से मनोहर कान्तिवाले भगवान् गङ्गाधर मेरी सम्पत्तिका विस्तार करें॥ ८॥

प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम् ।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे॥ ९॥

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी-
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम् ।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे॥ १०॥

जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजङ्गमश्वस-
द्विनिर्गमत्क्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट् ।
धिमिद्धिमिद्धिमिद्ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गल-

जिनका कण्ठदेश खिले हुए नील कमलसमूहकी श्याम प्रभाका अनुकरण करनेवाली हरिणीकी-सी छविवाले चिह्नसे सुशोभित है तथा जो कामदेव, त्रिपुर, भव (संसार), दक्षयज्ञ, हाथी, अन्धकासुर और यमराजका भी उच्छेदन (संहार) करनेवाले हैं, उन्हें मैं भजता हूँ॥ ९॥

जो अभिमानरहित पार्वतीकी कलारूप कदम्बमञ्जरीके मकरन्द-स्रोतकी बढ़ती हुई माधुरीके पान करनेवाले मधुप हैं तथा कामदेव, त्रिपुर, भव, दक्षयज्ञ, हाथी, अन्धकासुर और यमराजका भी अन्त करनेवाले हैं, उन्हें मैं भजता हूँ॥ १०॥

जिनके मस्तकपर बड़े वेगके साथ घूमते हुए भुजङ्गके फुफकारनेसे ललाटकी भयंकर अग्नि क्रमशः धधकती हुई फैल रही है, धिमि-धिमि बजते हुए मृदङ्गके गम्भीर मङ्गल घोषके क्रमानुसार जिनका प्रचण्ड

ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः॥ ११॥

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्रजो-
गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम्॥ १२॥

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्॥ १३॥

इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं
पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम्।

ताण्डव हो रहा है, उन भगवान् शङ्करकी जय हो॥ ११॥

पत्थर और सुन्दर बिछौनोंमें, साँप और मुक्ताकी मालामें, बहुमूल्य रत्न तथा मिट्टीके ढेलेमें, मित्र या शत्रुपक्षमें, तृण अथवा कमललोचना तरुणीमें, प्रजा और पृथ्वीके महाराजमें समान भाव रखता हुआ मैं कब सदाशिवको भजूँगा?॥ १२॥

सुन्दर ललाटवाले भगवान् चन्द्रशेखरमें दत्तचित्त हो अपने कुविचारोंको त्यागकर गङ्गाजीके तटवर्ती निकुञ्जके भीतर रहता हुआ सिरपर हाथ जोड़ डबडबायी हुई विह्वल आँखोंसे 'शिव' मन्त्रका उच्चारण करता हुआ मैं कब सुखी होऊँगा?॥ १३॥

जो मनुष्य इस प्रकारसे उक्त इस उत्तमोत्तम स्तोत्रका नित्य पाठ, स्मरण और वर्णन करता रहता है, वह सदा शुद्ध रहता है
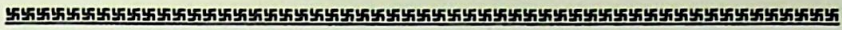
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं
विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिन्तनम् ॥ १४ ॥

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं
यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां
लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः ॥ १५ ॥

॥ इति श्रीरावणकृतं शिवताण्डवस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

और शीघ्र ही सुरगुरु श्रीशङ्करजीकी अच्छी भक्ति प्राप्त कर लेता है, वह विरुद्धगतिको नहीं प्राप्त होता; क्योंकि श्रीशिवजीका अच्छी प्रकारका चिन्तन प्राणिवर्गके मोहका नाश करनेवाला है ॥ १४ ॥

सायंकालमें पूजा समाप्त होनेपर रावणके गाये हुए इस शम्भु-पूजन-सम्बन्धी स्तोत्रका जो पाठ करता है, भगवान् शङ्कर उस मनुष्यको रथ, हाथी, घोड़ोंसे युक्त सदा स्थिर रहनेवाली अनुकूल सम्पत्ति देते हैं ॥ १५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीरावणकृत शिवताण्डवस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

शिव शिव हर हर जपत जग मन-वाणी सौं नित्य।
लहत नित्य आनन्द सो भव दुख मिटत अनित्य॥
दुर्लभ हर-पद-रति परम शिव-स्वरूपको ज्ञान।
पावत सो नर सहज ही शुद्ध हृदय मतिमान॥
(पद-रत्नाकर ८९२)

श्रीमृत्युञ्जयस्तोत्रम्

रत्नसानुशरासनं रजताद्रिशृङ्गनिकेतनं
शिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम्।
क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदशालयैरभिवन्दितं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ १ ॥

पञ्चपादपपुष्पगन्धिपदाम्बुजद्वयशोभितं
भाललोचनजातपावकदग्धमन्मथविग्रहम्।
भस्मदिग्धकलेवरं भवनाशिनं भवमव्ययं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ २ ॥

कैलासके शिखरपर जिनका निवासगृह है, जिन्होंने मेरुगिरिका धनुष, नागराज वासुकिकी प्रत्यञ्चा और भगवान् विष्णुको अग्निमय बाण बनाकर तत्काल ही दैत्योंके तीनों पुरोंको दग्ध कर डाला था, सम्पूर्ण देवता जिनके चरणोंकी वन्दना करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ १ ॥

मन्दार, पारिजात, संतान, कल्पवृक्ष और हरिचन्दन—इन पाँच दिव्य वृक्षोंके पुष्पोंसे सुगन्धित युगल चरणकमल जिनकी शोभा बढ़ाते हैं, जिन्होंने अपने ललाटवर्ती नेत्रसे प्रकट हुई आगकी ज्वालामें कामदेवके शरीरको भस्म कर डाला था, जिनका श्रीविग्रह सदा भस्मसे विभूषित रहता है, जो भव—सबकी उत्पत्तिके कारण होते हुए भी भव-संसारके नाशक हैं तथा जिनका कभी विनाश नहीं होता, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ २ ॥

मत्तवारणमुख्यचर्मकृतोत्तरीयमनोहरं
पङ्कजासनपद्मलोचनपूजिताङ्घ्रिसरोरुहम् ।
देवसिद्धतरङ्गिणीकरसिक्तशीतजटाधरं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ३ ॥
कुण्डलीकृतकुण्डलीश्वरकुण्डलं वृषवाहनं
नारदादिमुनीश्वरस्तुतवैभवं भुवनेश्वरम् ।
अन्धकान्तकमाश्रितामरपादपं शमनान्तकं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ४ ॥
यक्षराजसखं भगाक्षिहरं भुजङ्गविभूषणं
शैलराजसुतापरिष्कृतचारुवामकलेवरम् ।

जो मतवाले गजराजके मुख्य चर्मकी चादर ओढ़े परम मनोहर जान पड़ते हैं, ब्रह्मा और विष्णु भी जिनके चरणकमलोंकी पूजा करते हैं तथा जो देवताओं और सिद्धोंकी नदी गङ्गाकी तरङ्गोंसे भीगी हुई शीतल जटा धारण करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ३॥

गेडुल मारे हुए सर्पराज जिनके कानोंमें कुण्डलका काम देते हैं, जो वृषभपर सवारी करते हैं, नारद आदि मुनीश्वर जिनके वैभवकी स्तुति करते हैं, जो समस्त भुवनोंके स्वामी, अन्धकासुरका नाश करनेवाले, आश्रितजनोंके लिये कल्पवृक्षके समान और यमराजको भी शान्त करनेवाले हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ४॥

जो यक्षराज कुबेरके सखा, भग देवताकी आँख फोड़नेवाले और सर्पोंके आभूषण धारण करनेवाले हैं, जिनके श्रीविग्रहके सुन्दर वामभागको गिरिराजकिशोरी उमाने सुशोभित कर रखा है,

क्ष्वेडनीलगलं परश्वधधारिणं मृगधारिणं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ५ ॥
भेषजं भवरोगिणामखिलापदामपहारिणं
दक्षयज्ञविनाशिनं त्रिगुणात्मकं त्रिविलोचनम्।
भुक्तिमुक्तिफलप्रदं निखिलाघसंघनिबर्हणं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ६ ॥
भक्तवत्सलमर्चतां निधिमक्षयं हरिदम्बरं
सर्वभूतपतिं परात्परमप्रमेयमनूपमम्।
भूमिवारिनभोहुताशनसोमपालितस्वाकृतिं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः ॥ ७ ॥

कालकूट विष पीनेके कारण जिनका कण्ठभाग नीले रंगका दिखायी देता है, जो एक हाथमें फरसा और दूसरेमें मृग लिये रहते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ५॥

जो जन्म-मरणके रोगसे ग्रस्त पुरुषोंके लिये औषधरूप हैं, समस्त आपत्तियोंका निवारण और दक्षयज्ञका विनाश करनेवाले हैं, सत्त्व आदि तीनों गुण जिनके स्वरूप हैं, जो तीन नेत्र धारण करते, भोग और मोक्षरूपी फल देते तथा सम्पूर्ण पापराशिका संहार करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ६॥

जो भक्तोंपर दया करनेवाले हैं, अपनी पूजा करनेवाले मनुष्योंके लिये अक्षय निधि होते हुए भी जो स्वयं दिगम्बर रहते हैं, जो सब भूतोंके स्वामी, परात्पर, अप्रमेय और उपमारहित हैं; पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और चन्द्रमाके द्वारा जिनका श्रीविग्रह सुरक्षित है, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ७॥

विश्वसृष्टिविधायिनं पुनरेव पालनतत्परं
संहरन्तमथ प्रपञ्चमशेषलोकनिवासिनम्।
क्रीडयन्तमहर्निशं गणनाथयूथसमावृतं
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः॥ ८ ॥

रुद्रं पशुपतिं स्थाणुं नीलकण्ठमुमापतिम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ ९ ॥

कालकण्ठं कलामूर्तिं कालाग्निं कालनाशनम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १० ॥

जो ब्रह्मारूपसे सम्पूर्ण विश्वकी सृष्टि करते, फिर विष्णुरूपसे सबके पालनमें संलग्न रहते और अन्तमें सारे प्रपञ्चका संहार करते हैं, सम्पूर्ण लोकोंमें जिनका निवास है तथा जो गणेशजीके पार्षदोंसे घिरकर दिन-रात भाँति-भाँतिके खेल किया करते हैं, उन भगवान् चन्द्रशेखरकी मैं शरण लेता हूँ। यमराज मेरा क्या करेगा?॥ ८॥

'रु' अर्थात् दुःखको दूर करनेके कारण जिन्हें रुद्र कहते हैं, जो जीवरूपी पशुओंका पालन करनेसे पशुपति, स्थिर होनेसे स्थाणु, गलेमें नीला चिह्न धारण करनेसे नीलकण्ठ और भगवती उमाके स्वामी होनेसे उमापति नाम धारण करते हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ ९॥

जिनके गलेमें काला दाग है, जो कलामूर्ति, कालाग्निस्वरूप और कालके नाशक हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १०॥

नीलकण्ठं विरूपाक्षं निर्मलं निरुपद्रवम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ ११॥
वामदेवं महादेवं लोकनाथं जगद्गुरुम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १२॥
देवदेवं जगन्नाथं देवेशमृषभध्वजम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १३॥
अनन्तमव्ययं शान्तमक्षमालाधरं हरम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १४॥

जिनका कण्ठ नील और नेत्र विकराल होते हुए भी जो अत्यन्त निर्मल और उपद्रवरहित हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ ११॥

जो वामदेव, महादेव, विश्वनाथ और जगद्गुरु नाम धारण करते हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १२॥

जो देवताओंके भी आराध्यदेव, जगत्के स्वामी और देवताओंपर भी शासन करनेवाले हैं, जिनकी ध्वजापर वृषभका चिह्न बना हुआ है, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १३॥

जो अनन्त, अविकारी, शान्त, रुद्राक्षमालाधारी और सबके दुःखोंका हरण करनेवाले हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १४॥

आनन्दं परमं नित्यं कैवल्यपदकारणम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १५॥
स्वर्गापवर्गदातारं सृष्टिस्थित्यन्तकारिणम्।
नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति॥ १६॥

॥ इति श्रीपद्मपुराणान्तर्गत उत्तरखण्डे श्रीमृत्युञ्जयस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो परमानन्दस्वरूप, नित्य एवं कैवल्यपद—मोक्षकी प्राप्तिके कारण हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १५॥

जो स्वर्ग और मोक्षके दाता तथा सृष्टि, पालन और संहारके कर्ता हैं, उन भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ। मृत्यु मेरा क्या कर लेगी?॥ १६॥

॥ इस प्रकार श्रीपद्मपुराणान्तर्गत उत्तरखण्डमें श्रीमृत्युञ्जयस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

अब लौं भुलानी, अब ना भुलैहौं।
शम्भु-कृपा सब खेल बिलानी, हिलि मिलि पुनि न बलैहौं॥
एक असङ्ग वस्तु निज ढूँढ़त, मन विषयनि न चलैहौं।
ज्ञान अनल की लपट प्रबल अति, कर्म पहाड़ जलैहौं॥
श्रवण मनन एकाग्र ध्यान धरि, मानस कमल खिलैहौं।
उमा महेश्वर वृत्ति मनोहर, झूला झूमि झुलैहौं॥
ब्रह्मरन्ध्र पीयूष बृष्टि झरि, भरि-भरि चषक पिलैहौं।
दहराकाश मधुर धुनि गैहौं, दर्शन करि बिछलैहौं॥

('भजनावली'—ब्रह्मलीन स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजी सरस्वती)

हिमालयकृतं शिवस्तोत्रम्

हिमालय उवाच

त्वं ब्रह्मा सृष्टिकर्ता च त्वं विष्णुः परिपालकः।
त्वं शिवः शिवदोऽनन्तः सर्वसंहारकारकः॥ १॥
त्वमीश्वरो गुणातीतो ज्योतीरूपः सनातनः।
प्रकृतिः प्रकृतीशश्च प्राकृतः प्रकृतेः परः॥ २॥
नानारूपविधाता त्वं भक्तानां ध्यानहेतवे।
येषु रूपेषु यत्प्रीतिस्तत्तद्रूपं बिभर्षि च॥ ३॥
सूर्यस्त्वं सृष्टिजनक आधारः सर्वतेजसाम्।
सोमस्त्वं शस्य पाता च सततं शीतरश्मिना॥ ४॥
वायुस्त्वं वरुणस्त्वं च त्वमग्निः सर्वदाहकः।
इन्द्रस्त्वं देवराजश्च कालो मृत्युर्यमस्तथा॥ ५॥

हिमालयने कहा—[हे परम शिव!] आप ही सृष्टिकर्ता ब्रह्मा हैं। आप ही जगत्के पालक विष्णु हैं। आप ही सबका संहार करनेवाले अनन्त हैं और आप ही कल्याणकारी शिव हैं॥ १॥

आप गुणातीत ईश्वर, सनातन ज्योतिःस्वरूप हैं। प्रकृति और प्रकृतिके ईश्वर हैं। प्राकृत पदार्थ होते हुए भी प्रकृतिसे परे हैं॥ २॥

भक्तोंके ध्यान करनेके लिये आप अनेक रूप धारण करते हैं। जिन रूपोंमें जिसकी प्रीति है, उसके लिये आप वही रूप धारण कर लेते हैं॥ ३॥

आप ही सृष्टिके जन्मदाता सूर्य हैं। समस्त तेजोंके आधार हैं। आप ही शीतल किरणोंसे सदा शस्योंका पालन करनेवाले सोम हैं॥ ४॥

आप ही वायु, वरुण और सर्वदाहक अग्नि हैं। आप ही देवराज इन्द्र, काल, मृत्यु तथा यम हैं॥ ५॥

मृत्युञ्जयो मृत्युमृत्युः कालकालो यमान्तकः।
वेदस्त्वं वेदकर्ता च वेदवेदाङ्गपारगः॥ ६ ॥
विदुषां जनकस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः।
मन्त्रस्त्वं हि जपस्त्वं हि तपस्त्वं तत्फलप्रदः॥ ७ ॥
वाक् त्वं वागधिदेवी त्वं तत्कर्ता तद्गुरुः स्वयम्।
अहो सरस्वतीबीजं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः॥ ८ ॥
इत्येवमुक्त्वा शैलेन्द्रस्तस्थौ धृत्वा पदाम्बुजम्।
तत्रोवास तमाबोध्य चावरुह्य वृषाच्छिवः॥ ९ ॥
स्तोत्रमेतन्महापुण्यं त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो भयेभ्यश्च भवार्णवे॥ १० ॥

मृत्युञ्जय होनेके कारण मृत्युकी भी मृत्यु, कालके भी काल तथा यमके भी यम हैं। वेद, वेदकर्ता तथा वेद-वेदाङ्गोंके पारङ्गत विद्वान् भी आप ही हैं॥ ६॥

आप ही विद्वानोंके जनक, विद्वान् तथा विद्वानोंके गुरु हैं। आप ही मन्त्र, जप, तप और उनके फलदाता हैं॥ ७॥

आप ही वाक् और आप ही वाणीकी अधिष्ठात्री देवी हैं। आप ही उसके स्रष्टा और गुरु हैं। अहो! सरस्वतीबीजस्वरूप आपकी स्तुति यहाँ कौन कर सकता है॥ ८॥

ऐसा कहकर गिरिराज हिमालय उन (भगवान् शिवजी)-के चरणकमलोंको पकड़कर खड़े रहे। भगवान् शिवने वृषभसे उतरकर शैलराजको प्रबोध देकर वहाँ निवास किया॥ ९॥

जो मनुष्य तीनों संध्याओंके समय इस परम पुण्यमय स्तोत्रका पाठ करता है, वह भवसागरमें रहकर भी समस्त पापों तथा भयोंसे मुक्त हो जाता है॥ १०॥

अपुत्रो लभते पुत्रं मासमेकं पठेद् यदि।
भार्याहीनो लभेद् भार्यां सुशीलां सुमनोहराम्॥ ११॥
चिरकालगतं वस्तु लभते सहसा ध्रुवम्।
राज्यभ्रष्टो लभेद् राज्यं शङ्करस्य प्रसादतः॥ १२॥
कारागारे श्मशाने च शत्रुग्रस्तेऽतिसङ्कटे।
गभीरेऽतिजलाकीर्णे भग्नपोते विषादने॥ १३॥
रणमध्ये महाभीते हिंस्रजन्तुसमन्विते।
सर्वतो मुच्यते स्तुत्वा शङ्करस्य प्रसादतः॥ १४॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे हिमालयकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

पुत्रहीन मनुष्य यदि एक मासतक इसका पाठ करे तो पुत्र पाता है। भार्याहीनको सुशीला तथा परम मनोहारिणी भार्या प्राप्त होती है॥ ११॥

वह चिरकालसे खोयी हुई वस्तुको सहसा तथा अवश्य पा लेता है। राज्यभ्रष्ट पुरुष भगवान् शंकरके प्रसादसे पुनः राज्यको प्राप्त कर लेता है॥ १२॥

कारागार, श्मशान और शत्रु-संकटमें पड़नेपर तथा अत्यन्त जलसे भरे गम्भीर जलाशयमें नाव टूट जानेपर, विष खा लेनेपर, महाभयंकर संग्रामके बीच फँस जानेपर तथा हिंसक जन्तुओंसे घिर जानेपर इस स्तुतिका पाठ करके मनुष्य भगवान् शंकरकी कृपासे समस्त भयोंसे मुक्त हो जाता है॥ १३-१४॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणमें हिमालयकृत शिवस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

बाणासुरकृतं शिवस्तोत्रम्

बाणासुर उवाच

वन्दे सुराणां सारं च सुरेशं नीललोहितम्।
योगीश्वरं योगबीजं योगिनां च गुरोर्गुरुम्॥ १॥
ज्ञानानन्दं ज्ञानरूपं ज्ञानबीजं सनातनम्।
तपसां फलदातारं दातारं सर्वसम्पदाम्॥ २॥
तपोरूपं तपोबीजं तपोधनधनं वरम्।
वरं वरेण्यं वरदमीड्यं सिद्धगणैर्वरैः॥ ३॥
कारणं भुक्तिमुक्तीनां नरकार्णवतारणम्।
आशुतोषं प्रसन्नास्यं करुणामयसागरम्॥ ४॥

बाणासुर बोला—जो देवताओंके सारतत्त्वस्वरूप और समस्त देवगणोंके स्वामी हैं, जिनका वर्ण नील और लोहित है, जो योगियोंके ईश्वर, योगके बीज तथा योगियोंके गुरुके भी गुरु हैं, उन भगवान् शिवकी मैं वन्दना करता हूँ॥ १॥

जो ज्ञानानन्दस्वरूप, ज्ञानरूप, ज्ञानबीज, सनातन देवता, समस्त तपस्याओंके फलदाता तथा सम्पूर्ण सम्पदाओंको देनेवाले हैं, उन भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ २॥

जो तपःस्वरूप, तपस्याके बीज, तपोधनोंके श्रेष्ठ धन, श्रेष्ठ वरणीय तथा वरदायक और श्रेष्ठ सिद्धगणोंके द्वारा स्तवन करने योग्य हैं, उन भगवान् शङ्करको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ३॥

जो भोग और मोक्षके कारण, नरक-समुद्रसे पार उतारनेवाले, शीघ्र प्रसन्न होनेवाले, प्रसन्नमुख तथा करुणाके सागर हैं, उन भगवान् शिवको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ४॥

हिमचन्दनकुन्देन्दुकुमुदाम्भोजसंनिभम् ।
ब्रह्मज्योतिःस्वरूपं च भक्तानुग्रहविग्रहम् ॥ ५ ॥
विषयाणां विभेदेन बिभ्रन्तं बहुरूपकम् ।
जलरूपमग्निरूपमाकाशरूपमीश्वरम् ॥ ६ ॥
वायुरूपं चन्द्ररूपं सूर्यरूपं महत्प्रभुम् ।
आत्मनः स्वपदं दातुं समर्थमवलीलया ॥ ७ ॥
भक्तजीवनमीशं च भक्तानुग्रहकातरम् ।
वेदा न शक्ता यं स्तोतुं किमहं स्तौमि तं प्रभुम् ॥ ८ ॥
अपरिच्छिन्नमीशानमहो वाङ्मनसोः परम् ।
व्याघ्रचर्माम्बरधरं वृषभस्थं दिगम्बरम् ।
त्रिशूलपट्टिशधरं सस्मितं चन्द्रशेखरम् ॥ ९ ॥

जिनकी अङ्गकान्ति हिम, चन्दन, कुन्द, चन्द्रमा, कुमुद तथा श्वेत कमलके सदृश उज्ज्वल है, जो ब्रह्मज्योतिःस्वरूप तथा भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये विभिन्न रूप धारण करनेवाले हैं, उन भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

जो विषयोंके भेदसे बहुतेरे रूप धारण करते हैं; जल, अग्नि, आकाश, वायु, चन्द्रमा और सूर्य जिनके स्वरूप हैं, जो ईश्वर (जगन्नियन्ता परमेश्वर) एवं महात्माओंके प्रभु हैं और लीलापूर्वक अपना पद देनेकी शक्ति रखते हैं, जो भक्तोंके जीवन हैं तथा भक्तोंपर कृपा करनेके लिये कातर हो उठते हैं। वेद भी जिनका स्तवन करनेमें असमर्थ हैं, उन परमेश्वर प्रभुकी मैं क्या स्तुति करूँगा?॥ ६—८॥

अहो! जो ईशान देश, काल और वस्तुसे परिच्छिन्न नहीं हैं तथा मन और वाणीकी पहुँचसे परे हैं। जो बाघम्बरधारी अथवा दिगम्बर हैं, बैलपर सवार हो त्रिशूल और पट्टिश धारण करते हैं, उन मन्द मुस्कानकी आभासे सुशोभित मुखवाले भगवान् चन्द्रशेखरको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

इत्युक्त्वा स्तवराजेन नित्यं बाणः सुसंयतः।
प्रणमेच्छङ्करं भक्त्या दुर्वासाश्च मुनीश्वरः॥ १०॥
इदं दत्तं वसिष्ठेन गन्धर्वाय पुरा मुने।
कथितं च महास्तोत्रं शूलिनः परमाद्भुतम्॥ ११॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं पठेद् भक्त्या च यो नरः।
स्नानस्य सर्वतीर्थानां फलमाप्नोति निश्चितम्॥ १२॥
अपुत्रो लभते पुत्रं वर्षमेकं शृणोति यः।
संयतश्च हविष्याशी प्रणम्य शङ्करं गुरुम्॥ १३॥
गलत्कुष्ठी महाशूली वर्षमेकं शृणोति यः।
अवश्यं मुच्यते रोगाद् व्यासवाक्यमिति श्रुतम्॥ १४॥

यों कहकर बाणासुर प्रतिदिन संयमपूर्वक रहकर स्तवराजसे भगवान्‌की स्तुति करता था और भक्तिभावसे शङ्करजीके चरणोंमें मस्तक झुकाता था। मुनीश्वर दुर्वासा भी ऐसा ही करते थे॥ १०॥

हे मुने! वसिष्ठजीने पूर्वकालमें त्रिशूलधारी शिवके इस परम महान् अद्भुत स्तोत्रका गन्धर्वको उपदेश दिया था। जो मनुष्य भक्तिभावसे इस परम पुण्यमय स्तोत्रका पाठ करता है, वह निश्चय ही सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नानका फल पा लेता है॥ ११-१२॥

जो हविष्य खाकर संयमपूर्वक रहते हुए जगद्‌गुरु शङ्करको प्रणाम करके एक वर्षतक इस स्तोत्रको सुनता है, वह पुत्रहीन हो तो अवश्य ही पुत्र प्राप्त कर लेता है॥ १३॥

जिसको गलित कोढ़का रोग हो या उदरमें बड़ा भारी शूल उठता हो, वह यदि एक वर्षतक इस स्तोत्रको सुने तो अवश्य ही उस रोगसे मुक्त हो जाता है। यह बात मैंने व्यासजीके मुँहसे सुनी है॥ १४॥

कारागारेऽपि बद्धो यो नैव प्राप्नोति निर्वृतिम्।
स्तोत्रं श्रुत्वा मासमेकं मुच्यते बन्धनाद् ध्रुवम्॥ १५॥
भ्रष्टराज्यो लभेद् राज्यं भक्त्या मासं शृणोति यः।
मासं श्रुत्वा संयतश्च लभेद् भ्रष्टधनो धनम्॥ १६॥
यक्ष्मग्रस्तो वर्षमेकमास्तिको यः शृणोति चेत्।
निश्चितं मुच्यते रोगाच्छङ्करस्य प्रसादतः॥ १७॥
यः शृणोति सदा भक्त्या स्तवराजमिमं द्विज।
तस्यासाध्यं त्रिभुवने नास्ति किंचिच्च शौनक॥ १८॥
कदाचिद् बन्धुविच्छेदो न भवेत् तस्य भारते।
अचलं परमैश्वर्यं लभते नात्र संशयः॥ १९॥

जो कैदमें पड़कर शान्ति न पाता हो, वह भी एक मासतक इस स्तोत्रको श्रवण करके अवश्य ही बन्धनसे मुक्त हो जाता है॥ १५॥

जिसका राज्य छिन गया हो, ऐसा पुरुष यदि भक्तिपूर्वक एक मासतक इस स्तोत्रका श्रवण करे तो अपना राज्य प्राप्त कर लेता है। एक मासतक संयमपूर्वक इसका श्रवण करके निर्धन मनुष्य धन पा लेता है॥ १६॥

राजयक्ष्मासे ग्रस्त होनेपर जो आस्तिक पुरुष एक वर्षतक इसका श्रवण करता है, वह भगवान् शङ्करके प्रसादसे निश्चय ही रोगमुक्त हो जाता है॥ १७॥

द्विज शौनक! जो सदा भक्तिभावसे इस स्तवराजको सुनता है, उसके लिये तीनों लोकोंमें कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता॥ १८॥

भारतवर्षमें उसको कभी अपने बन्धुओंसे वियोगका दुःख नहीं होता। वह अविचल एवं महान् ऐश्वर्यका भागी होता है, इसमें संशय नहीं है॥ १९॥

सुसंयतोऽतिभक्त्या च मासमेकं शृणोति यः।
अभार्यो लभते भार्यां सुविनीतां सतीं वराम्॥ २०॥
महामूर्खश्च दुर्मेधो मासमेकं शृणोति यः।
बुद्धिं विद्यां च लभते गुरूपदेशमात्रतः॥ २१॥
कर्मदुःखी दरिद्रश्च मासं भक्त्या शृणोति यः।
ध्रुवं वित्तं भवेत् तस्य शङ्करस्य प्रसादतः॥ २२॥
इहलोके सुखं भुक्त्वा कृत्वा कीर्तिं सुदुर्लभाम्।
नानाप्रकारधर्मं च यात्यन्ते शङ्करालयम्॥ २३॥
पार्षदप्रवरो भूत्वा सेवते तत्र शङ्करम्।
यः शृणोति त्रिसंध्यं च नित्यं स्तोत्रमनुत्तमम्॥ २४॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे बाणासुरकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जो पूर्ण संयमसे रहकर अत्यन्त भक्तिभावसे एक मासतक इस स्तोत्रका श्रवण करता है, वह यदि भार्याहीन हो तो अति विनयशील सती-साध्वी सुन्दरी भार्या पाता है॥ २०॥

जो महान् मूर्ख और खोटी बुद्धिका है, ऐसा मनुष्य यदि इस स्तोत्रको एक मासतक सुनता है तो वह गुरुके उपदेशमात्रसे बुद्धि और विद्या पाता है॥ २१॥

जो प्रारब्धकर्मसे दुःखी और दरिद्र मनुष्य भक्तिभावसे इस स्तोत्रका श्रवण करता है, उसे निश्चय ही भगवान् शङ्करकी कृपासे धन प्राप्त होता है॥ २२॥

जो प्रतिदिन तीनों संध्याओंके समय इस उत्तम स्तोत्रको सुनता है, वह इस लोकमें सुख भोगकर, परम दुर्लभ कीर्ति प्राप्त करके और नाना प्रकारके धर्मका अनुष्ठान करके अन्तमें भगवान् शङ्करके धामको जाता है, वहाँ श्रेष्ठ पार्षद होकर भगवान् शिवकी सेवा करता है॥ २३-२४॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणमें बाणासुरकृत शिवस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

असितकृतं शिवस्तोत्रम्

असित उवाच

जगद्गुरो नमस्तुभ्यं शिवाय शिवदाय च।
योगीन्द्राणां च योगीन्द्र गुरूणां गुरवे नमः॥ १॥
मृत्योर्मृत्युस्वरूपेण मृत्युसंसारखण्डन।
मृत्योरीश मृत्युबीज मृत्युञ्जय नमोऽस्तु ते॥ २॥
कालरूपं कलयतां कालकालेश कारण।
कालादतीत कालस्य कालकाल नमोऽस्तु ते॥ ३॥
गुणातीत गुणाधार गुणबीज गुणात्मक।
गुणीश गुणिनां बीज गुणिनां गुरवे नमः॥ ४॥

असित बोले—जगद्गुरो! आपको नमस्कार है। आप शिव हैं और शिव (कल्याण)-के दाता हैं। योगीन्द्रोंके भी योगीन्द्र तथा गुरुओंके भी गुरु हैं; आपको नमस्कार है॥ १॥

मृत्युके लिये भी मृत्युरूप होकर जन्म-मृत्युमय संसारका खण्डन करनेवाले देवता! आपको नमस्कार है। मृत्युके ईश्वर! मृत्युके बीज! मृत्युञ्जय! आपको नमस्कार है॥ २॥

कालगणना करनेवालोंके लक्ष्यभूत कालरूप हे परमेश्वर! आप कालके भी काल, ईश्वर और कारण हैं तथा कालके लिये भी कालातीत हैं। हे कालोंके काल! आपको नमस्कार है॥ ३॥

हे गुणातीत! गुणाधार! गुणबीज! गुणात्मक! गुणीश! और गुणियोंके आदिकारण! आप समस्त गुणवानोंके गुरु हैं; आपको नमस्कार है॥ ४॥

ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मज्ञ ब्रह्मभावनतत्पर।
ब्रह्मबीजस्वरूपेण ब्रह्मबीज नमोऽस्तु ते॥ ५॥
इति स्तुत्वा शिवं नत्वा पुरस्तस्थौ मुनीश्वरः।
दीनवत् साश्रुनेत्रश्च पुलकाञ्चितविग्रहः॥ ६॥
असितेन कृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च यः पठेत्।
वर्षमेकं हविष्याशी शङ्करस्य महात्मनः॥ ७॥
स लभेद् वैष्णवं पुत्रं ज्ञानिनं चिरजीविनम्।
भवेद्धनाढ्यो दुःखी च मूको भवति पण्डितः॥ ८॥
अभार्यो लभते भार्यां सुशीलां च पतिव्रताम्।
इहलोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते शिवसंनिधिम्॥ ९॥

॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणे असितकृतं शिवस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

हे ब्रह्मस्वरूप! ब्रह्मज्ञ! ब्रह्मचिन्तनपरायण! वेदोंके बीजरूप होनेके कारण ब्रह्मबीज! आपको नमस्कार है॥ ५॥

इस प्रकार स्तुति करके शिवको प्रणाम करनेके पश्चात् मुनीश्वर असित उनके सामने खड़े हो गये और दीनकी भाँति नेत्रोंसे आँसू बहाने लगे। उनके सम्पूर्ण शरीरमें रोमाञ्च हो आया॥ ६॥

जो असितद्वारा किये गये महात्मा शङ्करके इस स्तोत्रका प्रतिदिन भक्तिभावसे पाठ करता और एक वर्षतक नित्य हविष्य खाकर रहता है—उसे ज्ञानी, चिरञ्जीवी एवं वैष्णव पुत्रकी प्राप्ति होती है। जो धनाभावसे दुःखी हो, वह धनाढ्य और जो गूँगा हो, वह पण्डित हो जाता है॥ ७-८॥

पत्नीहीन पुरुषको सुशीला एवं पतिव्रता पत्नी प्राप्त होती है तथा वह इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें भगवान् शिवके समीप जाता है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणमें असितकृत शिवस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्

विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतं
पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया।
यः साक्षात्कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ १॥

बीजस्यान्तरिवाङ्कुरो जगदिदं प्राङ्निर्विकल्पं शनै-
र्मायाकल्पितदेशकालकलनावैचित्र्यचित्रीकृतम् ।
मायावीव विजृम्भयत्यपि महायोगीव यः स्वेच्छया
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ २॥

जो अपने हृदयस्थित दर्पणमें दृश्यमान नगरी-सदृश विश्वको निद्राद्वारा स्वप्नकी भाँति मायाद्वारा बाहर प्रकट हुएकी तरह आत्मामें देखते हुए ज्ञान होनेपर अथवा निद्रा भंग होनेपर अपने अद्वितीय आत्माका साक्षात्कार करते हैं, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ १॥

जिन्होंने महायोगीकी तरह अपनी इच्छासे सृष्टिके पूर्व निर्विकल्प-रूपसे स्थित इस जगत्को बीजके भीतर स्थित अङ्कुरकी भाँति मायाद्वारा कल्पित देश, काल और धारणाकी विचित्रतासे चित्रित किया है तथा मायावी-सदृश जँभाई लेते हुए-से दीखते हैं, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ २॥

यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्कल्पार्थकं भासते
  साक्षात् तत्त्वमसीति वेदवचसा यो बोधयत्याश्रितान्।
यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरावृत्तिर्भवाम्भोनिधौ
  तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ ३॥
नानाछिद्रघटोदरस्थितमहादीपप्रभाभास्वरं
  ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरणद्वारा बहिः स्पन्दते।
जानामीति तमेव भान्तमनुभात्येतत् समस्तं जगत्
  तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ ४॥
देहं प्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां बुद्धिं च शून्यं विदुः
  स्त्रीबालान्धजडोपमास्त्वहमिति भ्रान्ता भृशं वादिनः।

जिसका सदात्मक स्फुरण ही असत्-तुल्य भासित होता है, जो अपने आश्रितोंको **'साक्षात् तत्त्वमसि'** अर्थात् 'तुम साक्षात् वही ब्रह्म हो' इस वेद-वाक्यद्वारा ज्ञान प्रदान करते हैं तथा जिनका साक्षात्कार करनेसे पुनः भवसागरमें आवागमन नहीं होता, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ ३॥

अनेक छिद्रोंवाले घटके भीतर स्थित विशाल दीपककी उज्ज्वल प्रभाके समान ज्ञान जिनके नेत्र आदि इन्द्रियोंद्वारा बाहर प्रसरित होता है तथा जैसा मैं समझता हूँ कि उसीके प्रकाशित होनेपर यह सम्पूर्ण जगत् प्रकाशित होता है, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ ४॥

भ्रमित हुए बहुवादी-शून्यवादी बौद्ध आदि देह, प्राण, इन्द्रियोंको तथा तीव्र बुद्धिको भी स्त्री, बालक, अंध और जडकी तरह शून्य मानते

मायाशक्तिविलासकल्पितमहाव्यामोहसंहारिणे
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ५ ॥
राहुग्रस्तदिवाकरेन्दुसदृशो मायासमाच्छादनात्
सन्मात्रः करणोपसंहरणतो योऽभूत् सुषुप्तः पुमान्।
प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये यः प्रत्यभिज्ञायते
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ६ ॥
बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा सर्वास्ववस्थास्वपि
व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहमित्यन्तः स्फुरन्तं सदा।
स्वात्मानं प्रकटीकरोति भजतां यो मुद्रया भद्रया
तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ ७ ॥

हैं तथा 'अहं' को ही प्रधानता देते हैं, ऐसे माया-शक्तिके विलाससे कल्पित महामोहका संहार करनेवाले उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है ॥ ५ ॥

जो पुरुष राहुद्वारा ग्रस्त सूर्य-चन्द्रके समान मायाद्वारा समाच्छादित होनेके कारण सन्मात्रका इन्द्रियोंद्वारा उपसंहार करके सो गया था, उसे निद्रामें लीन होनेपर अथवा जागनेके पश्चात् जो प्रत्यभिज्ञातुल्य भासित होता है, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है ॥ ६ ॥

जो अपने भक्तोंके समक्ष भद्रा मुद्राद्वारा बाल, युवा, वृद्ध, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति तथा सभी व्यावर्तित अवस्थाओंमें भी अनुवर्तमान एवं सदा 'अहं' रूपसे अन्तःकरणमें स्फुरमाण स्वात्माको प्रकट करते हैं, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है ॥ ७ ॥

विश्वं पश्यति कार्यकारणतया स्वस्वामिसम्बन्धतः
शिष्याचार्यतया तथैव पितृपुत्राद्यात्मना भेदतः।
स्वप्ने जाग्रति वा य एष पुरुषो मायापरिभ्रामित-
स्तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ ८॥
भूरम्भांस्यनलोऽनिलोऽम्बरमहर्नाथो हिमांशुः पुमा-
नित्याभाति चराचरात्मकमिदं यस्यैव मूर्त्यष्टकम्।
नान्यत्किञ्चन विद्यते विमृशतां यस्मात् परस्माद्विभो-
स्तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये॥ ९॥
सर्वात्मत्वमिति स्फुटीकृतमिदं यस्मादमुष्मिन् स्तवे
तेनास्य श्रवणात् तदर्थमननाद्ध्यानाच्च संकीर्तनात्।
सर्वात्मत्वमहाविभूतिसहितं स्यादीश्वरत्वं स्वतः
सिध्येत् तत्पुनरष्टधा परिणतं चैश्वर्यमव्याहतम्॥ १०॥

जिनकी मायाद्वारा परिभ्रामित हुआ यह पुरुष स्वप्न अथवा जाग्रत्-अवस्थामें विश्वको कार्य-कारण, स्वामी-सेवक, शिष्य-आचार्य तथा पिता-पुत्रके भेदसे देखता है, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ ८॥

जिनकी पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, पुरुष—ये आठ मूर्तियाँ ही इस चराचर जगत्के रूपमें प्रकाशित हो रही हैं तथा विचारशीलोंके लिये जिन परात्पर विभुके अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है, उन श्रीगुरुस्वरूप श्रीदक्षिणामूर्तिको यह मेरा नमस्कार है॥ ९॥

चूँकि इस स्तोत्रमें यह स्पष्ट किया गया है कि यह चराचर जगत् सर्वात्मस्वरूप है, इसलिये इसका श्रवण, इसके अर्थका मनन, ध्यान और संकीर्तन करनेसे स्वतः सर्वात्मस्वरूप महाविभूतिसहित ईश्वरत्वकी प्राप्ति होती है, पुनः आठ रूपोंमें परिणत हुआ स्वच्छन्द ऐश्वर्य भी सिद्ध हो जाता है॥ १०॥

वटविटपिसमीपे भूमिभागे निषण्णं
सकलमुनिजनानां ज्ञानदातारमारात्।
त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं
जननमरणदुःखच्छेददक्षं नमामि॥ ११॥
चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः शिष्या गुरुर्युवा।
गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः॥ १२॥

॥ इति श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

~~ ❋ ~~

जो वटवृक्षके समीप भूमिभागपर स्थित हैं, निकट बैठे हुए समस्त मुनिजनोंको ज्ञान प्रदान कर रहे हैं, जन्म-मरणके दुःखका विनाश करनेमें प्रवीण हैं, त्रिभुवनके गुरु और ईश हैं, उन भगवान् दक्षिणामूर्तिको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ११॥

आश्चर्य तो यह है कि उस वटवृक्षके नीचे सभी शिष्य वृद्ध हैं और गुरु युवा हैं। साथ ही गुरुका व्याख्यान भी मौन भाषामें है, किंतु उसीसे शिष्योंके संशय नष्ट हो गये हैं॥ १२॥

॥ इस प्रकार श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

~~ ❋ ~~

देत संपदासमेत श्रीनिकेत जाचकनि,
भवन बिभूति-भाँग, बृषभ बहनु है।
नाम बामदेव दाहिनो सदा असंग रंग
अर्द्ध अंग अंगना, अनंगको महनु है॥
तुलसी महेसको प्रभाव भावहीं सुगम
निगम-अगमहूको जानिबो गहनु है।
भेष तौ भिखारिको भयंकररूप संकर
दयाल दीनबंधु दानि दारिददहनु है॥
(कवितावली १६०)

~~ ❋ ~~

अन्धककृता शिवस्तुतिः

अन्धक उवाच

कृत्स्नस्य योऽस्य जगतः सचराचरस्य
कर्ता कृतस्य च तथा सुखदुःखहेतुः।
संहारहेतुरपि यः पुनरन्तकाले
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १॥
यं योगिनो विगतमोहतमोरजस्का
भक्त्यैकतानमनसो विनिवृत्तकामाः।
ध्यायन्ति निश्चलधियोऽमितदिव्यभावं
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ २॥
यश्चेन्दुखण्डममलं विलसन्मयूखं
बद्ध्वा सदा प्रियतमां शिरसा बिभर्ति।

अन्धकने कहा—जो चराचर प्राणियोंसहित इस सम्पूर्ण जगत्को उत्पन्न करनेवाले हैं, उत्पन्न हुए जगत्के सुख-दुःखमें एकमात्र कारण हैं तथा अन्तकालमें जो पुनः इस विश्वके संहारमें भी कारण बनते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १॥

जिनके हृदयसे मोह, तमोगुण और रजोगुण दूर हो गये हैं, भक्तिके प्रभावसे जिनका चित्त भगवान्के ध्यानमें लीन हो रहा है, जिनकी सम्पूर्ण कामनाएँ निवृत्त हो चुकी हैं और जिनकी बुद्धि स्थिर हो गयी है, ऐसे योगी पुरुष अपरिमेय दिव्यभावसे सम्पन्न जिन भगवान् शिवका निरन्तर ध्यान करते रहते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ २॥

जो सुन्दर किरणोंसे युक्त निर्मल चन्द्रमाकी कलाको जटा-जूटमें बाँधकर अपनी प्रियतमा गङ्गाजीको मस्तकपर धारण करते हैं,

यश्चार्धदेहमददाद् गिरिराजपुत्र्यै
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ३॥

योऽयं सकृद्विमलचारुविलोलतोयां
गङ्गां महोर्मिविषमां गगनात् पतन्तीम्।
मूर्ध्नाऽऽददे स्रजमिव प्रतिलोलपुष्पां
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ४॥

कैलासशैलशिखरं प्रतिकम्प्यमानं
कैलासशृङ्गसदृशेन दशाननेन।
यः पादपद्मपरिवादनमादधान-
स्तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ५॥

जिन्होंने गिरिराजकुमारी उमाको अपना आधा शरीर दे दिया है, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ३॥

आकाशसे गिरती हुई गङ्गाजीको, जो स्वच्छ, सुन्दर एवं चञ्चल जलराशिसे युक्त तथा ऊँची-ऊँची लहरोंसे उल्लसित होनेके कारण भयंकर जान पड़ती थीं, जिन्होंने हिलते हुए फूलोंसे सुशोभित मालाकी भाँति सहसा अपने मस्तकपर धारण कर लिया, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ४॥

कैलास पर्वतके शिखरके समान ऊँचे शरीरवाले दशमुख रावणके द्वारा हिलायी जाती हुई कैलासगिरिकी चोटीको जिन्होंने अपने चरणकमलोंसे ताल देकर स्थिर कर दिया, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ५॥

येनासकृद् दितिसुताः समरे निरस्ता
विद्याधरोरगगणाश्च वरैः समग्राः।
संयोजिता मुनिवराः फलमूलभक्षा-
स्तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ६॥
दग्ध्वाध्वरं च नयने च तथा भगस्य
पूष्णस्तथा दशनपङ्क्तिमपातयच्च ।
तस्तम्भ यः कुलिशयुक्तमहेन्द्रहस्तं
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ७॥
एनस्कृतोऽपि विषयेष्वपि सक्तभावा
ज्ञानान्वयश्रुतगुणैरपि नैव युक्ताः।
यं संश्रिताः सुखभुजः पुरुषा भवन्ति
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ८॥

जिन्होंने अनेक बार दैत्योंको युद्धमें परास्त किया है और विद्याधर, नागगण तथा फल-मूलका आहार करनेवाले सम्पूर्ण मुनिवरोंको उत्तम वर दिये हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ६॥

जिन्होंने दक्षका यज्ञ भस्म करके भग देवताकी आँखें फोड़ डालीं और पूषाके सारे दाँत गिरा दिये तथा वज्रसहित देवराज इन्द्रके हाथको भी स्तम्भित कर दिया—जडवत् निश्चेष्ट बना दिया, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ७॥

जो पापकर्ममें निरत और विषयासक्त हैं, जिनमें उत्तम ज्ञान, उत्तम कुल, उत्तम शास्त्र-ज्ञान और उत्तम गुणोंका भी अभाव है—ऐसे पुरुष भी जिनकी शरणमें जानेसे सुखी हो जाते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ८॥
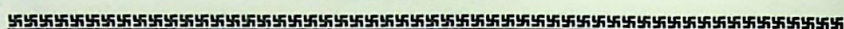
अत्रिप्रसूतिरविकोटिसमानतेजाः
संत्रासनं विबुधदानवसत्तमानाम्।
यः कालकूटमपिबत् समुदीर्णवेगं
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ९॥
ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुतां च सषण्मुखानां
योऽदाद् वरांश्च बहुशो भगवान् महेशः।
नन्दिं च मृत्युवदनात् पुनरुज्जहार
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १०॥
आराधितः सुतपसा हिमवन्निकुञ्जे
धूम्रव्रतेन मनसाऽपि परैरगम्यः।
सञ्जीवनी समददाद् भृगवे महात्मा
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ ११॥

जो तेजमें करोड़ों चन्द्रमाओं और सूर्योंके समान हैं, जिन्होंने बड़े-बड़े देवताओं तथा दानवोंका भी दिल दहला देनेवाले कालकूट नामक भयंकर विषका पान कर लिया था, उन प्रचण्ड वेगशाली शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ९॥

जिन भगवान् महेश्वरने कार्तिकेयसहित ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र तथा मरुद्गणोंको अनेकों बार वर दिये हैं और नन्दीका मृत्युके मुखसे उद्धार किया, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १०॥

जो दूसरोंके लिये मनसे भी अगम्य हैं, महर्षि भृगुने हिमालय पर्वतके निकुञ्जमें होमका धुआँ पीकर कठोर तपस्याके द्वारा जिनकी आराधना की थी तथा जिन महात्माने भृगुको (उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर) संजीवनी विद्या प्रदान की, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ ११॥
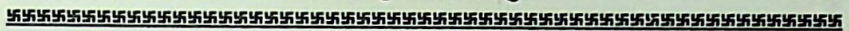
नानाविधैर्गजबिडालसमानवक्त्रै-
दक्षाध्वरप्रमथनैर्बलिभिर्गणौघैः ।
योऽभ्यर्च्यतेऽमरगणैश्च सलोकपालै-
स्तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १२॥
क्रीडार्थमेव भगवान् भुवनानि सप्त
नानानदीविहगपादपमण्डितानि ।
सब्रह्मकानि व्यसृजत् सुकृताहितानि
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १३॥
यस्याखिलं जगदिदं वशवर्ति नित्यं
योऽष्टाभिरेव तनुभिर्भुवनानि भुङ्क्ते।

हाथी और बिल्ली आदिकी-सी मुखाकृतिवाले तथा दक्षयज्ञका विनाश करनेवाले नाना प्रकारके महाबली गणोंद्वारा जिनकी निरन्तर पूजा होती रहती है एवं लोकपालोंसहित देवगण भी जिनकी आराधना किया करते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १२॥

जिन भगवान्ने अपनी क्रीडाके लिये ही अनेकों नदियों, पक्षियों और वृक्षोंसे सुशोभित एवं ब्रह्माजीसे अधिष्ठित सातों भुवनोंकी रचना की है तथा जिन्होंने सम्पूर्ण लोकोंको अपने पुण्यपर ही प्रतिष्ठित किया है, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १३॥

यह सम्पूर्ण विश्व सदा ही जिनकी आज्ञाके अधीन है, जो (जल, अग्नि, यजमान, सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, वायु और प्रकृति—इन) आठ

य: कारणं सुमहतामपि कारणानां
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १४॥

शङ्खेन्दुकुन्दधवलं वृषभप्रवीर-
मारुह्य य: क्षितिधरेन्द्रसुतानुयात:।
यात्यम्बरे हिमविभूतिविभूषिताङ्ग-
स्तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १५॥

शान्तं मुनिं यमनियोगपरायणं तै-
र्भीमैर्यमस्य पुरुषै: प्रतिनीयमानम्।
भक्त्या नतं स्तुतिपरं प्रसभं ररक्ष
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १६॥

विग्रहोंसे समस्त लोकोंका उपभोग करते हैं तथा जो बड़े-से-बड़े कारण-तत्त्वोंके भी महाकारण हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १४॥

जो अपने श्रीविग्रहको हिम और भस्मसे विभूषित करके शङ्ख, चन्द्रमा और कुन्दके समान श्वेतवर्णवाले वृषभश्रेष्ठ नन्दीपर सवार होकर गिरिराजकिशोरी उमाके साथ आकाशमें विचरते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १५॥

यमराजकी आज्ञाके पालनमें लगे रहनेपर भी जिन्हें वे भयंकर यमदूत पकड़कर लिये जा रहे थे तथा जो भक्तिसे नम्र होकर स्तुति कर रहे थे, उन शान्त मुनिकी जिन्होंने बलपूर्वक यमदूतोंसे रक्षा की, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १६॥
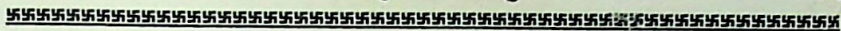
यः सव्यपाणिकमलाग्रनखेन देव-
स्तत् पञ्चमं प्रसभमेव पुरः सुराणाम्।
ब्राह्मं शिरस्तरुणपद्मनिभं चकर्त
तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १७॥
यस्य प्रणम्य चरणौ वरदस्य भक्त्या
स्तुत्वा च वाग्भिरमलाभिरतन्द्रिताभिः।
दीप्तैस्तमांसि नुदते स्वकरैर्विवस्वां-
स्तं शङ्करं शरणदं शरणं व्रजामि॥ १८॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे अवन्तीखण्डे अन्धककृता शिवस्तुतिः सम्पूर्णा॥

~~ * ~~

जिन्होंने समस्त देवताओंके सामने ही ब्रह्माजीके उस पाँचवें मस्तकको, जो नवीन कमलके समान शोभा पा रहा था, अपने बायें हाथके नखसे बलपूर्वक काट डाला था, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १७॥

जिन वरदायक भगवान्‌के चरणोंमें भक्तिपूर्वक प्रणाम करके तथा आलस्यरहित निर्मल वाणीके द्वारा जिनकी स्तुति करके सूर्यदेव अपनी उद्दीप्त किरणोंसे जगत्‌का अन्धकार दूर करते हैं, उन शरणदाता भगवान् श्रीशङ्करकी मैं शरण लेता हूँ॥ १८॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणमें अवन्तीखण्डमें अन्धककृत शिवस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

~~ * ~~

शिवस्तुतिः

स्कन्द उवाच

नमः शिवायास्तु निरामयाय नमः शिवायास्तु मनोमयाय।
नमः शिवायास्तु सुरार्चिताय तुभ्यं सदा भक्तकृपापराय॥ १॥
नमो भवायास्तु भवोद्भवाय नमोऽस्तु ते ध्वस्तमनोभवाय।
नमोऽस्तु ते गूढमहाव्रताय नमोऽस्तु मायागहनाश्रयाय॥ २॥
नमोऽस्तु शर्वाय नमः शिवाय नमोऽस्तु सिद्धाय पुरातनाय।
नमोऽस्तु कालाय नमः कलाय नमोऽस्तु ते कालकलातिगाय॥ ३॥

स्कन्दजी बोले—जो सब प्रकारके रोग-शोकसे रहित हैं, उन कल्याणस्वरूप भगवान् शिवको नमस्कार है। जो सबके भीतर मनरूपसे निवास करते हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है। सम्पूर्ण देवताओंसे पूजित भगवान् शङ्करको नमस्कार है। भक्तजनोंपर निरन्तर कृपा करनेवाले आप भगवान् महेश्वरको नमस्कार है॥ १॥

सबकी उत्पत्तिके कारण भगवान् भवको नमस्कार है। भगवन्! आप भवके उद्भव (संसारके स्रष्टा) हैं, आपको नमस्कार है। कामदेवका विध्वंस करनेवाले आपको नमस्कार है। आप गूढ़भावसे महान् व्रतका पालन करनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप मायारूपी गहन वनके आश्रय हैं अथवा सबको आश्रय देनेवाला आपका स्वरूप योगमायासमावृत होनेके कारण दुर्बोध है, आपको नमस्कार है॥ २॥

प्रलयकालमें जगत्का संहार करनेवाले 'शर्व' नामधारी आपको नमस्कार है। शिवरूप आपको नमस्कार है। आप पुरातन सिद्धरूप हैं, आपको नमस्कार है। कालरूप आपको नमस्कार है। आप सबकी कलना (गणना) करनेवाले होनेके कारण 'कल' नामसे प्रसिद्ध हैं, आपको नमस्कार है। आप कालकी कलाका अतिक्रमण करके उससे बहुत दूर रहते हैं, आपको नमस्कार है॥ ३॥
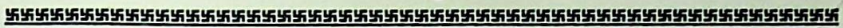
नमो निसर्गात्मकभूतिकाय नमोऽस्त्वमेयोक्षमहर्द्धिकाय।
नमः शरण्याय नमोऽगुणाय नमोऽस्तु ते भीमगुणानुगाय॥ ४॥
नमोऽस्तु नानाभुवनाधिकर्त्रे नमोऽस्तु भक्ताभिमतप्रदात्रे।
नमोऽस्तु कर्मप्रसवाय धात्रे नमः सदा ते भगवन् सुकर्त्रे॥ ५॥
अनन्तरूपाय सदैव तुभ्यमसह्यकोपाय सदैव तुभ्यम्।
अमेयमानाय नमोऽस्तु तुभ्यं वृषेन्द्रयानाय नमोऽस्तु तुभ्यम्॥ ६॥
नमः प्रसिद्धाय महौषधाय नमोऽस्तु ते व्याधिगणापहाय।
चराचरायाथ विचारदाय कुमारनाथाय नमः शिवाय॥ ७॥

आप स्वाभाविक ऐश्वर्यसे सम्पन्न हैं, आपको नमस्कार है। आप अप्रमेय महिमावाले वृषभ तथा महासमृद्धिसे सम्पन्न हैं, आपको नमस्कार है। आप सबको शरण देनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप ही निर्गुण ब्रह्म हैं, आपको नमस्कार है। आपके अनुगामी सेवक भयानक गुणसम्पन्न हैं, आपको नमस्कार है॥ ४॥

नाना भुवनोंपर अधिकार रखनेवाले आपको नमस्कार है। भक्तोंको मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले आपको नमस्कार है। भगवन्! आप ही कर्मोंका फल देनेवाले हैं, आपको नमस्कार है। आप ही सबका धारण-पोषण करनेवाले धाता तथा उत्तम कर्ता हैं, आपको सर्वदा नमस्कार है॥ ५॥

आपके अनन्त रूप हैं, आपका कोप सबके लिये असह्य है, आपको सदैव नमस्कार है। आपके स्वरूपका कोई माप नहीं हो सकता, आपको नमस्कार है। वृषभेन्द्रको अपना वाहन बनानेवाले आप भगवान् महेश्वरको नमस्कार है॥ ६॥

आप सुप्रसिद्ध महौषधरूप हैं, आपको नमस्कार है। समस्त व्याधियोंका विनाश करनेवाले आपको नमस्कार है। आप चराचरस्वरूप, सबको विचार तत्त्वनिर्णयात्मिका शक्ति देनेवाले, कुमारनाथके नामसे प्रसिद्ध तथा परम कल्याणस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है॥ ७॥

ममेश भूतेश महेश्वरोऽसि कामेश वागीश बलेश धीश।
क्रोधेश मोहेश परापरेश नमोऽस्तु मोक्षेश गुहाशयेश॥ ८ ॥

शिव उवाच

ये च सायं तथा प्रातस्त्वत्कृतेन स्तवेन माम्।
स्तोष्यन्ति परया भक्त्या शृणु तेषां च यत्फलम्॥ ९॥
न व्याधिर्न च दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम्।
भुक्त्वा भोगान् दुर्लभांश्च मम यास्यन्ति सद्म ते॥ १०॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे कुमारिकाखण्डे शिवस्तुतिः सम्पूर्णा॥

प्रभो! आप मेरे स्वामी हैं, सम्पूर्ण भूतोंके ईश्वर एवं महेश्वर हैं। आप ही समस्त भोगोंके अधिपति हैं। वाणी, बल और बुद्धिके अधिपति भी आप ही हैं। आप ही क्रोध और मोहपर शासन करनेवाले हैं। पर और अपर (कारण और कार्य)-के स्वामी भी आप ही हैं। सबकी हृदयगुहामें निवास करनेवाले परमेश्वर तथा मुक्तिके अधीश्वर भी आप ही हैं, आपको नमस्कार है॥ ८॥

शिवजीने कहा—जो लोग सायंकाल और प्रातःकाल पूर्ण भक्तिपूर्वक तुम्हारे द्वारा की हुई इस स्तुतिसे मेरा स्तवन करेंगे, उनको जो फल प्राप्त होगा, उसका वर्णन करता हूँ, सुनो—उन्हें कोई रोग नहीं होगा, दरिद्रता भी नहीं होगी तथा प्रिय जनोंसे कभी वियोग भी न होगा। वे इस संसारमें दुर्लभ भोगोंका उपभोग करके मेरे परमधामको प्राप्त करेंगे॥ ९-१०॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके कुमारिकाखण्डमें शिवस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

शम्भुस्तुतिः

श्रीराम उवाच

नमामि शम्भुं पुरुषं पुराणं नमामि सर्वज्ञमपारभावम्।
नमामि रुद्रं प्रभुमक्षयं तं नमामि शर्वं शिरसा नमामि॥ १॥
नमामि देवं परमव्ययं तमुमापतिं लोकगुरुं नमामि।
नमामि दारिद्र्यविदारणं तं नमामि रोगापहरं नमामि॥ २॥
नमामि कल्याणमचिन्त्यरूपं नमामि विश्वोद्भवबीजरूपम्।
नमामि विश्वस्थितिकारणं तं नमामि संहारकरं नमामि॥ ३॥
नमामि गौरीप्रियमव्ययं तं नमामि नित्यं क्षरमक्षरं तम्।
नमामि चिद्रूपममेयभावं त्रिलोचनं तं शिरसा नमामि॥ ४॥

श्रीराम बोले—मैं पुराणपुरुष शम्भुको नमस्कार करता हूँ। जिनकी असीम सत्ताका कहीं पार या अन्त नहीं है, उन सर्वज्ञ शिवको मैं प्रणाम करता हूँ। अविनाशी प्रभु रुद्रको नमस्कार करता हूँ। सबका संहार करनेवाले शर्वको मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ॥ १॥

अविनाशी परमदेवको नमस्कार करता हूँ। लोकगुरु उमापतिको प्रणाम करता हूँ। दरिद्रताको विदीर्ण करनेवाले [शिव]-को नमस्कार करता हूँ। रोगोंका विनाश करनेवाले महेश्वरको प्रणाम करता हूँ॥ २॥

जिनका रूप चिन्तनका विषय नहीं है, उन कल्याणमय शिवको नमस्कार करता हूँ। विश्वकी उत्पत्तिके बीजरूप भगवान् भवको प्रणाम करता हूँ। जगत्का पालन करनेवाले परमात्माको नमस्कार करता हूँ। संहारकारी रुद्रको नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ॥ ३॥

पार्वतीजीके प्रियतम अविनाशी प्रभुको नमस्कार करता हूँ। नित्य क्षर-अक्षरस्वरूप शङ्करको प्रणाम करता हूँ। जिनका स्वरूप चिन्मय है और अप्रमेय है, उन भगवान् त्रिलोचनको मैं मस्तक झुकाकर बारम्बार नमस्कार करता हूँ॥ ४॥

नमामि कारुण्यकरं भवस्य भयंकरं वाऽपि सदा नमामि।
नमामि दातारमभीप्सितानां नमामि सोमेशमुमेशमादौ ॥ ५ ॥
नमामि वेदत्रयलोचनं तं नमामि मूर्तित्रयवर्जितं तम्।
नमामि पुण्यं सदसद्व्यतीतं नमामि तं पापहरं नमामि ॥ ६ ॥
नमामि विश्वस्य हिते रतं तं नमामि रूपाणि बहूनि धत्ते।
यो विश्वगोप्ता सदसत्प्रणेता नमामि तं विश्वपतिं नमामि ॥ ७ ॥
यज्ञेश्वरं सम्प्रति हव्यकव्यं तथागतिं लोकसदाशिवो यः।
आराधितो यश्च ददाति सर्वं नमामि दानप्रियमिष्टदेवम् ॥ ८ ॥

करुणा करनेवाले भगवान् शिवको प्रणाम करता हूँ तथा संसारको भय देनेवाले भगवान् भूतनाथको सर्वदा नमस्कार करता हूँ। मनोवाञ्छित फलोंके दाता महेश्वरको प्रणाम करता हूँ। भगवती उमाके स्वामी श्रीसोमनाथको नमस्कार करता हूँ॥ ५ ॥

तीनों वेद जिनके तीन नेत्र हैं, उन त्रिलोचनको प्रणाम करता हूँ। त्रिविध मूर्तिसे रहित सदाशिवको नमस्कार करता हूँ। पुण्यमय शिवको प्रणाम करता हूँ। सत्-असत्से पृथक् परमात्माको नमस्कार करता हूँ। पापोंको नष्ट करनेवाले भगवान् हरको प्रणाम करता हूँ॥ ६ ॥

जो विश्वके हितमें लगे रहते हैं, बहुत-से रूप धारण करते हैं, उन भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। जो संसारके रक्षक तथा सत् और असत्के निर्माता हैं, उन विश्वपति (भगवान् विश्वनाथ)-को मैं नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ॥ ७ ॥

हव्य-कव्यस्वरूप यज्ञेश्वरको नमस्कार करता हूँ। सम्पूर्ण लोकोंका सर्वदा कल्याण करनेवाले जो भगवान् शिव आराधना करनेपर उत्तम गति एवं सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ प्रदान करते हैं, उन दानप्रिय इष्टदेवको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ८ ॥

नमामि सोमेश्वरमस्वतन्त्रमुमापतिं तं विजयं नमामि।
नमामि विघ्नेश्वरनन्दिनाथं पुत्रप्रियं तं शिरसा नमामि॥ ९ ॥
नमामि देवं भवदुःखशोकविनाशनं चन्द्रधरं नमामि।
नमामि गङ्गाधरमीशमीड्यमुमाधवं देववरं नमामि॥ १०॥
नमाम्यजादीशपुरन्दरादिसुरासुरैरर्चितपादपद्मम् ।
नमामि देवीमुखवादनानामीक्षार्थमक्षित्रितयं य ऐच्छत्॥ ११॥
पञ्चामृतैर्गन्धसुधूपदीपैर्विचित्रपुष्पैर्विविधैश्च मन्त्रैः।
अन्नप्रकारैः सकलोपचारैः सम्पूजितं सोममहं नमामि॥ १२॥

॥ इति श्रीब्रह्मपुराणे शम्भुस्तुतिः सम्पूर्णा॥

~~ ❋ ~~

भगवान् सोमनाथको प्रणाम करता हूँ। जो स्वतन्त्र न रहकर भक्तोंके वश रहते हैं, उन विजयशील उमानाथको मैं नमस्कार करता हूँ। विघ्नराज गणेश तथा नन्दीके स्वामी पुत्रप्रिय भगवान् शिवको मैं मस्तक झुकाकर प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

संसारके दुःख और शोकका नाश करनेवाले देवता भगवान् चन्द्रशेखरको मैं बारम्बार नमस्कार करता हूँ। जो स्तुति करनेयोग्य और मस्तकपर गङ्गाजीको धारण करनेवाले हैं, उन महेश्वरको नमस्कार करता हूँ। देवताओंमें श्रेष्ठ उमापतिको प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

ब्रह्मा आदि ईश्वर, इन्द्र आदि देवता तथा असुर भी जिनके चरण-कमलोंकी पूजा करते हैं, उन भगवान्‌को मैं नमस्कार करता हूँ। जिन्होंने पार्वतीदेवीके मुखसे निकलनेवाले वचनोंपर दृष्टिपात करनेकी इच्छासे मानो तीन नेत्र धारण कर रखे हैं, उन भगवान्‌को प्रणाम करता हूँ॥ ११॥

पञ्चामृत, चन्दन, उत्तम धूप, दीप, भाँति-भाँतिके विचित्र पुष्प, मन्त्र तथा अन्न आदि समस्त उपचारोंसे पूजित भगवान् सोमको मैं नमस्कार करता हूँ॥ १२॥

॥ इस प्रकार श्रीब्रह्मपुराणमें शम्भुस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

~~ ❋ ~~

महादेवस्तुतिः

बृहस्पतिरुवाच

जय शङ्कर शान्त शशाङ्करुचे रुचिरार्थद सर्वद सर्वशुचे।
शुचिदत्तगृहीतमहोपहृते हृतभक्तजनोद्धततापतते॥ १॥
ततसर्वहृदम्बर वरद नते नतवृजिनमहावनदाहकृते।
कृतविविधचरित्रतनो सुतनो तनुविशिखविशोषणधैर्यनिधे॥ २॥
निधनादिविवर्जित कृतनतिकृत् कृतिविहितमनोरथपन्नगभृत्।
नगभर्तृसुतार्पितवामवपुः स्ववपुः परिपूरितसर्वजगत्॥ ३॥

बृहस्पतिजी बोले—चन्द्रमाके समान गौर कान्तिवाले, शान्तस्वरूप शङ्कर! आपकी जय हो। आप रुचिके अनुकूल मनोहर पदार्थों एवं चारों पुरुषार्थोंको देनेवाले हैं। सर्वस्वरूप, सब कुछ देनेवाले तथा नित्य शुद्ध हैं। पवित्र भक्तोंद्वारा शुद्ध भावसे दी हुई महती उपहार-सामग्री ग्रहण करते हैं। भक्तजनोंपर आयी हुई घोर संताप-परम्पराका आप नाश करनेवाले हैं॥ १॥

आपने सबके हृदयाकाशको व्याप्त कर रखा है। प्रणतजनोंको आप मनोवाञ्छित वर देनेवाले हैं। शरणागत भक्तोंके पापरूपी महान् वनको जलानेके लिये दावानलस्वरूप हैं। अपने शरीरसे भाँति-भाँतिकी लीलाएँ करते रहते हैं। आपका श्रीअङ्ग परम सुन्दर है। आप कामदेवके बाणोंको सुखा देनेवाले हैं। धैर्यनिधे! आपकी जय हो॥ २॥

आप मृत्यु आदि विकारोंसे सर्वथा रहित हैं तथा अपने चरणोंमें प्रणाम करनेवाले भक्तजनोंको भी मृत्यु आदि विकारोंसे रहित कर देते हैं। पुण्यात्मा पुरुषोंका मनोरथ पूर्ण करते और सर्पोंको आभूषणरूपमें धारण करते हैं। आपका वामाङ्गभाग गिरिराजनन्दिनी उमासे व्याप्त है। आपने अपने सर्वव्यापी स्वरूपसे सम्पूर्ण जगत्को व्याप्त कर रखा है॥ ३॥
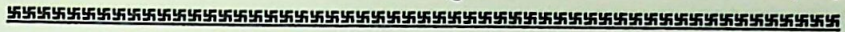
त्रिजगन्मयरूप विरूप सुदृग् दृगुदञ्चन कुञ्चनकृतहुतभुक्।
भव भूतपते प्रमथैकपते पतितेष्वपि दत्तकरप्रसृते॥ ४॥
प्रसृताखिलभूतलसंवरण प्रणवध्वनिसौधसुधांशुधर।
धरराजकुमारिकया परया परितः परितुष्ट नतोऽस्मि शिव॥ ५॥
शिव देव गिरीश महेश विभो विभवप्रद गिरिश शिवेश मृड।
मृडयोडुपतिध्र जगत् त्रितयं कृतयन्त्रणभक्तिविघातकृताम्॥ ६॥

तीनों लोक आपके ही स्वरूप हैं, फिर भी आप इन सभी रूपोंसे परे हैं। आपकी दृष्टि बड़ी सुन्दर है। आप अपने नेत्रोंके खोलने-मीचनेसे जगत्की सृष्टि और प्रलय करनेवाले हैं। आपने ही अग्निदेवको प्रकट किया है। जगत्को उत्पन्न करनेवाले भूतनाथ! एकमात्र आप ही प्रमथगणोंके पालक और स्वामी हैं। अपनी शरणमें आये हुए पतितजनोंपर भी आप अपना वरद हस्त फैलाते रहते हैं॥ ४॥

आप सम्पूर्ण भूतलमें फैले हुए आवरणका निवारण करनेवाले तथा प्रणवनादरूपी सुधाधौलिगृहमें निवास करनेवाले हैं। आपने चन्द्रमाको अपने ललाटमें धारण कर रखा है। गिरिराजकुमारी पार्वतीके द्वारा सर्वथा संतुष्ट रहनेवाले शिव! मैं आपको नमस्कार करता हूँ॥ ५॥

शिव! देव! गिरीश! महेश! विभो! आप विभव (धन-सम्पत्ति आदि) प्रदान करनेवाले और कैलास पर्वतपर शयन करनेवाले हैं। पार्वतीवल्लभ! आप सबको सुख देनेवाले हैं। चन्द्रधर! आप भक्तिका विघात करनेवाले दुष्टोंको कठोर दण्ड देनेवाले हैं। तीनों लोकोंको सुखी बनाइये॥ ६॥

न कृतान्तत एष विभेमि हर प्रहराशु महाघममोघमते।
न मतान्तरमन्यदवैमि शिवं शिवपादनतेः प्रणतोऽस्मि ततः॥ ७॥
विततेऽत्र जगत्यखिलेऽघहरं हरतोषणमेव परं गुणवत्।
गुणहीनमहीनमहावलयं प्रलयान्तकमीश नतोऽस्मि ततः॥ ८॥

इति स्तुत्वा महादेवं विररामाङ्गिरः सुतः।
व्यतरच्च महेशानः स्तुत्या तुष्टो वरान् बहून्॥ ९॥
बृहता तपसाऽनेन बृहतां पतिरेध्यहो।
नाम्ना बृहस्पतिरिति ग्रहेष्वर्च्यो भव द्विज॥ १०॥
अस्य स्तोत्रस्य पठनादपि वागुदियाच्च यम्।
तस्य स्यात् संस्कृता वाणी त्रिभिर्वर्षैस्त्रिकालतः॥ ११॥

सबकी पीडा हरनेवाले महादेव! मैं कालसे भी नहीं डरता। अमोघमते! आप शीघ्र मेरी पापराशिका विनाश कीजिये। शिवके चरणारविन्दोंमें नमस्कार करनेके सिवा दूसरी किसी विचारधाराको मैं जीवोंके लिये कल्याणकारी नहीं मानता, अतः आपके चरणोंमें ही मस्तक झुकाता हूँ॥ ७॥

इस सम्पूर्ण विशाल जगत्में भगवान् शिवको संतुष्ट करना ही सब पापोंका नाश करनेवाला तथा परम गुणकारी है। हे ईश! आप त्रिगुणमय प्रपञ्चसे अतीत, नागराज वासुकिका महान् कंगन धारण करनेवाले तथा प्रलयकालमें सबका विनाश करनेवाले हैं, अतः मैं आपको नमस्कार करता हूँ॥ ८॥

इस प्रकार महादेवजीकी स्तुति करके बृहस्पतिजी मौन हो गये। इस स्तुतिसे संतुष्ट होकर महादेवजीने बहुत-से वर प्रदान करते हुए कहा—'अहो ब्रह्मन्! तुमने बृहत् तप किया है, इसलिये बृहत् अर्थात् बड़े-बड़े देवताओंके पति (पालक) बने रहो। तुम ग्रहोंमें बृहस्पति नामसे पूजित होओ॥ ९-१०॥

जो पुरुष इस स्तोत्रका तीन वर्षोंतक तीनों समय पाठमात्र भी करेगा, उसके प्रति सरस्वती उदित और उसकी वाणी परिष्कृत हो जायगी॥ ११॥
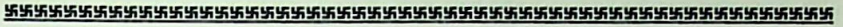
अस्य स्तोत्रस्य पठनान्नियतं मम संनिधौ।
न दुर्वृत्तौ प्रवृत्तिः स्यादविवेकवतां नृणाम्॥ १२॥
अदः स्तोत्रं पठञ्जन्तुर्जातु पीडां ग्रहोद्भवाम्।
न प्राप्स्यति ततो जप्यमिदं स्तोत्रं ममाग्रतः॥ १३॥
नित्यं प्रातः समुत्थाय यः पठिष्यति मानवः।
इमां स्तुतिं हरिष्येऽहं तस्य बाधाः सुदारुणाः॥ १४॥
त्वत्प्रतिष्ठितलिङ्गस्य पूजां कृत्वा प्रयत्नतः।
इमां स्तुतिमधीयानो मनोवाञ्छामवाप्स्यति॥ १५॥

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे काशीखण्डे महादेवस्तुतिः सम्पूर्णा॥

मेरी संनिधिमें निरन्तर इस स्तोत्रके पाठसे अविवेकीजनोंकी भी दुराचारमें प्रवृत्ति नहीं हो सकती॥ १२॥

महेश्वरके इस स्तोत्रका पाठ करनेसे मनुष्य ग्रहजनित पीडा प्राप्त नहीं करेगा, इसलिये मेरे समीप इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये॥ १३॥

जो मनुष्य प्रात:काल उठकर नित्य इस स्तोत्रका पाठ करेगा, मैं उसकी महान्-से-महान् दारुण बाधा हरण कर लूँगा॥ १४॥

तुम्हारे द्वारा [काशीमें] स्थापित की हुई इस मूर्ति [बृहस्पतीश्वर महादेव]-की प्रयत्नपूर्वक पूजा करके इस स्तुतिका पाठ करनेवाला मोवाञ्छित फल प्राप्त करेगा॥ १५॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दपुराणके काशीखण्डमें महादेवस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

महाकालस्तुतिः

ब्रह्मोवाच

नमोऽस्त्वनन्तरूपाय नीलकण्ठ नमोऽस्तु ते।
अविज्ञातस्वरूपाय कैवल्यायामृताय च॥ १॥
नान्तं देवा विजानन्ति यस्य तस्मै नमो नमः।
यं न वाचः प्रशंसन्ति नमस्तस्मै चिदात्मने॥ २॥
योगिनो यं हृदःकोशे प्रणिधानेन निश्चलाः।
ज्योतीरूपं प्रपश्यन्ति तस्मै श्रीब्रह्मणे नमः॥ ३॥
कालात्पराय कालाय स्वेच्छया पुरुषाय च।
गुणत्रयस्वरूपाय नमः प्रकृतिरूपिणे॥ ४॥

ब्रह्माजी बोले—हे नीलकण्ठ! आपके अनन्त रूप हैं, आपको बार-बार नमस्कार है। आपके स्वरूपका यथावत् ज्ञान किसीको नहीं है, आप कैवल्य एवं अमृतस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है॥ १॥

जिनका अन्त देवता नहीं जानते, उन भगवान् शिवको नमस्कार है, नमस्कार है। जिनकी प्रशंसा (गुणगान) करनेमें वाणी असमर्थ है, उन चिदात्मा शिवको नमस्कार है॥ २॥

योगी समाधिमें निश्चल होकर अपने हृदयकमलके कोषमें जिनके ज्योतिर्मय स्वरूपका दर्शन करते हैं, उन श्रीब्रह्मको नमस्कार है॥ ३॥

जो कालसे परे, कालस्वरूप, स्वेच्छासे पुरुषरूप धारण करनेवाले, त्रिगुणस्वरूप तथा प्रकृतिरूप हैं, उन भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥ ४॥

विष्णवे सत्त्वरूपाय रजोरूपाय वेधसे।
तमोरूपाय रुद्राय स्थितिसर्गान्तकारिणे॥ ५॥
नमो नमः स्वरूपाय पञ्चबुद्धीन्द्रियात्मने।
क्षित्यादिपञ्चरूपाय नमस्ते विषयात्मने॥ ६॥
नमो ब्रह्माण्डरूपाय तदन्तर्वर्तिने नमः।
अर्वाचीनपराचीनविश्वरूपाय ते नमः॥ ७॥
अचिन्त्यनित्यरूपाय सदसत्पतये नमः।
नमस्ते भक्तकृपया स्वेच्छाविष्कृतविग्रह॥ ८॥
तव निःश्वसितं वेदास्तव वेदोऽखिलं जगत्।
विश्वभूतानि ते पादः शिरो द्यौः समवर्तत॥ ९॥

हे जगत्‌की स्थिति, उत्पत्ति और संहार करनेवाले, सत्त्वस्वरूप विष्णु, रजोरूप ब्रह्मा और तमोरूप रुद्र! आपको नमस्कार है॥ ५॥

बुद्धि, इन्द्रियरूप तथा पृथ्वी आदि पञ्चभूत और शब्द-स्पर्शादि पञ्च विषयस्वरूप! आपको बार-बार नमस्कार है॥ ६॥

जो ब्रह्माण्डस्वरूप हैं और ब्रह्माण्डके अन्तः प्रविष्ट हैं तथा जो अर्वाचीन भी हैं और प्राचीन भी हैं एवं सर्वस्वरूप हैं, उन्हें नमस्कार है, नमस्कार है॥ ७॥

अचिन्त्य और नित्य स्वरूपवाले तथा सत्-असत्‌के स्वामिन्! आपको नमस्कार है। हे भक्तोंके ऊपर कृपा करनेके लिये स्वेच्छासे सगुण स्वरूप धारण करनेवाले! आपको नमस्कार है॥ ८॥

हे प्रभो! वेद आपके निःश्वास हैं, सम्पूर्ण जगत् आपका स्वरूप है। विश्वके समस्त प्राणी आपके चरणरूप हैं, आकाश आपका सिर है॥ ९॥

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं लोमानि च वनस्पतिः।
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यस्तव प्रभो॥ १०॥

त्वमेव सर्वं त्वयि देव सर्वं
सर्वस्तुतिस्तव्य इह त्वमेव।
ईश त्वया वास्यमिदं हि सर्वं
नमोऽस्तु भूयोऽपि नमो नमस्ते॥ ११॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे ब्रह्मखण्डे महाकालस्तुतिः सम्पूर्णा॥

हे नाथ! आपकी नाभिसे अन्तरिक्षकी स्थिति है, आपके लोम वनस्पति हैं। भगवन्! आपके मनसे चन्द्रमा और नेत्रोंसे सूर्यकी उत्पत्ति हुई है॥ १०॥

हे देव! आप ही सब कुछ हैं, आपमें ही सबकी स्थिति है। इस लोकमें सब प्रकारकी स्तुतियोंके द्वारा स्तवन करनेयोग्य आप ही हैं। हे ईश्वर! आपके द्वारा यह सम्पूर्ण विश्वप्रपञ्च व्याप्त है, आपको पुनः-पुनः नमस्कार है॥ ११॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके ब्रह्मखण्डमें महाकालस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

**आदि अनादि अनंत अखंड अभेद अखेद सुबेद बतावैं।
अलख अगोचर रूप महेस कौ जोगि जती-मुनि ध्यान न पावैं॥
आगम-निगम-पुरान सबै इतिहास सदा जिनके गुन गावैं।
बड़भागी नर-नारि सोई जो सांब-सदासिव कौं नित ध्यावैं॥**

(पद-रत्नाकर ९०१)

शिवताण्डवस्तुतिः

देवा दिक्पतयः प्रयात परतः खं मुञ्चताम्भोमुचः
पातालं व्रज मेदिनि प्रविशत क्षोणीतलं भूधराः।
ब्रह्मन्नुन्नय दूरमात्मभुवनं नाथस्य नो नृत्यतः
शम्भोः संकटमेतदित्यवतु वः प्रोत्सारणा नन्दिनः॥ १॥
दोर्दण्डद्वयलीलयाचलगिरिभ्राम्यत्तदुच्चै रव-
ध्वानोद्भीतजगद्भ्रमत्पदभरालोलत्फणाग्रयोरगम् ।

[नन्दीने भगवान् शङ्करका ताण्डव नृत्य निर्विघ्न चलनेके लिये कहा—]हे देवताओ! तथा दिक्पतियो! यहाँसे कहीं और दूर हट जाओ। जल बरसानेवाले बादलो! आकाशको छोड़ दो! पृथ्वि! तू पातालमें चली जा। पर्वतो! पृथ्वीके निचलेभागमें प्रवेश कर जाओ। ब्रह्मन्! तुम अपने लोकको कहीं दूर और ऊपर उठा ले जाओ; क्योंकि मेरे स्वामी भगवान् शङ्करके नृत्य करनेके समयमें तुम सब संकट रूप हो। इस प्रकार लोगोंको दूर जानेके लिये की गयी नन्दीकी घोषणा आप सबकी रक्षा करे॥ १॥

ताण्डव नृत्य करते समय जब भगवान् शिव अपनी दोनों भुजाओंको लीलापूर्वक घुमाने लगे तो उन भुजाओंके घुमानेसे अचल पर्वत भी घूमने लगे। उनके घूमनेसे जो ध्वनि होती थी, वह बड़ी ही ऊँची आवाजमें होती थी। उससे संसार भयभीत हो जाता था और जब पाद-विक्षेप करते थे तो उसके भारसे शेषनागका अग्रय—ऊपरी फण भी

भृङ्गापिङ्गजटाटवीपरिसरोद्‌गङ्गोर्मिमालाचल-
च्चन्द्रं चारु महेश्वरस्य भवतान्नः श्रेयसे ताण्डवम्॥ २॥
संध्याताण्डवडम्बरव्यसनिनो भर्गस्य चण्डभ्रमि-
व्यानृत्यद्‌भुजदण्डमण्डलभुवो झञ्झानिलाः पान्तु वः।
येषामुच्छलतां जवेन झटिति व्यूहेषु भूमीभृता-
मुड्डीनेषु विडौजसा पुनरसौ दम्भोलिरालोकिता॥ ३॥
शर्वाणीपाणितालैश्चलवलयझणत्कारिभिः श्लाघ्यमानं
स्थाने सम्भाव्यमानं पुलकितवपुषा शम्भुना प्रेक्षकेण।

आन्दोलित—चञ्चल हो जाता था। इस प्रकार भृंगके समान कृष्ण एवं पीले जटासमूहोंसे गङ्गाजीकी अनवरत चलती हुई लहरोंसे चञ्चल चन्द्रमावाले महेश्वरका ताण्डव नृत्य हम सभीके लिये कल्याणकारी हो॥ २॥

संध्याकालिक ताण्डव नृत्यमें डम्बर—चहल-पहल होनेके व्यसनी भगवान् शङ्कर जब अपने दोनों भुजदण्डोंको पृथ्वीके चारों ओर घुमाते तथा प्रचण्डरूपमें नाचते हुए चक्कर काटने लगे तो सहसा उनके वेगपूर्वक उछलनेके कारण स्थान-स्थानपर पर्वतोंके उड़नेसे हुई आवाजके डरसे इन्द्रने भी एक बार फिर अपने वज्रको चलानेकी दृष्टिसे वज्रकी ओर देखा। तत्कालीन ताण्डव नृत्यसे होनेवाली भुजदण्डोंकी झंझावात आपलोगोंकी रक्षा करे॥ ३॥

जब श्रीगणेशजीके अङ्ग पूर्ण हो गये, तब क्रौञ्चके भेत्ता तरुण मयूरके वाही कार्तिकेयका मन प्रसन्नतासे आन्दोलित हो उठा और उनका वाहन मयूर केकाध्वनिके साथ नाचने लगा, तब भगवती पार्वती
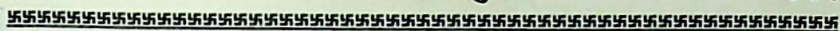
खेलत्पिच्छालिकेकाकलकलकलितं क्रौञ्चभिद्बर्हियूनो
हेरम्बाकाण्डबृंहातरलितमनसस्ताण्डवं त्वा धुनोतु॥ ४॥
देवस्त्रैगुण्यभेदात् सृजति वितनुते संहरत्येष लोका-
नस्यैव व्यापिनीभिस्तनुभिरपि जगद्व्याप्तमष्टाभिरेव।
वन्द्यो नास्येति पश्यन्निव चरणगतः पातु पुष्पाञ्जलिर्वः
शम्भोर्नृत्यावतारे वलयफणिफणाफूत्कृतैर्विप्रकीर्णः॥ ५॥

॥ इति शिवताण्डवस्तुतिः सम्पूर्णा॥

अपने दोनों करतलोंके बजानेके कारण हुई चञ्चल वलयोंकी झनकारसे उसकी प्रशंसा करने लगीं। उचित समय देखकर भगवान् शङ्कर भी प्रेक्षकके रूपमें पुलकित-मन हो, उसे आदर देने लगे। ऐसे भगवान् शिवका ताण्डव तुम्हें आनन्दित करे॥ ४॥

यह जगत् भगवान् शिवकी आठ मूर्तियोंसे व्याप्त है। ये ही भगवान् शङ्कर सत्-रज-तम—इन तीन गुणोंका आधार बनकर लोकोंकी सृष्टि, पालन और संहार भी करते हैं। भगवान् शिव नृत्य करनेसे पूर्व जब अपने इष्टदेवको पुष्पाञ्जलि समर्पित करते हैं तो वह पुष्पाञ्जलि, इनसे बड़ा और कोई वन्दनीय नहीं है—यह देखती हुई करमें कंकणके रूपमें लिपटे सर्पोंकी फुँफकारसे बिखर कर भगवान् शिवके चरणोंका स्पर्श करती है, ऐसी पुष्पाञ्जलि आप सबकी रक्षा करे॥ ५॥

॥ इस प्रकार शिवताण्डवस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

श्रीविश्वनाथमङ्गलस्तोत्रम्

गङ्गाधरं शशिकिशोरधरं त्रिलोकी-
रक्षाधरं निटिलचन्द्रधरं त्रिधारम्।
भस्मावधूलनधरं गिरिराजकन्या-
दिव्यावलोकनधरं वरदं प्रपद्ये॥ १॥

काशीश्वरं सकलभक्तजनार्तिहारं
विश्वेश्वरं प्रणतपालनभव्यभारम्।
रामेश्वरं विजयदानविधानधीरं
गौरीश्वरं वरदहस्तधरं नमामः॥ २॥

गङ्गोत्तमाङ्गकलितं ललितं विशालं
तं मङ्गलं गरलनीलगलं ललामम्।

गङ्गा एवं बाल चन्द्रको धारण करनेवाले, त्रिलोकीकी रक्षा करनेवाले, मस्तकपर चन्द्रमा एवं त्रिधार (गङ्गा)-को धारण करनेवाले, भस्मका उद्धूलन करनेवाले तथा पार्वतीको दिव्य दृष्टिसे देखनेवाले, वरदाता भगवान् शङ्करकी मैं शरणमें हूँ॥ १॥

काशीके ईश्वर, सम्पूर्ण भक्तजनकी पीडाको दूर करनेवाले, विश्वेश्वर, प्रणतजनोंकी रक्षाका भव्य भार धारण करनेवाले, भगवान् रामके ईश्वर, विजय प्रदानके विधानमें धीर एवं वरद मुद्रा धारण करनेवाले, भगवान् गौरीश्वरको हम प्रणाम करते हैं॥ २॥

जिनके उत्तमाङ्गमें गङ्गाजी सुशोभित हो रही हैं, जो सुन्दर तथा विशाल हैं, जो मङ्गलस्वरूप हैं, जिनका कण्ठ हालाहल विषसे
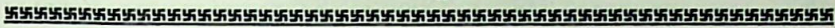
श्रीमुण्डमाल्यवलयोज्ज्वलमञ्जुलीलं
लक्ष्मीश्वरार्चितपदाम्बुजमाभजामः ॥ ३ ॥
दारिद्र्यदुःखदहनं कमनं सुराणां
दीनार्तिदावदहनं दमनं रिपूणाम्।
दानं श्रियां प्रणमनं भुवनाधिपानां
मानं सतां वृषभवाहनमानमामः ॥ ४ ॥
श्रीकृष्णचन्द्रशरणं रमणं भवान्याः
शश्वत्प्रपन्नभरणं धरणं धरायाः।
संसारभारहरणं करुणं वरेण्यं
संतापतापकरणं करवै शरण्यम्॥ ५ ॥
चण्डीपिचण्डिलवितुण्डधृताभिषेकं
श्रीकार्तिकेयकलनृत्यकलावलोकम्।

नीलवर्णका होनेसे सुन्दर है, जो मुण्डकी माला धारण करनेवाले, कङ्कणसे उज्ज्वल तथा मधुर लीला करनेवाले हैं, विष्णुके द्वारा पूजित चरणकमलवाले भगवान् शङ्करको हम भजते हैं॥ ३ ॥

दारिद्र्य एवं दुःखका विनाश करनेवाले, देवताओंमें सुन्दर, दीनोंकी पीडाको विनष्ट करनेके लिये दावानलस्वरूप, शत्रुओंका विनाश करनेवाले, समस्त ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले, भुवनाधिपोंके प्रणम्य और सत्पुरुषोंके मान्य वृषभवाहन भगवान् शङ्करको हम भलीभाँति प्रणाम करते हैं॥ ४ ॥

श्रीकृष्णचन्द्रजीके शरण, भवानीके पति, शरणागतका सदा भरण करनेवाले, पृथ्वीको धारण करनेवाले, संसारके भारको हरण करनेवाले, करुण, वरेण्य तथा संतापको नष्ट करनेवाले भगवान् शङ्करकी मैं शरण ग्रहण करता हूँ॥ ५ ॥

चण्डी, पिचण्डिल तथा गणेशके शुण्डद्वारा अभिषिक्त,

नन्दीश्वरास्यवरवाद्यमहोत्सवाढ्यं

सोल्लासहासगिरिजं गिरिशं तमीडे॥ ६॥

श्रीमोहिनीनिविडरागभरोपगूढं

योगेश्वरेश्वरहृदम्बुजवासरासम्।

सम्मोहनं गिरिसुताञ्चितचन्द्रचूडं

श्रीविश्वनाथमधिनाथमुपैमि नित्यम्॥ ७॥

आपद् विनश्यति समृध्यति सर्वसम्पद्

विघ्नाः प्रयान्ति विलयं शुभमभ्युदेति।

योग्याङ्गनाप्तिरतुलोत्तमपुत्रलाभो

विश्वेश्वरस्तवमिमं पठतो जनस्य॥ ८॥

वन्दी विमुक्तिमधिगच्छति तूर्णमेति

स्वास्थ्यं रुजार्दित उपैति गृहं प्रवासी।

कार्तिकेयके सुन्दर नृत्यकलाका अवलोकन करनेवाले, नन्दीश्वरके मुखरूपी श्रेष्ठ वाद्यसे प्रसन्न रहनेवाले तथा सोल्लास गिरिजाको हँसानेवाले भगवान् गिरीशकी मैं स्तुति करता हूँ॥ ६॥

श्रीमोहिनीके द्वारा उत्कट एवं पूर्ण प्रीतिसे आलिङ्गित, योगेश्वरोंके ईश्वरके हृत्कमलमें रासके द्वारा नित्य निवास करनेवाले, मोह उत्पन्न करनेवाले, पार्वतीके द्वारा पूजित शशिशेखर, सर्वेश्वर श्रीविश्वनाथको मैं नित्य नमस्कार करता हूँ॥ ७॥

इस विश्वेश्वरके स्तोत्रका पाठ करनेवाले मनुष्यकी आपत्ति दूर हो जाती है, वह सभी सम्पत्तिसे परिपूर्ण हो जाता है, उसके विघ्न दूर हो जाते हैं तथा वह सब प्रकारका कल्याण प्राप्त करता है, उसे उत्तम स्त्रीरत्न तथा अनुपम उत्तम पुत्रका लाभ होता है॥ ८॥

इस विश्वेश्वरस्तवका पाठ करनेसे बन्धनमें पड़ा मनुष्य बन्धनसे मुक्त हो जाता है, रोगसे पीडित व्यक्ति शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त करता है,
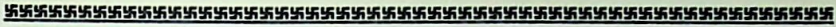
विद्यायशोविजय इष्टसमस्तलाभः
सम्पद्यतेऽस्य पठनात् स्तवनस्य सर्वम्॥ ९ ॥

कन्या वरं सुलभते पठनादमुष्य
स्तोत्रस्य धान्यधनवृद्धिसुखं समिच्छन्।

किं च प्रसीददति विभुः परमो दयालुः
श्रीविश्वनाथ इह सम्भजतोऽस्य साम्बः॥ १०॥

काशीपीठाधिनाथेन शङ्कराचार्यभिक्षुणा।
महेश्वरेण ग्रथिता स्तोत्रमाला शिवार्पिता॥ ११॥

॥ इति काशीपीठाधीश्वरशङ्कराचार्यश्रीस्वामिमहेश्वरानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीविश्वनाथमङ्गलस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

~~ ❋ ~~

प्रवासी शीघ्र ही विदेशसे घर आ जाता है तथा विद्या, यश, विजय और समस्त अभिलाषाओंकी पूर्ति हो जाती है॥ ९॥

इस स्तोत्रका पाठ करनेसे कन्या उत्तम वर प्राप्त करती है, धन-धान्यकी वृद्धि तथा सुखकी अभिलाषा पूर्ण होती है एवं उसपर व्यापक परम दयालु भगवान् श्रीविश्वेश्वर पार्वतीके सहित प्रसन्न हो जाते हैं॥ १०॥

काशीपीठके शङ्कराचार्यपदपर प्रतिष्ठित श्रीस्वामी महेश्वरानन्दजीने इस स्तोत्रमालाकी रचना कर भगवान् विश्वनाथको समर्पित किया॥ ११॥

॥ इस प्रकार काशीपीठाधीश्वर शङ्कराचार्य श्रीस्वामी महेश्वरानन्दसरस्वतीविरचित श्रीविश्वनाथमङ्गलस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

~~ ❋ ~~

श्रीकाशीविश्वेश्वरादिस्तोत्रम्

नमः श्रीविश्वनाथाय देववन्द्यपदाय ते।
काशीशेशावतारो मे देवदेव ह्युपादिश॥ १॥
मायाधीशं महात्मानं सर्वकारणकारणम्।
वन्दे तं माधवं देवं यः काशीं चाधितिष्ठति॥ २॥
वन्दे तं धर्मगोप्तारं सर्वगुह्यार्थवेदिनम्।
गणदेवं ढुण्ढिराजं तं महान्तं सुविघ्नहम्॥ ३॥
भारं वोढुं स्वभक्तानां यो योगं प्राप्त उत्तमम्।
तं सढुण्ढिं दण्डपाणिं वन्दे गङ्गातटस्थितम्॥ ४॥

हे देवदेव! आपने काशीमें शासन करनेके हेतु मङ्गलमूर्ति शिवके रूपमें अवतार लिया है। आप विश्वके नाथ हैं, देवता आपके चरणोंकी वन्दना करते हैं, आप मुझे उपदेश दें, आपको नमस्कार है॥ १॥

जो मायाके अधीश्वर हैं, महान् आत्मा हैं, सभी कारणोंके कारण हैं और जो काशीको सदा अपना अधिष्ठान बनाये हुए हैं, ऐसे उन भगवान् माधवको मैं प्रणाम करता हूँ॥ २॥

जो बड़े-से-बड़े विघ्नको अनायास ही बिना किसी प्रकारका श्रम किये ही नष्ट कर देते हैं, धर्मके रक्षक और सभी गुह्य (रहस्यपूर्ण) अर्थोंके वेत्ता हैं, ऐसे उन महान् ढुण्ढिराज गणपतिको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

जिन्होंने अपने भक्तोंका भार वहन करनेके लिये उत्तम योग प्राप्त किया है, ऐसे गङ्गातटपर स्थित उन ढुण्ढिराजसहित भगवान् दण्डपाणिको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ४॥

भैरवं दंष्ट्राकरालं भक्ताभयकरं भजे।
दुष्टदण्डशूलशीर्षधरं वामाध्वचारिणम्॥ ५॥
श्रीकाशीं पापशमनीं दमनीं दुष्टचेतसः।
स्वर्निःश्रेणिं चाविमुक्तपुरीं मर्त्यहितां भजे॥ ६॥
नमामि चतुराराध्यां सदाऽणिम्नि स्थितिं गुहाम्।
श्रीगङ्गे भैरवीं दूरीकुरु कल्याणि यातनाम्॥ ७॥
भवानि रक्षान्नपूर्णे सद्वर्णितगुणेऽम्बिके।
देवर्षिवन्द्याम्बुमणिकर्णिकां मोक्षदां भजे॥ ८॥

॥ इति श्रीकाशीविश्वेश्वरादिस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

बड़ी-बड़ी दाढ़ोंवाले, भक्तोंको अभय कर देनेवाले, वाममार्गका आचरण करनेवाले, दुष्टोंको दण्ड देनेके लिये शूल तथा शीर्ष (कपाल) धारण करनेवाले भगवान् भैरवको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

श्रीकाशी पापोंका शमन तथा दुष्टचित्तवालोंका दमन करनेवाली और स्वर्गकी सीढ़ी है। यह भगवान् शिवके द्वारा कभी न परित्याग किये जानेवाली है, (इसीलिये इसे 'अविमुक्तपुरी' कहा जाता है), मृत्युलोकके प्राणियोंके लिये यह हितकारिणी है। इस पुरीका मैं सेवन करता हूँ॥ ६॥

विद्वानोंद्वारा आराध्य, अणिमा ऐश्वर्यमें स्थित गुहाको मैं नमस्कार करता हूँ। हे कल्याणस्वरूपिणी गङ्गे! आप मेरी भैरवी यातनाको दूर कर दें॥ ७॥

हे अन्नपूर्णे, हे अम्बिके, हे सत्पुरुषोंके द्वारा वर्णित गुणोंवाली भवानि! आप हमारी रक्षा कीजिये। देवताओं और ऋषियोंद्वारा वन्द्य तथा समस्त संसारको मोक्ष प्रदान करनेवाली जलमयी मणिकर्णिकाका मैं सेवन करता हूँ॥ ८॥

॥ इस प्रकार श्रीकाशीविश्वेश्वरादि स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

अर्धनारीनटेश्वरस्तोत्रम्

चाम्पेयगौरार्धशरीरकायै कर्पूरगौरार्धशरीरकाय।
धम्मिल्लकायै च जटाधराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ १
कस्तूरिकाकुङ्कुमचर्चितायै चितारजःपुञ्जविचर्चिताय।
कृतस्मरायै विकृतस्मराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ २
चलत्क्वणत्कङ्कणनूपुरायै पादाब्जराजत्फणिनूपुराय।
हेमाङ्गदायै भुजगाङ्गदाय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ३

आधे शरीरमें चम्पापुष्पों-सी गोरी पार्वतीजी हैं और आधे शरीरमें कर्पूरके समान गोरे भगवान् शङ्करजी सुशोभित हो रहे हैं। भगवान् शङ्कर जटा धारण किये हैं और पार्वतीजीके सुन्दर केशपाश सुशोभित हो रहे हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको प्रणाम है॥ १॥

भगवती पार्वतीके शरीरमें कस्तूरी और कुङ्कुमका लेप लगा है और भगवान् शङ्करके शरीरमें चिता-भस्मका पुञ्ज लगा है। भगवती कामदेवको जिलानेवाली हैं और भगवान् शङ्कर उसे नष्ट करनेवाले हैं, ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको प्रणाम है॥ २॥

भगवती पार्वतीके हाथोंमें कङ्कण और पैरोंमें नूपुरोंकी ध्वनि हो रही है तथा भगवान् शङ्करके हाथों और पैरोंमें सर्पोंके फुफकारकी ध्वनि हो रही है। भगवती पार्वतीकी भुजाओंमें सुवर्णके बाजूबन्द सुशोभित हो रहे हैं और भगवान् शङ्करकी भुजाओंमें सर्प सुशोभित हो रहे हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको प्रणाम है॥ ३॥
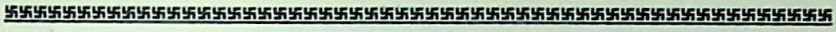
विशालनीलोत्पललोचनायै विकासिपङ्केरुहलोचनाय।
समेक्षणायै विषमेक्षणाय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ४
मन्दारमालाकलितालकायै कपालमालाङ्कितकन्धराय।
दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ५
अम्भोधरश्यामलकुन्तलायै तडित्प्रभाताम्रजटाधराय।
निरीश्वरायै निखिलेश्वराय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ६
प्रपञ्चसृष्ट्युन्मुखलास्यकायै समस्तसंहारकताण्डवाय।
जगज्जनन्यैजगदेकपित्रे नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ७

भगवती पार्वतीके नेत्र प्रफुल्लित नीले कमलके समान सुन्दर हैं और भगवान् शङ्करके नेत्र विकसित कमलके समान हैं। भगवती पार्वतीके दो सुन्दर नेत्र हैं और भगवान् शङ्करके (सूर्य, चन्द्रमा तथा अग्नि—ये) तीन नेत्र हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको प्रणाम है॥ ४॥

मन्दार-पुष्पोंकी मालासे भगवती पार्वतीके केशपाशोंमें सुशोभित है और भगवान् शङ्करके गलेमें मुण्डोंकी माला सुशोभित हो रही है। भगवती पार्वतीके वस्त्र अति दिव्य हैं और भगवान् शङ्कर दिगम्बररूपमें सुशोभित हो रहे हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥ ५॥

भगवती पार्वतीके केश जलसे भरे काले मेघके समान सुन्दर हैं और भगवान् शङ्करकी जटा विद्युत्प्रभाके समान कुछ लालिमा लिये हुए चमकती दीखती है। भगवती पार्वती परम स्वतन्त्र हैं अर्थात् उनसे बढ़कर कोई नहीं है और भगवान् शङ्कर सम्पूर्ण जगत्के स्वामी हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥ ६॥

भगवती पार्वती लास्य नृत्य करती हैं और उससे जगत्की रचना होती है और भगवान् शङ्करका नृत्य सृष्टिप्रपञ्चका संहारक है। भगवती पार्वती संसारकी माता और भगवान् शङ्कर संसारके एकमात्र पिता हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥ ७॥

प्रदीप्तरत्नोज्ज्वलकुण्डलायै स्फुरन्महापन्नगभूषणाय।
शिवान्वितायै च शिवान्विताय नमः शिवायै च नमः शिवाय॥ ८
एतत् पठेदष्टकमिष्टदं यो भक्त्या स मान्यो भुवि दीर्घजीवी।
प्राप्नोति सौभाग्यमनन्तकालं भूयात् सदा तस्य समस्तसिद्धिः॥ ९

॥ इति अर्धनारीनटेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

भगवती पार्वती प्रदीप्त रत्नोंके उज्ज्वल कुण्डल धारण किये हुई हैं और भगवान् शङ्कर फूत्कार करते हुए महान् सर्पोंका आभूषण धारण किये हैं। भगवती पार्वती भगवान् शङ्करकी और भगवान् शङ्कर भगवती पार्वतीकी शक्तिसे समन्वित हैं। ऐसी भगवती पार्वती और भगवान् शङ्करको नमस्कार है॥ ८॥

आठ श्लोकोंका यह स्तोत्र इष्टसिद्धि करनेवाला है। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक इसका पाठ करता है, वह समस्त संसारमें सम्मानित होता है और दीर्घजीवी बनता है, अनन्त कालके लिये सौभाग्य प्राप्त करता है एवं अनन्त कालके लिये सभी सिद्धियोंसे युक्त हो जाता है॥ ९॥

॥ इस प्रकार अर्धनारीनटेश्वरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

भस्म अंग, मर्दन अनंग, संतत असंग हर।
सीस गंग, गिरिजा अर्धंग, भूषन भुजंगबर॥
मुंडमाल, बिधु बाल भाल, डमरू कपालु कर।
बिबुधबृंद-नवकुमुद-चंद, सुखकंद सूलधर॥
त्रिपुरारि त्रिलोचन, दिग्बसन, बिषभोजन, भवभयहरन।
कह तुलसिदासु सेवत सुलभ सिव सिव सिव संकर सरन॥

(कवितावली १३७)

पशुपतिस्तोत्रम्

स पातु वो यस्य जटाकलापे
स्थितः शशाङ्कः स्फुटहारगौरः।
नीलोत्पलानामिव नालपुञ्जे
निद्रायमाणः शरदीव हंसः॥ १॥
जगत्सिसृक्षाप्रलयक्रियाविधौ
प्रयत्नमुन्मेषनिमेषविभ्रमम्।
वदन्ति यस्येक्षणलोलपक्ष्मणां
पराय तस्मै परमेष्ठिने नमः॥ २॥
व्योम्नीव नीरदभरः सरसीव वीचि-
व्यूहः सहस्त्रमहसीव सुधांशुधाम।
यस्मिन्निदं जगदुदेति च लीयते च
तच्छाम्भवं भवतु वैभवमृद्धये वः॥ ३॥

जिनके जटाजूटमें स्थित गौर वर्णका चन्द्रमा शरद्-ऋतुमें नील कमलके नालोंमें निद्रायमाण हंस-सा दीख रहा है, ऐसे चन्द्रभूषण भगवान् पशुपति आप सबकी रक्षा करें॥ १॥

जिन भगवान् पशुपतिके चञ्चल नेत्रोंकी पलकोंका उन्मेष (खोलना), निमेष (बंद करना) एवं विभ्रम (घूमना) संसारकी सृष्टि, पालन तथा संहारकी क्रियाओंका प्रयत्न कहा जाता है, उन परात्पर परमेष्ठी भगवान् पशुपतिको नमस्कार है॥ २॥

जिनके भीतर यह जगत् उसी प्रकार प्रकट और विलीन होता रहता है, जिस प्रकार आकाशमें मेघपुञ्ज, तालाबमें तरङ्गसमूह और अनन्त दीप्तिवाले सूर्यमण्डलमें चन्द्रमाकी किरणें, ऐसे भगवान् पशुपति शङ्कर आप सबको सुख-समृद्धि प्रदान करें॥ ३॥

यः कन्दुकैरिव पुरन्दरपद्मसद्म-
पद्मापतिप्रभृतिभिः प्रभुरप्रमेयः।
खेलत्यलङ्घ्यमहिमा स हिमाद्रिकन्या-
कान्तः कृतान्तदलनो गलयत्वघं वः॥ ४॥
दिश्यात् स शीतकिरणाभरणः शिवं वो
यस्योत्तमाङ्गभुवि विस्फुरदूर्मिपक्षा।
हंसीव निर्मलशशाङ्ककलामृणाल-
कन्दार्थिनी सुरसरिन्नभतः पपात॥ ५॥

॥ इति पशुपतिस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अप्रमेय एवं अनतिक्रमणीय महिमावाले तथा कृतान्त (यमराज)-का दलन करनेवाले, इन्द्र, ब्रह्मा और विष्णु आदिके साथ क्रीड़ा-कन्दुक बनकर संसारमें क्रीड़ा करनेवाले पार्वतीपति भगवान् पशुपति आप लोगोंके पापको नष्ट करें॥ ४॥

जिन भगवान् शङ्करके सिरपर अपनी लहरोंके साथ लहराती हुई गङ्गा आकाशसे इस प्रकार अवतरित हो रही हैं, जैसे चन्द्रमाको निर्मल मृणालकन्द समझकर उसे पानेकी इच्छा करती हुई और अपने पंखोंको हिलाती-डुलाती हंसी आकाशसे सरोवरमें उतर रही हो। ऐसे शीतकिरण चन्द्रमाको आभूषणरूपमें धारण करनेवाले भगवान् पशुपति आप सबका कल्याण करें॥ ५॥

॥ इस प्रकार पशुपतिस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

मृतसञ्जीवनकवचम्

एवमाराध्य गौरीशं देवं मृत्युञ्जयेश्वरम्।
मृतसञ्जीवनं नाम कवचं प्रजपेत् सदा॥ १॥
सारात् सारतरं पुण्यं गुह्याद् गुह्यतरं शुभम्।
महादेवस्य कवचं मृतसञ्जीवनाभिधम्॥ २॥
समाहितमना भूत्वा शृणुष्व कवचं शुभम्।
श्रुत्वैतद् दिव्यकवचं रहस्यं कुरु सर्वदा॥ ३॥
जराभयकरो यज्वा सर्वदेवनिषेवितः।
मृत्युञ्जयो महादेवः प्राच्यां मां पातु सर्वदा॥ ४॥

गौरीपति मृत्युञ्जयेश्वर भगवान् शंकरकी विधिपूर्वक आराधना करनेके पश्चात् भक्तको सदा मृतसञ्जीवन नामक कवचका सुस्पष्ट पाठ करना चाहिये॥ १॥

महादेव भगवान् शङ्करका यह मृतसञ्जीवन नामक कवच तत्त्वका भी तत्त्व है, पुण्यप्रद है, गुह्यसे भी गुह्य और मङ्गल प्रदान करनेवाला है॥ २॥

[आचार्य शिष्यको उपदेश करते हैं कि—हे वत्स!] अपने मनको एकाग्र करके इस मृतसञ्जीवन कवचको सुनो। यह परम कल्याणकारी दिव्य कवच है। इसकी गोपनीयता सदा बनाये रखना॥ ३॥

जरासे अभय करनेवाले, निरन्तर यज्ञ करनेवाले, सभी देवताओंसे आराधित हे मृत्युञ्जय महादेव! आप पूर्व-दिशामें मेरी सदा रक्षा करें॥ ४॥

दधानः शक्तिमभयां त्रिमुखः षड्भुजः प्रभुः।
सदाशिवोऽग्निरूपी मामाग्नेय्यां पातु सर्वदा॥ ५॥
अष्टादशभुजोपेतो दण्डाभयकरो विभुः।
यमरूपी महादेवो दक्षिणस्यां सदाऽवतु॥ ६॥
खड्गाभयकरो धीरो रक्षोगणनिषेवितः।
रक्षोरूपी महेशो मां नैर्ऋत्यां सर्वदाऽवतु॥ ७॥
पाशाभयभुजः सर्वरत्नाकरनिषेवितः।
वरुणात्मा महादेवः पश्चिमे मां सदाऽवतु॥ ८॥
गदाभयकरः प्राणनायकः सर्वदागतिः।
वायव्यां मारुतात्मा मां शङ्करः पातु सर्वदा॥ ९॥

अभय प्रदान करनेवाली शक्तिको धारण करनेवाले, तीन मुखोंवाले तथा छः भुजाओंवाले, अग्निरूपी प्रभु सदाशिव अग्निकोणमें मेरी सदा रक्षा करें॥ ५॥

अट्ठारह भुजाओंसे युक्त, हाथमें दण्ड और अभयमुद्रा धारण करनेवाले, सर्वत्र व्याप्त यमरूपी महादेव शिव दक्षिण-दिशामें मेरी सदा रक्षा करें॥ ६॥

हाथमें खड्ग और अभयमुद्रा धारण करनेवाले, धैर्यशाली, दैत्यगणोंसे आराधित रक्षोरूपी महेश नैर्ऋत्यकोणमें मेरी सदा रक्षा करें॥ ७॥

हाथमें अभयमुद्रा और पाश धारण करनेवाले, सभी रत्नाकरोंसे सेवित, वरुणस्वरूप महादेव भगवान् शङ्कर पश्चिम-दिशामें मेरी सदा रक्षा करें॥ ८॥

हाथोंमें गदा और अभयमुद्रा धारण करनेवाले, प्राणोंके रक्षक, सर्वदा गतिशील वायुस्वरूप शङ्करजी वायव्यकोणमें मेरी सदा रक्षा करें॥ ९॥

शङ्खाभयकरस्थो मां नायकः परमेश्वरः।
सर्वात्मान्तरदिग्भागे पातु मां शङ्करः प्रभुः॥ १०॥
शूलाभयकरः सर्वविद्यानामधिनायकः।
ईशानात्मा तथैशान्यां पातु मां परमेश्वरः॥ ११॥
ऊर्ध्वभागे ब्रह्मरूपी विश्वात्माऽधः सदाऽवतु।
शिरो मे शङ्करः पातु ललाटं चन्द्रशेखरः॥ १२॥
भ्रूमध्यं सर्वलोकेशस्त्रिनेत्रोऽवतु लोचने।
भ्रूयुग्मं गिरिशः पातु कर्णौ पातु महेश्वरः॥ १३॥
नासिकां मे महादेव ओष्ठौ पातु वृषध्वजः।
जिह्वां मे दक्षिणामूर्तिर्दन्तान् मे गिरिशोऽवतु॥ १४॥

हाथोंमें शङ्ख और अभयमुद्रा धारण करनेवाले नायक (सर्वमार्गद्रष्टा) सर्वात्मा सर्वव्यापक परमेश्वर भगवान् शिव समस्त दिशाओंके मध्यमें मेरी रक्षा करें॥ १०॥

हाथोंमें त्रिशूल और अभयमुद्राको धारण करनेवाले, सभी विद्याओंके स्वामी, ईशानस्वरूप भगवान् परमेश्वर शिव ईशानकोणमें मेरी रक्षा करें॥ ११॥

ब्रह्मरूपी शिव मेरे ऊर्ध्वभागमें तथा विश्वात्मस्वरूप शिव अधोभागमें मेरी सदा रक्षा करें। शङ्कर मेरे सिरकी और चन्द्रशेखर मेरे ललाटकी रक्षा करें॥ १२॥

मेरे भौंहोंके मध्यमें सर्वलोकेश और दोनों नेत्रोंकी त्रिनेत्र भगवान् शंकर रक्षा करें, दोनों भौंहोंकी रक्षा गिरिश एवं दोनों कानोंकी रक्षा भगवान् महेश्वर करें॥ १३॥

महादेव मेरी नासिकाकी तथा वृषभध्वज मेरे दोनों ओठोंकी सदा रक्षा करें। दक्षिणामूर्ति मेरी जिह्वाकी तथा गिरिश मेरे दाँतोंकी रक्षा करें॥ १४॥

मृत्युञ्जयो मुखं पातु कण्ठं मे नागभूषणः।
पिनाकी मत्करौ पातु त्रिशूली हृदयं मम॥ १५॥
पञ्चवक्त्रः स्तनौ पातु उदरं जगदीश्वरः।
नाभिं पातु विरूपाक्षः पार्श्वे मे पार्वतीपतिः॥ १६॥
कटिद्वयं गिरीशो मे पृष्ठं मे प्रमथाधिपः।
गुह्यं महेश्वरः पातु ममोरू पातु भैरवः॥ १७॥
जानुनी मे जगद्धर्ता जङ्घे मे जगदम्बिका।
पादौ मे सततं पातु लोकवन्द्यः सदाशिवः॥ १८॥
गिरीशः पातु मे भार्यां भवः पातु सुतान् मम।
मृत्युञ्जयो ममायुष्यं चित्तं मे गणनायकः॥ १९॥
सर्वाङ्गं मे सदा पातु कालकालः सदाशिवः।
एतत्ते कवचं पुण्यं देवतानां च दुर्लभम्॥ २०॥

मृत्युञ्जय मेरे मुखकी एवं नागभूषण भगवान् शिव मेरे कण्ठकी रक्षा करें। पिनाकी मेरे दोनों हाथोंकी तथा त्रिशूली मेरे हृदयकी रक्षा करें॥ १५॥

पञ्चवक्त्र मेरे दोनों स्तनोंकी और जगदीश्वर मेरे उदरकी रक्षा करें। विरूपाक्ष नाभिकी और पार्वतीपति पार्श्वभागकी रक्षा करें॥ १६॥

गिरीश मेरे दोनों कटिभागोंकी तथा प्रमथाधिप पृष्ठभागकी रक्षा करें। महेश्वर मेरे गुह्यभागकी और भैरव मेरे दोनों ऊरुओंकी रक्षा करें॥ १७॥

जगद्धर्ता मेरे दोनों घुटनोंकी, जगदम्बिका मेरे दोनों जंघोंकी तथा लोकवन्दनीय सदाशिव निरन्तर मेरे दोनों पैरोंकी रक्षा करें॥ १८॥

गिरीश मेरी भार्याकी रक्षा करें तथा भव मेरे पुत्रोंकी रक्षा करें। मृत्युञ्जय मेरे आयुकी तथा गणनायक मेरे चित्तकी रक्षा करें॥ १९॥

कालोंके काल सदाशिव मेरे सभी अङ्गोंकी रक्षा करें। [हे वत्स!] देवताओंके लिये भी दुर्लभ इस पवित्र कवचका वर्णन मैंने तुमसे किया है॥ २०॥

मृतसञ्जीवनं नाम्ना महादेवेन कीर्तितम्।
सहस्रावर्तनं चास्य पुरश्चरणमीरितम्॥ २१॥
यः पठेच्छृणुयान्नित्यं श्रावयेत् सुसमाहितः।
सोऽकालमृत्युं निर्जित्य सदायुष्यं समश्नुते॥ २२॥
हस्तेन वा यदा स्पृष्ट्वा मृतं सञ्जीवयत्यसौ।
आधयो व्याधयस्तस्य न भवन्ति कदाचन॥ २३॥
कालमृत्युमपि प्राप्तमसौ जयति सर्वदा।
अणिमादिगुणैश्वर्यं लभते मानवोत्तमः॥ २४॥
युद्धारम्भे पठित्वेदमष्टाविंशतिवारकम्।
युद्धमध्ये स्थितः शत्रुः सद्यः सर्वैर्न दृश्यते॥ २५॥

महादेवजीने मृतसञ्जीवन नामक इस कवचको कहा है। इस कवचकी सहस्र आवृत्तिको पुरश्चरण कहा गया है॥ २१॥

जो अपने मनको एकाग्र करके नित्य इसका पाठ करता है, सुनता अथवा दूसरोंको सुनाता है, वह अकाल मृत्युको जीतकर पूर्ण आयुका उपभोग करता है॥ २२॥

जो व्यक्ति अपने हाथसे मरणासन्न व्यक्तिके शरीरका स्पर्श करते हुए इस मृतसञ्जीवन कवचका पाठ करता है, उस आसन्नमृत्यु प्राणीके भीतर चेतनता आ जाती है। फिर उसे कभी आधि-व्याधि नहीं होतीं॥ २३॥

यह मृतसञ्जीवन कवच कालके गालमें गये हुए व्यक्तिको भी जीवन प्रदान कर देता है और वह मानवोत्तम अणिमा आदि गुणोंसे युक्त ऐश्वर्यको प्राप्त करता है॥ २४॥

युद्ध आरम्भ होनेके पूर्व जो इस मृतसञ्जीवन कवचका २८ बार पाठ करके रणभूमिमें उपस्थित होता है, वह उस समय सभी शत्रुओंसे अदृश्य रहता है॥ २५॥

न ब्रह्मादीनि चास्त्राणि क्षयं कुर्वन्ति तस्य वै।
विजयं लभते देवयुद्धमध्येऽपि सर्वदा॥ २६॥
प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत् कवचं शुभम्।
अक्षय्यं लभते सौख्यमिह लोके परत्र च॥ २७॥
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सर्वरोगविवर्जितः।
अजरामरणो भूत्वा सदा षोडशवार्षिकः॥ २८॥
विचरत्यखिलाँल्लोकान् प्राप्य भोगांश्च दुर्लभान्।
तस्मादिदं महागोप्यं कवचं समुदाहृतम्।
मृतसञ्जीवनं नाम्ना दैवतैरपि दुर्लभम्॥ २९॥

॥ इति मृतसञ्जीवन कवचं सम्पूर्णम्॥

यदि देवताओंके भी साथ युद्ध छिड़ जाय तो उसमें उसका विनाश ब्रह्मास्त्र भी नहीं कर सकते, वह विजय प्राप्त करता है॥ २६॥

जो प्रातःकाल उठकर इस कल्याणकारी कवचका सदा पाठ करता है, उसे इस लोक तथा परलोकमें भी अक्षय्य सुख प्राप्त होता है॥ २७॥

वह सम्पूर्ण व्याधियोंसे मुक्त हो जाता है, सब प्रकारके रोग उसके शरीरसे भाग जाते हैं। वह अजर-अमर होकर सदाके लिये सोलह वर्षवाला व्यक्ति बन जाता है॥ २८॥

इस लोकमें दुर्लभ भोगोंको प्राप्त कर सम्पूर्ण लोकोंमें विचरण करता रहता है। इसलिये इस महागोपनीय कवचको मृतसञ्जीवन नामसे कहा है। यह देवताओंके लिये भी दुर्लभ है॥ २९॥

॥ इस प्रकार मृतसञ्जीवन कवच सम्पूर्ण हुआ॥

अनादिकल्पेश्वरस्तोत्रम्

कर्पूरगौरो भुजगेन्द्रहारो गङ्गाधरो लोकहितावहः सः।
सर्वेश्वरो देववरोऽप्यघोरो योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ १
कैलासवासी गिरिजाविलासी श्मशानवासी सुमनोनिवासी।
काशीनिवासी विजयप्रकाशी योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ २
त्रिशूलधारी भवदुःखहारी कन्दर्पवैरी रजनीशधारी।
कपर्दधारी भजकानुसारी योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ३

जो कर्पूरके समान गौरवर्णके हैं, सर्पोंके हार पहने हुए हैं, जटाजूटमें गङ्गाको धारण किये हुए हैं, संसारका हित करनेवाले हैं, सभीके स्वामी हैं और देवताओंमें श्रेष्ठ होते हुए भी अघोर हैं, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, भगवान् अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ १॥

जो कैलासपर निवास करनेवाले, भगवती गिरिजाके साथ आनन्दका अनुभव करनेवाले, श्मशानवासी, भक्तोंके मनमें निवास करनेवाले तथा काशीमें वास करनेवाले और विजय प्रदान करनेवाले हैं, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, भगवान् अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ २॥

जो त्रिशूल धारण करनेवाले, संसाररूपी दुःखका हरण करनेवाले, कामदेवके दर्पका दलन करनेवाले, चन्द्रमाको धारण करनेवाले, जटाजूटधारी तथा भजन करनेवालेका अनुसरण करनेवाले हैं, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, भगवान् अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ३॥
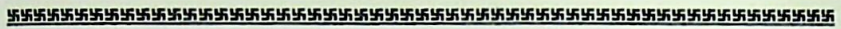
लोकाधिनाथः प्रमथाधिनाथः कैवल्यनाथः श्रुतिशास्त्रनाथः।
विद्यार्थनाथः पुरुषार्थनाथो योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ४
लिङ्गं परिच्छेत्तुमधोगतस्य नारायणश्चोपरि लोकनाथः।
बभूवतुस्तावपि नो समर्थौ योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ५
यं रावणस्ताण्डवकौशलेन गीतेन चातोषयदस्य सोऽत्र।
कृपाकटाक्षेण समृद्धिमाप योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ६
सकृच्च बाणोऽवनमय्यशीर्षं यस्याग्रतः सोप्यलभत्समृद्धिम्।
देवेन्द्रसम्पत्त्यधिकां गरिष्ठां योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ७

जो समस्त लोकोंके स्वामी, प्रमथगणोंके नाथ, मोक्षके अधिपति, श्रुतियों और शास्त्रोंका प्रकाश करनेवाले अथवा श्रुतियों तथा शास्त्रोंमें अधीश्वररूपमें निर्दिष्ट, समस्त विद्याओं एवं सम्पत्तियोंके स्वामी तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूप पुरुषार्थचतुष्टयके अधिष्ठाता हैं, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ४॥

जिनके ज्योतिर्लिङ्गकी इयत्ताको जाननेके लिये नारायण—विष्णु नीचेकी ओर गये और ब्रह्मदेव ऊपरकी ओर गये, फिर भी उसकी अवधि जाननेमें सफल नहीं हो सके, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ५॥

जिन्हें रावणने कुशलतापूर्वक ताण्डव नृत्य और स्तुति करके प्रसन्न कर लिया और जिनके कृपाकटाक्षसे उसने समृद्धि प्राप्त कर ली, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ६॥

बाणासुरने जिनके आगे अपने मस्तकको झुकाकर एक बार प्रणाम किया और उनकी प्रसन्नतासे देवेन्द्रकी सम्पत्तिसे भी अधिक भरी-पूरी समृद्धि प्राप्त कर ली, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ७॥
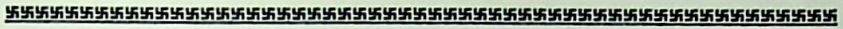
गुणान्विमातुं न समर्थ एष वेषश्च जीवोऽपि विकुण्ठितोऽस्य।
श्रुतिश्च नूनं चलितं बभाषे योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ॥ ८

अनादिकल्पेश उमेश एतत् स्तवाष्टकं यः पठति त्रिकालम्।
स धौतपापोऽखिललोकवन्द्यं शैवं पदं यास्यति भक्तिमांश्चेत्॥ ९

॥ इति श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीकृतमनादिकल्पेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

अनेक प्रकारकी कुण्ठाओंसे ग्रस्त यह जीव जिनके स्वरूपका निर्वचन तथा गुणोंका परिगणन करनेमें सर्वथा असमर्थ है, निश्चय ही श्रुति जिनका वर्णन करनेमें चकित होकर नेति-नेति कहती है, ऐसे वे अन्य कोई और नहीं, भगवान् अनादिकल्पेश्वर ही हैं॥ ८॥

हे अनादिकल्पेश्वर उमापते! आपके इस आठ श्लोकोंद्वारा की गयी स्तुतिको जो तीनों कालोंमें भक्तिपूर्वक पढ़ता है, उसके समस्त पाप धुल जाते हैं और वह सभीके द्वारा वन्दनीय हो जाता है तथा अन्तमें शिवसायुज्यको प्राप्त होता है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीवासुदेवानन्दजी सरस्वतीकृत अनादिकल्पेश्वरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

नित्य सच्चिदानन्द सदाशिव भालचन्द्र शुचि सौम्य सुरूप।
सर्प-रत्न-मणि कुसुम माल मण्डित गल, पिङ्गल जटा अनूप॥
नेत्रत्रय, त्रिपुण्ड्र शोभित, कटि भुजंग, हरण मन्मथ मद-गर्व।
ऋक्ष-चर्म-परिधान ध्यानमय वन-तरु तले सुशोभित शर्व॥

(पद-रत्नाकर ८८५)

दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्रम्

विश्वेश्वराय नरकार्णवतारणाय
कर्णामृताय शशिशेखरधारणाय।
कर्पूरकान्तिधवलाय जटाधराय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ १॥
गौरीप्रियाय रजनीशकलाधराय
कालान्तकाय भुजगाधिपकङ्कणाय।
गङ्गाधराय गजराजविमर्दनाय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ २॥
भक्तिप्रियाय भवरोगभयापहाय
उग्राय दुर्गभवसागरतारणाय।

समस्त चराचर विश्वके स्वामिरूप विश्वेश्वर, नरकरूपी संसारसागरसे उद्धार करनेवाले, कर्णसे श्रवण करनेमें अमृतके समान नामवाले, अपने भालपर चन्द्रमाको आभूषणरूपमें धारण करनेवाले, कर्पूरकी कान्तिके समान धवल वर्णवाले, जटाधारी और दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ १॥

गौरीके अत्यन्त प्रिय, रजनीश्वर (चन्द्र)-की कलाको धारण करनेवाले, कालके भी अन्तक (यम)-रूप, नागराजको कङ्कणरूपमें धारण करनेवाले, अपने मस्तकपर गङ्गाको धारण करनेवाले, गजराजका विमर्दन करनेवाले और दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ २॥

भक्तिके प्रिय, संसाररूपी रोग एवं भयके विनाशक, संहारके समय उग्ररूपधारी, दुर्गम भवसागरसे पार करानेवाले, ज्योतिःस्वरूप,

ज्योतिर्मयाय गुणनामसुनृत्यकाय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ३॥
चर्माम्बराय शवभस्मविलेपनाय
भालेक्षणाय मणिकुण्डलमण्डिताय।
मञ्जीरपादयुगलाय जटाधराय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ४॥
पञ्चाननाय फणिराजविभूषणाय
हेमांशुकाय भुवनत्रयमण्डिताय।
आनन्दभूमिवरदाय तमोमयाय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ५॥

अपने गुण और नामके अनुसार सुन्दर नृत्य करनेवाले तथा दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ३॥

व्याघ्रचर्मधारी, चिताभस्मको लगानेवाले, भालमें तृतीय नेत्रधारी, मणियोंके कुण्डलसे सुशोभित, अपने चरणोंमें नूपुर धारण करनेवाले जटाधारी और दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ४॥

पाँच मुखवाले, नागराजरूपी आभूषणोंसे सुसज्जित, सुवर्णके समान वस्त्रवाले अथवा सुवर्णके समान किरणवाले, तीनों लोकोंमें पूजित, आनन्दभूमि (काशी)-को वर प्रदान करनेवाले, सृष्टिके संहारके लिये तमोगुणाविष्ट होनेवाले तथा दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ५॥

भानुप्रियाय भवसागरतारणाय
कालान्तकाय कमलासनपूजिताय।
नेत्रत्रयाय शुभलक्षणलक्षिताय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ६॥
रामप्रियाय रघुनाथवरप्रदाय
नागप्रियाय नरकार्णवतारणाय।
पुण्येषु पुण्यभरिताय सुरार्चिताय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ७॥
मुक्तेश्वराय फलदाय गणेश्वराय
गीतप्रियाय वृषभेश्वरवाहनाय।
मातङ्गचर्मवसनाय महेश्वराय
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥ ८॥

सूर्यको अत्यन्त प्रिय अथवा सूर्यके प्रेमी, भवसागरसे उद्धार करनेवाले, कालके लिये भी महाकालस्वरूप, कमलासन (ब्रह्मा)-से सुपूजित, तीन नेत्रोंको धारण करनेवाले, शुभ लक्षणोंसे युक्त तथा दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ६॥

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामको अत्यन्त प्रिय अथवा रामसे प्रेम करनेवाले, रघुनाथको वर देनेवाले, सर्पोंके अतिप्रिय, भवसागररूपी नरकसे तारनेवाले, पुण्यवानोंमें परिपूर्ण पुण्यवाले, समस्त देवताओंसे सुपूजित तथा दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ७॥

मुक्तजनोंके स्वामिरूप, पुरुषार्थचतुष्टयरूप फलको देनेवाले, प्रमथादि गणोंके स्वामी, स्तुतिप्रिय, नन्दीवाहन, गजचर्मको वस्त्ररूपमें धारण करनेवाले, महेश्वर तथा दरिद्रतारूपी दुःखके विनाशक भगवान् शिवको मेरा नमस्कार है॥ ८॥

वसिष्ठेन कृतं स्तोत्रं सर्वरोगनिवारणम्।
सर्वसम्पत्करं शीघ्रं पुत्रपौत्रादिवर्धनम्।
त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं स हि स्वर्गमवाप्नुयात्॥ ९॥

॥ इति श्रीवसिष्ठविरचितं दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

समस्त रोगोंके विनाशक तथा शीघ्र ही समस्त सम्पत्तियोंको प्रदान करनेवाले और पुत्र-पौत्रादि वंश-परम्पराको बढ़ानेवाले, वसिष्ठद्वारा निर्मित इस स्तोत्रका जो भक्त नित्य तीनों कालोंमें पाठ करता है, उसे निश्चय ही स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीवसिष्ठविरचित दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

सदाशिव-चरण कमल मन लाग।
मोह निशा के सोवनि हारे, भोर भयो उठि जाग॥
पंछी गण सब बोलन लागे, मनहुँ भैरवी राग।
मलय अनिल की मीठी थपकनि, निद्रा तंद्रा भाग॥
कोकिल पंचम तान सुहावनि, डाल रसालन बाग।
अरुण किरण भरि विश्व विमोहनि, पूरब दिशा सुहाग॥
गेह देह सब नेह निहोरो, झूठ विषय भ्रम त्याग।
चिदानन्द सन्दोह सरोवर, अवगाहन अनुराग॥
क्षण-क्षण नित्य मनोहर सुन्दर, रस समुद्रमें पाग।
शीतल मधुर महेश्वर मंजुल, विश्वेश्वर करु याग॥

(भजनावली—ब्रह्मलीन स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजी सरस्वती)

शिवषडक्षरस्तोत्रम्

ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः॥ १॥

नमन्ति ऋषयो देवा नमन्त्यप्सरसां गणाः।
नरा नमन्ति देवेशं नकाराय नमो नमः॥ २॥

महादेवं महात्मानं महाध्यानपरायणम्।
महापापहरं देवं मकाराय नमो नमः॥ ३॥

शिवं शान्तं जगन्नाथं लोकानुग्रहकारकम्।
शिवमेकपदं नित्यं शिकाराय नमो नमः॥ ४॥

जो अर्धचन्द्रबिन्दुसे संयुक्त, 'ॐकार' स्वरूप हैं, योगिजन जिनका निरन्तर ध्यान करते हैं एवं जो समस्त मनोरथोंको प्रदान करनेवाले और मोक्षदाता हैं, ऐसे 'ॐकार' स्वरूप शिवको बारम्बार नमस्कार है॥ १॥

जिन देवेशकी ऋषिगण तथा देवगण एवं सभी अप्सरागण और मनुष्य स्तुति करते हैं, ऐसे 'न' काररूप शिवको मेरा बारम्बार नमस्कार है॥ २॥

जो उदार स्वभाववाले महान् आत्मा तथा जो बड़े-से-बड़े पापको नष्ट करनेवाले महान् ध्यानपरायण—अखण्ड समाधिमें स्थित रहनेवाले महादेव शिव हैं, ऐसे 'म' कारस्वरूप महादेव शिवको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ३॥

जो समस्त लोकोंपर अनुग्रह करनेवाले एकमात्र शिवस्वरूप कल्याणकारी, शान्तस्वरूप, जगत्के स्वामी हैं, ऐसे एकपदी 'शि' काररूप भगवान् शिवको नित्य नमस्कार है, नमस्कार है॥ ४॥

वाहनं वृषभो यस्य वासुकिः कण्ठभूषणम्।
वामे शक्तिधरं देवं वाकाराय नमो नमः॥ ५॥
यत्र यत्र स्थितो देवः सर्वव्यापी महेश्वरः।
यो गुरुः सर्वदेवानां यकाराय नमो नमः॥ ६॥
षडक्षरमिदं स्तोत्रं यः पठेच्छिवसंनिधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ ७॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले उमामहेश्वरसंवादे शिवषडक्षरस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

जिनका वाहन वृषभ है और नागराज वासुकि जिनके कण्ठका आभूषण है तथा जिनके वाम-भागमें शक्तिस्वरूपा उमा स्थित हैं, ऐसे 'वा'काररूप भगवान् शिवको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ५॥

जो देव (शक्तिसम्पन्न) महेश्वर (शिव) सभी देवताओंके गुरु हैं तथा सर्वव्यापी हैं—ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ वे स्थित न हों, ऐसे 'य'कारस्वरूप शिवको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ६॥

जो भक्त शिवके समीप इस षडक्षरस्तोत्रका श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पाठ करता है, वह शिवलोकको प्राप्त करता है और उनके साथ परम आनन्दका उपभोग करता है॥ ७॥

॥ इस प्रकार श्रीरुद्रयामलमें उमामहेश्वर-संवादरूप शिवषडक्षरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

वन्दे शिवं शङ्करम्

श्रीशिवस्तुतिः

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ १॥
वन्दे सर्वजगद्विहारमतुलं वन्देऽन्धकध्वंसिनं
वन्दे देवशिखामणिं शशिनिभं वन्दे हरेर्वल्लभम्।
वन्दे नागभुजङ्गभूषणधरं वन्दे शिवं चिन्मयं

पार्वतीपति भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ, देवताओंके गुरु तथा सृष्टिके कारणरूप परमेश्वर भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ, नागोंको आभूषणके रूपमें तथा हाथमें मृगमुद्रा धारण करनेवाले एवं समस्त जीवोंके गुरु—स्वामी भगवान् शङ्करको मैं नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ। सूर्य, चन्द्र और अग्निदेवको नेत्ररूपमें धारण करनेवाले भगवान् नारायणके परम प्रिय भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले—वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १॥

जिनके विहारकी पूरे विश्वमें कोई तुलना नहीं है, ऐसे अतुलनीय विहारी भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। अन्धकासुरके हन्ता भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। जो सभी देवताओंके शिरोमणि हैं, जिनकी कान्ति चन्द्रमाके समान है, जिन्होंने अपने शरीरपर नागों और सर्पोंको आभूषणके रूपमें धारण कर रखा है और जो भगवान् विष्णुको अत्यन्त
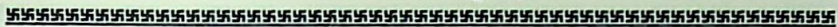
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ २॥

वन्दे दिव्यमचिन्त्यमद्वयमहं वन्देऽर्कदर्पापहं
वन्दे निर्मलमादिमूलमनिशं वन्दे मखध्वंसिनम्।
वन्दे सत्यमनन्तमाद्यमभयं वन्देऽतिशान्ताकृतिं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ३॥

वन्दे भूरथमम्बुजाक्षविशिखं वन्दे श्रुतित्रोटकं
वन्दे शैलशरासनं फणिगुणं वन्देऽधितूणीरकम्।
वन्दे पद्मजसारथिं पुरहरं वन्दे महाभैरवं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ४॥

प्रिय अपने भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले हैं, ऐसे वरदानी परम कल्याणस्वरूप चिदानन्द भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ २॥

अचिन्त्य शक्तिसे सम्पन्न, दिव्य लोकोत्तर, अद्वय ब्रह्मस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। सूर्यके अभिमानका दलन करनेवाले, निर्मल स्वरूपवाले, विश्वके मूल कारण भगवान् शङ्करकी मैं सतत वन्दना करता हूँ। जो दक्ष प्रजापतिके यज्ञको नष्ट करनेवाले तथा शान्त आकृतिवाले, सत्यस्वरूप, अनन्तस्वरूप, आद्यस्वरूप और सदा निर्भय रहनेवाले एवं भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले हैं, ऐसे वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

त्रिपुरासुरको दग्ध करनेके लिये पृथ्वीको रथ, ब्रह्माको सारथि, सुमेरु पर्वतको धनुष, श्रुतिको त्रोटक, शेषको प्रत्यञ्चा, आकाशको तूणीर और कमलनयन भगवान् विष्णुको बाण बनानेवाले, महाभैरव रूपधारी, भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले तथा वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ४॥

वन्दे पञ्चमुखाम्बुजं त्रिनयनं वन्दे ललाटेक्षणं
वन्दे व्योमगतं जटासुमुकुटं चन्द्रार्धगङ्गाधरम्।
वन्दे भस्मकृतत्रिपुण्ड्रजटिलं वन्देष्टमूर्त्यात्मकं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ५॥
वन्दे कालहरं हरं विषधरं वन्दे मृडं धूर्जटिं
वन्दे सर्वगतं दयामृतनिधिं वन्दे नृसिंहापहम्।
वन्दे विप्रसुरार्चिताङ्घ्रिकमलं वन्दे भगाक्षापहं

जो पाँच मुखवाले हैं तथा जो अघोर, सद्योजात, तत्पुरुष, वामदेव और ईशानसंज्ञक हैं, उन कमलके समान मुखवाले भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। जिनके तीन नेत्र हैं, जिनका अग्निरूप नेत्र ललाटमें है, ऐसे भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। अपने मस्तकपर भगवती गङ्गा और अर्ध चन्द्रमाको तथा सिरपर मुकुटके रूपमें सुन्दर जटाको धारण किये हैं, ऐसे आकाशकी तरह व्यापक भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। जिन भगवान् शङ्करकी पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, यजमान, सूर्य और चन्द्र मतान्तरसे शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान और महादेव नामक आठ मूर्तियाँ हैं, ऐसे उन भस्मनिर्मित त्रिपुण्ड्रको जटाके रूपमें धारण करनेवाले भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ। जो भक्त-जनोंके आश्रयदाता हैं, उन वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

जो कालको जीतनेवाले, पापका हरण करनेवाले, कण्ठमें विषको धारण करनेवाले, सुख देनेवाले तथा जटामें गङ्गाजीको धारण करनेवाले व्यापक, दयारूपी अमृतके निधि हैं और शरभरूप धारणकर नृसिंहको लेकर आकाशमें उड़ जानेवाले हैं एवं जिनके चरणकमलोंकी वन्दना ब्राह्मण एवं देवता भी करते हैं, जिन्होंने भगाक्ष (इन्द्र)-के दुःखका
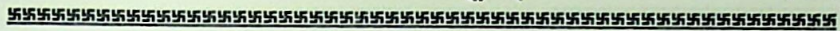
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ६॥
वन्दे मङ्गलराजताद्रिनिलयं वन्दे सुराधीश्वरं
वन्दे शङ्करमप्रमेयमतुलं वन्दे यमद्वेषिणम्।
वन्दे कुण्डलिराजकुण्डलधरं वन्दे सहस्राननं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ७॥
वन्दे हंसमतीन्द्रियं स्मरहरं वन्दे विरूपेक्षणं
वन्दे भूतगणेशमव्ययमहं वन्देऽर्थराज्यप्रदम्।
वन्दे सुन्दरसौरभेयगमनं वन्दे त्रिशूलायुधं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ८॥
वन्दे सूक्ष्ममनन्तमाद्यमभयं वन्देऽन्धकारापहं

निवारण किया है तथा जो भक्तोंको आश्रय देनेवाले और वरदानी हैं, ऐसे उन कल्याणस्वरूप भगवान् शिवको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ६॥

जो चाँदीके समान शुभ्र एवं माङ्गलिक हिमालय पर्वतपर रहते हैं, जो सहस्र (अनन्त)-मुखवाले हैं, जो सभी देवताओंके स्वामी हैं, जो कल्याण करनेवाले, अप्रमेय और अतुलनीय हैं एवं शेषनागको जिन्होंने कानोंका कुण्डल बनाया है, यमको पराजित किया है, भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ७॥

जो सूर्यस्वरूप और इन्द्रियोंसे परे हैं, जो कामदेवको भस्म करनेवाले हैं, जो तीन नेत्र होनेके कारण विरूपाक्ष कहे गये हैं, जो सर्वथा अविनाशी हैं, जो धन और राज्यके प्रदाता हैं तथा भूतगणोंके स्वामी हैं, जो सुन्दर वृषवाहनपर आरूढ़ होकर चलते हैं, त्रिशूल ही जिनका आयुध है, ऐसे जो भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्कर हैं, उनको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ८॥

वन्दे फूलननन्दिभृङ्गिविनतं वन्दे सुपर्णावृतम्।
वन्दे शैलसुतार्धभागवपुषं वन्देऽभयं त्र्यम्बकं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ ९ ॥
वन्दे पावनमम्बरात्मविभवं वन्दे महेन्द्रेश्वरं
वन्दे भक्तजनाश्रयामरतरुं वन्दे नताभीष्टदम्।
वन्दे जह्नुसुताम्बिकेशमनिशं वन्दे गणाधीश्वरं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्॥ १०॥

॥ इति श्रीशिवस्तुतिः सम्पूर्णा॥

उन महाशिवको प्रणाम है जो सूक्ष्म हैं, अनन्त हैं, जो सबके आद्य हैं और जो निर्भीक हैं; जिन्होंने अन्धकासुरका वध किया है, जिन्हें फूलन, नन्दी और भृङ्गी प्रणाम अर्पित करते हैं, जो सुपर्णाओं (कमलिनियों)-से आवृत हैं, जिनके आधे शरीरमें शैलसुता पार्वती हैं, जो भक्तोंको निर्भीक करनेवाले हैं, जिनके तीन नेत्र हैं। जो भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले एवं वरदानी हैं, ऐसे कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ९॥

जिनका आत्मविभव परम पावन है और आकाशकी तरह व्यापक है, जो देवराज इन्द्रके भी स्वामी हैं, जो भक्तजनोंके लिये कल्पवृक्षके समान आश्रय हैं, जो प्रणाम करनेवालोंको भी अभीष्ट फल प्रदान करते हैं, जिनकी एक पत्नी गङ्गा और दूसरी पार्वती हैं और जो अनेक प्रमुख गणोंके भी स्वामी हैं, ऐसे भक्त-जनोंको आश्रय देनेवाले वरदानी कल्याणस्वरूप भगवान् शङ्करको मैं निरन्तर प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवस्तुति सम्पूर्ण हुई॥

उमामहेश्वरस्तोत्रम्

नमः शिवाभ्यां नवयौवनाभ्यां
परस्पराश्लिष्टवपुर्धराभ्याम् ।
नगेन्द्रकन्यावृषकेतनाभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥ १ ॥
नमः शिवाभ्यां सरसोत्सवाभ्यां
नमस्कृताभीष्टवरप्रदाभ्याम् ।
नारायणेनाऽर्चितपादुकाभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥ २ ॥
नमः शिवाभ्यां वृषवाहनाभ्यां
विरञ्चिविष्णिवन्द्रसुपूजिताभ्याम् ।
विभूतिपाटीरविलेपनाभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥ ३ ॥

नवीन युवा अवस्थावाले, परस्पर आलिङ्गनसे युक्त शरीरधारी, ऐसे शिव और शिवाको नमस्कार है, पर्वतराज हिमालयकी कन्या और वृषभचिह्नित ध्वजवाले शङ्कर इन दोनों—शङ्कर और पार्वतीको मेरा बारम्बार नमस्कार है ॥ १ ॥

महान् आह्लादपूर्वक उत्सवमें प्रवृत्त, नमस्कार करनेमात्रसे अभीष्ट वर देनेवाले भगवान् शिव और शिवाको नमस्कार है। श्रीनारायणद्वारा जिनकी चरणपादुकाएँ पूजित हैं, ऐसे शङ्कर-पार्वतीको मेरा बारम्बार नमस्कार है ॥ २ ॥

वृषभपर आसीन एवं ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि प्रमुख देवोंसे सम्यक् पूजित शिव-शिवाको मेरा प्रणाम है। विभूति (भस्म) तथा पाटीर (सुगन्धित द्रव्य) आदिके अङ्गरागसे लिप्त शङ्कर-पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है ॥ ३ ॥

नमः शिवाभ्यां जगदीश्वराभ्यां
जगत्पतिभ्यां जयविग्रहाभ्याम्।
जम्भारिमुख्यैरभिवन्दिताभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ४॥
नमः शिवाभ्यां परमौषधाभ्यां
पञ्चाक्षरीपञ्जररञ्जिताभ्याम्।
प्रपञ्चसृष्टिस्थितिसंहृतिभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ५॥
नमः शिवाभ्यामतिसुन्दराभ्या-
मत्यन्तमासक्तहृदम्बुजाभ्याम्।
अशेषलोकैकहितङ्कराभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ६॥
नमः शिवाभ्यां कलिनाशनाभ्यां
कङ्कालकल्याणवपुर्धराभ्याम्।

अखिल ब्रह्माण्डनायक, जगत्पति, विजयरूप शरीरधारी शिव और शिवाको मेरा नमस्कार है। जम्भ दैत्यके शत्रु इन्द्रादि प्रमुख देवोंद्वारा नमस्कृत शङ्कर और पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ४॥

योगी जनोंके लिये परम औषधरूप, 'नमः शिवाय' इस पञ्चाक्षरीरूप पञ्जरसे सुशोभित शिव और शिवाको मेरा नमस्कार है। अखिल जगत्प्रपञ्च—सृष्टि, स्थिति तथा संहारस्वरूप शङ्कर और पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ५॥

अत्यन्त सुन्दर स्वरूपवाले, अपने भक्तों (योगी जनों)-के हृदय-कमलमें निवास करनेवाले शिव और शिवाको मेरा नमस्कार है। समस्त चराचर जीवोंके एकमात्र हितकारी शङ्कर और पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ६॥

जो कलिके सभी दोषोंके विनाशक हैं तथा [जिस प्राणीसे शरीरमें मात्र हड्डियोंका ढाँचा रह गया हो, ऐसे मृत-प्राय प्राणीको] जो तारक

कैलासशैलस्थितदेवताभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ७॥
नमः शिवाभ्यामशुभापहाभ्या-
मशेषलोकैकविशेषिताभ्याम् ।
अकुण्ठिताभ्यां स्मृतिसम्भृताभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ८॥
नमः शिवाभ्यां रथवाहनाभ्यां
रवीन्दुवैश्वानरलोचनाभ्याम् ।
राकाशशाङ्काभमुखाम्बुजाभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ ९॥
नमः शिवाभ्यां जटिलन्धराभ्यां
जरामृतिभ्यां च विवर्जिताभ्याम्।
जनार्दनाब्जोद्भवपूजिताभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम्॥ १०॥

मन्त्रद्वारा परमपद प्राप्त करानेवाले हैं, ऐसे कैलासपर्वतपर निवास करनेवाले शङ्कर-पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ७॥

अशुभोंके विनाशक एवं समस्त लोकोंमें एकमात्र अद्वितीय शिव और शिवाको नमस्कार है। अबाधित शक्तिसम्पन्न और भक्तोंका सदा स्मरण रखनेवाले भगवान् शङ्कर-पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ८॥

रथरूपी वाहनपर स्थित, सूर्य-चन्द्र-अग्निरूप तीन नेत्रवाले शिव और शिवाको मेरा नमस्कार है। पूर्णिमाकी रातके चन्द्रमाकी आभाके समान मुख-कमलवाले शङ्कर-पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ ९॥

जटाजूटधारी, जरा (वृद्धावस्था) एवं मृत्युसे रहित शिव और शिवाको मेरा नमस्कार है। जनार्दन भगवान् (विष्णु) एवं ब्रह्माजीद्वारा पूजित भगवान् शङ्कर और देवी पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है॥ १०॥

नमः शिवाभ्यां विषमेक्षणाभ्यां
बिल्वच्छदामल्लिकदामभृद्भ्याम् ।
शोभावतीशान्तवतीश्वराभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥ ११ ॥

नमः शिवाभ्यां पशुपालकाभ्यां
जगत्त्रयीरक्षणबद्धहृद्भ्याम् ।
समस्तदेवासुरपूजिताभ्यां
नमो नमः शङ्करपार्वतीभ्याम् ॥ १२ ॥

स्तोत्रं त्रिसन्ध्यं शिवपार्वतीयं
भक्त्या पठेद् द्वादशकं नरो यः ।
स सर्वसौभाग्यफलानि भुङ्क्ते
शतायुरन्ते शिवलोकमेति ॥ १३ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितमुमामहेश्वरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

त्रिनेत्रधारी, बिल्वपत्र तथा मालती आदि सुगन्धित पुष्पोंकी माला धारण करनेवाले शिव-शिवाको मेरा नमस्कार है। शोभावती और शान्तवतीके ईश भगवान् शङ्कर एवं पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है ॥ ११ ॥

समस्त प्राणियोंका पालन-पोषण करने तथा तीनों लोकोंकी रक्षा करनेमें जिनका हृदय निरन्तर लगा हुआ है, ऐसे शिव-शिवाको मेरा नमस्कार है। समस्त देवों तथा असुरोंद्वारा पूजित शङ्कर और पार्वतीको मेरा बार-बार नमस्कार है ॥ १२ ॥

जो प्राणी अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक शिव और पार्वती-सम्बन्धी बारह श्लोकोंवाले इस स्तोत्रका प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकाल पाठ करता है, वह सौ वर्षपर्यन्त जीवन धारणकर सभी सौभाग्यफलोंका उपभोग करता है और अन्तमें शिवलोकको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित उमा-महेश्वरस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

प्रदोषस्तोत्रम्

जय देव जगन्नाथ जय शङ्कर शाश्वत।
जय सर्वसुराध्यक्ष जय सर्वसुरार्चित॥ १॥
जय सर्वगुणातीत जय सर्ववरप्रद।
जय नित्यनिराधार जय विश्वम्भराव्यय॥ २॥
जय विश्वैकवन्द्येश जय नागेन्द्रभूषण।
जय गौरीपते शम्भो जय चन्द्रार्धशेखर॥ ३॥
जय कोट्यर्कसंकाश जयानन्तगुणाश्रय।
जय भद्र विरूपाक्ष जयाचिन्त्य निरञ्जन॥ ४॥

हे जगन्नाथ (समस्त जगत्के स्वामिन्)! हे देव! आपकी जय हो। हे शाश्वत शङ्कर (सर्वदा कल्याण करनेवाले)! आपकी जय हो। हे सर्वसुराध्यक्ष (समस्त देवताओंके अध्यक्ष)! आपकी जय हो तथा हे सर्वसुरार्चित (समस्त देवताओंद्वारा अर्चित)! आपकी जय हो॥ १॥

हे सर्वगुणातीत (सभी गुणोंसे अतीत)! आपकी जय हो। हे सर्ववरप्रद (सबको वर प्रदान करनेवाले)! आपकी जय हो। हे नित्यनिराधार (नित्य निराधार रहनेवाले)! आपकी जय हो। हे अविनाशी विश्वम्भर! आपकी जय हो॥ २॥

हे विश्वैकवन्द्येश (समस्त विश्वके एकमात्र वन्दनीय परमात्मन्)! आपकी जय हो। हे नागेन्द्रभूषण (नागेन्द्रको आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले)! आपकी जय हो। हे गौरीपते! आपकी जय हो। हे चन्द्रार्धशेखर (अपने भालदेशमें अर्धचन्द्रको धारण करनेवाले) शम्भो! आपकी जय हो॥ ३॥

हे कोट्यर्कसंकाश (करोड़ों सूर्यके समान दीप्तिवाले)! आपकी जय हो। हे अनन्त गुणाश्रय (अनन्त गुणोंके आश्रय परमात्मन्)! आपकी जय हो। हे विरूपाक्ष (तीन नेत्रोंवाले कल्याणकारी भगवान् शिव)! आपकी जय हो। हे अचिन्त्य! हे निरञ्जन! आपकी जय हो॥ ४॥

जय नाथ कृपासिन्धो जय भक्तार्तिभञ्जन।
जय दुस्तरसंसारसागरोत्तारण प्रभो॥ ५॥
प्रसीद मे महादेव संसारार्तस्य खिद्यतः।
सर्वपापक्षयं कृत्वा रक्ष मां परमेश्वर॥ ६॥
महादारिद्र्यमग्नस्य महापापहतस्य च।
महाशोकनिविष्टस्य महारोगातुरस्य च॥ ७॥
ऋणभारपरीतस्य दह्यमानस्य कर्मभिः।
ग्रहैः प्रपीड्यमानस्य प्रसीद मम शङ्कर॥ ८॥
दरिद्रः प्रार्थयेद् देवं प्रदोषे गिरिजापतिम्।
अर्थाढ्यो वाऽथ राजा वा प्रार्थयेद् देवमीश्वरम्॥ ९॥
दीर्घमायुः सदारोग्यं कोशवृद्धिर्बलोन्नतिः।

हे नाथ! आपकी जय हो। हे भक्तोंकी पीड़ाको विनष्ट करनेवाले कृपासिन्धो! आपकी जय हो। हे दुस्तर संसार-सागरसे पार लगानेवाले प्रभो! आपकी जय हो॥ ५॥

हे महादेव! मैं संसारमें बहुत दुःखी हूँ। मुझे बड़ी चिन्ता है, मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये। हे परमेश्वर! मेरे सारे पापोंका नाश करके मेरी रक्षा कीजिये॥ ६॥

हे शङ्कर! मैं दरिद्रताके सागरमें डूबा हुआ हूँ। महान् पापसे आहत हूँ, अनन्त चिन्ताएँ मुझे घेरी हुई हैं, भयंकर रोगोंसे मैं दुःखी हूँ, ऋणके भारसे दबा हुआ हूँ, कर्मोंकी आगमें जल रहा हूँ और ग्रहोंसे अत्यन्त पीड़ित हूँ। आप मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये॥ ७-८॥

यदि दरिद्र व्यक्ति प्रदोषकालमें देवेश्वर गिरिजापतिकी प्रार्थना करता है तो वह धनी हो जाता है और यदि राजा देवदेवेश्वर भगवान् शङ्करकी (प्रदोषकालमें) प्रार्थना करता है तो उसे दीर्घायुकी प्राप्ति होती है, वह

ममास्तु नित्यमानन्दः प्रसादात्तव शङ्कर॥ १०॥
शत्रवः संक्षयं यान्तु प्रसीदन्तु मम प्रजाः।
नश्यन्तु दस्यवो राष्ट्रे जनाः सन्तु निरापदः॥ ११॥
दुर्भिक्षमारिसंतापाः शमं यान्तु महीतले।
सर्वसस्यसमृद्धिश्च भूयात् सुखमया दिशः॥ १२॥
एवमाराधयेद् देवं पूजान्ते गिरिजापतिम्।
ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद् दक्षिणाभिश्च पूजयेत्॥ १३॥
सर्वपापक्षयकरी सर्वरोगनिवारिणी।
शिवपूजा मयाख्याता सर्वाभीष्टफलप्रदा॥ १४॥

॥ इति प्रदोषस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

सदा नीरोग रहता है। उसके कोशकी वृद्धि तथा सेनामें अभिवृद्धि होती है। हे भगवान् शङ्कर! आपकी कृपासे मुझे भी नित्य आनन्दकी प्राप्ति हो॥ ९-१०॥

मेरे शत्रु क्षीणताको प्राप्त हों तथा मेरी प्रजाएँ सदा प्रसन्न रहें। चोर-डाकू नष्ट हो जायँ। राष्ट्रमें सारा जनसमुदाय आपत्तिरहित हो जाय॥ ११॥

पृथ्वीतलपर दुर्भिक्ष, महामारी आदिका संताप शान्त हो जाय। सभी प्रकारकी फसलोंकी समृद्धि हो। दिशाएँ सुखमयी बन जायँ॥ १२॥

इस प्रकार गिरिजापतिकी आराधना करनी चाहिये। आराधनाके अन्तमें ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। तत्पश्चात् दक्षिणा आदिके द्वारा उनकी अर्चना करनी चाहिये॥ १३॥

यह जो भगवान् शिवकी पूजा मैंने बतलायी है—वह समस्त पापोंका नाश करनेवाली, सभी रोगोंका निवारण करनेवाली और समस्त अभीष्ट फलोंको प्रदान करनेवाली है॥ १४॥

॥ इस प्रकार प्रदोषस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

शिवरक्षास्तोत्रम्

विनियोगः—ॐअस्य श्रीशिवरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य याज्ञवल्क्य ऋषिः, श्रीसदाशिवो देवता, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीसदाशिवप्रीत्यर्थं शिवरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः।

चरितं देवदेवस्य महादेवस्य पावनम्।
अपारं परमोदारं चतुर्वर्गस्य साधनम्॥ १॥
गौरीविनायकोपेतं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रकम्।
शिवं ध्यात्वा दशभुजं शिवरक्षां पठेन्नरः॥ २॥
गङ्गाधरः शिरः पातु भालमर्धेन्दुशेखरः।
नयने मदनध्वंसी कर्णौ सर्पविभूषणः॥ ३॥

विनियोग—इस शिवरक्षास्तोत्रमन्त्रके याज्ञवल्क्य ऋषि हैं, श्रीसदाशिव देवता हैं और अनुष्टुप् छन्द है, श्रीसदाशिवकी प्रसन्नताके लिये शिवरक्षास्तोत्रके जपमें इसका विनियोग किया जाता है।

देवाधिदेव महादेवका यह परम पवित्र चरित्र चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष)-की सिद्धि प्रदान करनेवाला साधन है, यह अतीव उदार है। इसकी उदारताका पार नहीं है॥ १॥

साधकको गौरी और विनायकसे युक्त, पाँच मुखवाले दश भुजाधारी त्र्यम्बक भगवान् शिवका ध्यान करके शिवरक्षास्तोत्रका पाठ करना चाहिये॥ २॥

गङ्गाको जटाजूटमें धारण करनेवाले गङ्गाधर शिव मेरे मस्तककी, शिरोभूषणके रूपमें अर्धचन्द्रको धारण करनेवाले अर्धेन्दुशेखर मेरे ललाटकी, मदनको ध्वंस करनेवाले मदनदहन मेरे दोनों नेत्रोंकी, सर्पको आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले सर्पविभूषण शिव मेरे कानोंकी रक्षा करें॥ ३॥

घ्राणं पातु पुराराातिर्मुखं पातु जगत्पतिः।
जिह्वां वागीश्वरः पातु कन्धरां शितिकन्धरः॥ ४॥
श्रीकण्ठः पातु मे कण्ठं स्कन्धौ विश्वधुरन्धरः।
भुजौ भूभारसंहर्ता करौ पातु पिनाकधृक्॥ ५॥
हृदयं शङ्करः पातु जठरं गिरिजापतिः।
नाभिं मृत्युञ्जयः पातु कटी व्याघ्राजिनाम्बरः॥ ६॥
सक्थिनी पातु दीनार्तशरणागतवत्सलः।
ऊरू महेश्वरः पातु जानुनी जगदीश्वरः॥ ७॥
जङ्घे पातु जगत्कर्ता गुल्फौ पातु गणाधिपः।

त्रिपुरासुरके विनाशक पुरारााति मेरे घ्राण (नाक)-की, जगत्की रक्षा करनेवाले जगत्पति मेरे मुखकी, वाणीके स्वामी वागीश्वर मेरी जिह्वाकी, शितिकन्धर (नीलकण्ठ) मेरी गरदनकी रक्षा करें॥ ४॥

श्री अर्थात् सरस्वती यानी वाणी निवास करती हैं जिनके कण्ठमें, ऐसे श्रीकण्ठ मेरे कण्ठकी, विश्वकी धुरीको धारण करनेवाले विश्वधुरन्धर शिव मेरे दोनों कन्धोंकी, पृथ्वीके भारस्वरूप दैत्यादिका संहार करनेवाले भूभारसंहर्ता शिव मेरी दोनों भुजाओंकी, पिनाक धारण करनेवाले पिनाकधृक् मेरे दोनों हाथोंकी रक्षा करें॥ ५॥

भगवान् शङ्कर मेरे हृदयकी और गिरिजापति मेरे जठरदेशकी रक्षा करें। भगवान् मृत्युञ्जय मेरी नाभिकी रक्षा करें तथा व्याघ्रचर्मको वस्त्ररूपमें धारण करनेवाले भगवान् शिव मेरे कटि-प्रदेशकी रक्षा करें॥ ६॥

दीन, आर्त और शरणागतोंके प्रेमी—दीनार्तशरणागतवत्सल मेरे समस्त सक्थियों (हड्डियों)-की, महेश्वर मेरे ऊरुओं तथा जगदीश्वर मेरे जानुओंकी रक्षा करें॥ ७॥

जगत्कर्ता मेरे जङ्घाओंकी, गणाधिप दोनों गुल्फों (एड़ीकी ऊपरी

चरणौ करुणासिन्धुः सर्वाङ्गानि सदाशिवः॥ ८॥
एतां शिवबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत्।
स भुक्त्वा सकलान् कामान् शिवसायुज्यमाप्नुयात्॥ ९॥
ग्रहभूतपिशाचाद्यास्त्रैलोक्ये विचरन्ति ये।
दूरादाशु पलायन्ते शिवनामाभिरक्षणात्॥ १०॥
अभयङ्करनामेदं कवचं पार्वतीपतेः।
भक्त्या बिभर्ति यः कण्ठे तस्य वश्यं जगत्त्रयम्॥ ११॥
इमां नारायणः स्वप्ने शिवरक्षां यथाऽऽदिशत्।
प्रातरुत्थाय योगीन्द्रो याज्ञवल्क्यस्तथाऽलिखत्॥ १२॥

॥ इति श्रीयाज्ञवल्क्यप्रोक्तं शिवरक्षास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

ग्रन्थि)-की, करुणासिन्धु दोनों चरणोंकी तथा भगवान् सदाशिव मेरे सभी अङ्गोंकी रक्षा करें॥ ८॥

जो सुकृती साधक कल्याणकारिणी शक्तिसे युक्त इस शिव रक्षास्तोत्रका पाठ करता है, वह समस्त कामनाओंका उपभोग कर अन्तमें शिवसायुज्यको प्राप्त करता है॥ ९॥

त्रिलोकमें जितने ग्रह, भूत, पिशाच आदि विचरण करते हैं, वे सभी इस शिवरक्षास्तोत्रके पाठमात्रसे ही तत्क्षण दूर भाग जाते हैं॥ १०॥

जो साधक भक्तिपूर्वक पार्वतीपति शङ्करके इस 'अभयङ्कर' नामक कवचको कण्ठमें धारण करता है, तीनों लोक उसके अधीन हो जाते हैं॥ ११॥

भगवान् नारायणने स्वप्नमें इस 'शिवरक्षास्तोत्र'का जिस प्रकार उपदेश किया, योगीन्द्र मुनि याज्ञवल्क्यने प्रातःकाल उठकर उसी प्रकार इस स्तोत्रको लिख लिया॥ १२॥

॥ इस प्रकार श्रीयाज्ञवल्क्यमुनि-कथित शिवरक्षास्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीविश्वनाथस्तवः

भवानीकलत्रं हरं शूलपाणिं
शरण्यं शिवं सर्पहारं गिरीशम्।
अज्ञानान्तकं भक्तविज्ञानदं तं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ १॥
अजं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं गुणज्ञं
दयाज्ञानसिन्धुं प्रभुं प्राणनाथम्।
विभुं भावगम्यं भवं नीलकण्ठं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ २॥

भवानी जिनकी पत्नी हैं, जो पापोंका हरण करनेवाले हैं, जिनके हाथमें त्रिशूल है, जो शरणागतकी रक्षा करनेमें प्रवीण हैं, कल्याणकारी हैं, सर्प जिनका हार है, जो गिरीश (कैलासगिरिके स्वामी) हैं, जो अज्ञानको नष्ट करनेवाले तथा भक्तोंको ज्ञान-विज्ञानसे समृद्ध बनानेवाले हैं, ऐसे उन मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ १॥

जो अज (अजन्मा) हैं, जिनके पाँच मुख और तीन नेत्र हैं, जो गुणज्ञ हैं, दया और ज्ञानके सिन्धु हैं, सर्वसमर्थ तथा प्राणनाथ हैं, विभु (व्यापक) हैं, जिन्हें भक्तिभावसे प्राप्त किया जा सकता है, जो सृष्टिके उत्पादक हैं, जिनका कण्ठ नीला है, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ २॥

चिताभस्मभूषार्चिताभासुराङ्गं
श्मशानालयं त्र्यम्बकं मुण्डमालम्।
कराभ्यां दधानं त्रिशूलं कपालं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ३॥

अघघ्नं महाभैरवं भीमदंष्ट्रं
निरीहं तुषाराचलाभाङ्गगौरम्।
गजारिं गिरौ संस्थितं चन्द्रचूडं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ४॥

विधुं भालदेशे विभातं दधानं
भुजङ्गेशसेव्यं पुरारिं महेशम्।

जिनका शरीर चिताके भस्मरूपी अलंकारसे अलंकृत एवं दीप्तिमान् है, जिनका निवास श्मशान है, जिनके तीन नेत्र हैं, जो मुण्डोंकी माला धारण किये रहते हैं। जो दो हाथोंमें त्रिशूल और कपाल धारण किये रहते हैं, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ३॥

जो पापोंके विनाशक हैं, जो महाभैरव हैं, जिनके दाँत भयानक हैं, जो समस्त कामनाओंसे रहित हैं, जिनका श्रीविग्रह बर्फके पर्वतका-सा गौर है और जिन्होंने गजासुरका विनाश किया है, जो पर्वतपर रहते हैं, जिनके सिरपर बालोंके जूट (जूड़े)-में चन्द्रमा विराजमान है, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ४॥

जो भालदेशमें दीप्तिमान् चन्द्रमाको धारण किये हुए हैं, जिनकी सेवा सर्पराज करते रहते हैं,जो त्रिपुरारि तथा महान् ईश हैं, जिनके

शिवासंगृहीतार्द्धदेहं प्रसन्नं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ५॥
भवानीपतिं श्रीजगन्नाथनाथं
गणेशं गृहीतं बलीवर्दयानम्।
सदा विघ्नविच्छेदहेतुं कृपालुं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ६॥
अगम्यं नटं योगिभिर्दण्डपाणिं
प्रसन्नाननं व्योमकेशं भयघ्नम्।
स्तुतं ब्रह्ममायादिभिः पादकञ्जं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ७॥
मृडं योगमुद्राकृतं ध्याननिष्ठं
धृतं नागयज्ञोपवीतं त्रिपुण्ड्रम्।

शरीरके आधे भागको शिवा (माता पार्वतीजी)-ने अधिगृहीत किया है, जो सदा प्रसन्न रहते हैं, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ५॥

जो भवानीपति हैं, जो संसारके नाथोंके नाथ (स्वामी) हैं, जो गणोंके ईश हैं, जिन्होंने बैलको अपना वाहन चुना है, जिनकी कृपासे सदा विघ्नोंका विच्छेद होता रहता है, जो कृपालु हैं, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ६॥

जो योगिजनोंके लिये भी अगम्य हैं, जो नाट्य (नृत्य)-कलामें प्रवीण हैं, दण्डपाणि हैं, प्रसन्नमुख हैं तथा जिनके केश (किरण) व्योम (आकाश)-तक व्याप्त हैं, जो भयोंका नाश करनेवाले हैं, जिनके चरणकमलोंकी स्तुति ब्रह्मा और माया आदि करते रहते हैं; ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ७॥

जो आनन्दमूर्ति हैं, योगमुद्रा धारण किये हुए हैं तथा ध्यानयोगमें निरत हैं, जिन्होंने सर्पका यज्ञोपवीत और त्रिपुण्ड्र धारण कर रखा है,

ददानं पदाम्भोजनम्राय कामं
भजेऽहं मनोऽभीष्टदं विश्वनाथम्॥ ८॥
मृडस्य स्वयं यः प्रभाते पठेन्ना
हृदिस्थः शिवस्तस्य नित्यं प्रसन्नः।
चिरस्थं धनं मित्रवर्गं कलत्रं
सुपुत्रं मनोऽभीष्टमोक्षं ददाति॥ ९॥
योगीशमिश्रमुखपङ्कजनिर्गतं यो
विश्वेश्वराष्टकमिदं पठति प्रभाते।
आसाद्य शङ्करपदाम्बुजयुग्मभक्तिं
भुक्त्वा समृद्धिमिह याति शिवान्तिकेऽन्ते॥ १०॥

॥ इति श्रीयोगीशमिश्रविरचितः श्रीविश्वनाथस्तवः सम्पूर्णः॥

चरणकमलोंमें झुके भक्तको उसका अभीष्ट प्रदान करते हैं, ऐसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाले विश्वके स्वामी भगवान् विश्वनाथका मैं भजन करता हूँ॥ ८॥

जो मनुष्य प्रभातकालमें भगवान् मृड (विश्वनाथ)-के इस स्तवका पाठ करता है, उसके हृदयमें स्थित होकर शिव उसपर सदैव प्रसन्न रहते हैं और उसे चिरस्थायी सम्पत्ति, मित्रवर्ग, पत्नी, सत्पुत्र, मनोवाञ्छित वस्तु तथा मोक्ष प्रदान करते हैं॥ ९॥

जो व्यक्ति योगीशमिश्रके मुखकमलसे निर्गत इस विश्वेश्वराष्टक (विश्वनाथस्तव)-का प्रभातवेलामें पाठ करता है, वह इस लोकमें भगवान् शङ्करके चरणकमलोंकी भक्ति प्राप्त करके समृद्धिका भोग प्राप्त करता है और अन्तमें भगवान् शिवका सांनिध्य प्राप्त कर लेता है॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीयोगीशमिश्रविरचित श्रीविश्वनाथस्तव सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीविश्वनाथनगरीस्तोत्रम्

यत्र देहपतनेऽपि देहिनां मुक्तिरेव भवतीति निश्चितम्।
पूर्वपुण्यनिचयेन लभ्यते विश्वनाथनगरी गरीयसी॥ १॥
स्वर्गतः सुखकरी दिवौकसां शैलराजतनयातिवल्लभा।
ढुण्ढिभैरवविदारिताशुभा विश्वनाथनगरी गरीयसी॥ २॥
राजतेऽत्र मणिकर्णिकामला सा सदाशिवसुखप्रदायिनी।
या शिवेन रचिता निजायुधैर्विश्वनाथनगरी गरीयसी॥ ३॥
सर्वदा अमरवृन्दवन्दिता दिग्गजेन्द्रमुखवारिताशिवा।
कालभैरवकृतैकशासना विश्वनाथनगरी गरीयसी॥ ४॥

अतिश्रेष्ठ विश्वनाथजीकी नगरी काशी पूर्वजन्मोंके पुण्यके समुदायसे प्राप्त होती है। जहाँ शरीर छोड़नेपर भी प्राणियोंको मुक्ति ही मिलती है—यह निश्चित है॥ १॥

श्रीविश्वनाथजीकी नगरी काशी देवताओंके स्वर्गसे भी अधिक सुख देनेवाली है। यह शैलराजकी तनया पार्वतीको अतिशय प्रिय है, ढुण्ढि तथा भैरवके द्वारा जिसके अशुभ नष्ट कर दिये गये हैं, ऐसी वह विश्वनाथनगरी अतिश्रेष्ठ है॥ २॥

भगवान् विश्वनाथजीने अपने आयुधोंके द्वारा जिस श्रेष्ठ नगरीका निर्माण किया है, वह सदाशिवको सुख प्रदान करनेवाली है, यहाँ निर्मल मणिकर्णिका विराजमान है। ऐसी विश्वनाथनगरी अतिश्रेष्ठ है॥ ३॥

जो सदा देवगणोंसे वन्दित है, जहाँके अशुभ दिग्गजेन्द्रोंके मुखके फूत्कारसे दूर कर दिये गये हैं और जो एकमात्र कालभैरवके द्वारा शासित है, वह विश्वनाथनगरी अतिश्रेष्ठ है॥ ४॥

यत्र मुक्तिरखिलैस्तु जन्तुभिर्लभ्यते मरणमात्रतः शुभा।
साऽखिलामरगणैरभीप्सिता विश्वनाथनगरी गरीयसी ॥ ५ ॥
उरगं तुरगं खगं मृगं वा करिणं केसरिणं खरं नरं वा।
सकृदाप्लुत एव देवनद्याः लहरी किं न हरं चरीकरीति ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीविश्वनाथनगरीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

जहाँ मरणमात्रसे सभी प्राणी शुभ मुक्तिका लाभ करते हैं। सभी देवगणोंसे वाञ्छित वह विश्वनाथनगरी अतिश्रेष्ठ है ॥ ५ ॥

देवनदी (गङ्गाजी)-में एक बार भी स्नान किये हुए सर्प, अश्व, पक्षी, मृग, हाथी, सिंह, गदहा अथवा मनुष्यको क्या वह गङ्गाकी लहर शिवस्वरूप नहीं कर देती? अर्थात् अवश्य कर देती है ॥ ६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित श्रीविश्वनाथनगरीस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

दानी कहुँ संकर-सम नाहीं।
दीन-दयालु दिबोई भावै, जाचक सदा सोहाहीं ॥
मारिकै मार थप्यौ जगमें, जाकी प्रथम रेख भट माहीं।
ता ठाकुरकौ रीझि निवाजिबौ, कह्यौ क्यों परत मो पाहीं ॥
जोग कोटि करि जो गति हरिसों, मुनि माँगत सकुचाहीं।
बेद-बिदित तेहि पद पुरारि-पुर, कीट पतंग समाहीं ॥
ईस उदार उमापति परिहरि, अनत जे जाचन जाहीं।
तुलसिदास ते मूढ़ माँगने, कबहुँ न पेट अघाहीं ॥

(विनय-पत्रिका ४)

अमोघशिवकवचम्

॥ अथ ध्यानम् ॥

वज्रदंष्ट्रं त्रिनयनं कालकण्ठमरिंदमम्।
सहस्त्रकरमप्युग्रं वन्दे शम्भुमुमापतिम्॥

ऋषभ उवाच

अथापरं सर्वपुराणगुह्यं
निःशेषपापौघहरं पवित्रम्।
जयप्रदं सर्वविपद्विमोचनं
वक्ष्यामि शैवं कवचं हिताय ते॥
नमस्कृत्य महादेवं विश्वव्यापिनमीश्वरम्।
वक्ष्ये शिवमयं वर्म सर्वरक्षाकरं नृणाम्॥ १॥

जिनकी दाढ़ें वज्रके समान हैं, जो तीन नेत्र धारण करते हैं, जिनके कण्ठमें हलाहल-पानका नील चिह्न सुशोभित होता है, जो शत्रुभाव रखनेवालोंका दमन करते हैं, जिनके सहस्त्रों कर (हाथ अथवा किरणें) हैं तथा अभक्तोंके लिये जो अत्यन्त उग्र हैं, उन उमापति शम्भुको मैं प्रणाम करता हूँ।

ऋषभजी कहते हैं—जो सम्पूर्ण पुराणोंमें परम गोपनीय है, समस्त पापोंको हर लेनेवाला है, पवित्र, जयप्रदायक तथा सम्पूर्ण विपत्तियोंसे छुटकारा दिलानेवाला है, उस सर्वश्रेष्ठ शिवकवचका मैं तुम्हारे हितके लिये उपदेश करूँगा।

विश्वव्यापी ईश्वर महादेवजीको नमस्कार करके मनुष्योंकी सब प्रकारसे रक्षा करनेवाले इस शिवस्वरूप कवचका (मैं) वर्णन करता हूँ॥ १॥

शुचौ देशे समासीनो यथावत्कल्पितासनः।
जितेन्द्रियो जितप्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम्॥ २॥
हृत्पुण्डरीकान्तरसंनिविष्टं
स्वतेजसा व्याप्तनभोऽवकाशम्।
अतीन्द्रियं सूक्ष्ममनन्तमाद्यं
ध्यायेत् परानन्दमयं महेशम्॥ ३॥
ध्यानावधूताखिलकर्मबन्ध-
श्चिरं चिदानन्दनिमग्नचेताः।
षडक्षरन्याससमाहितात्मा
शैवेन कुर्यात् कवचेन रक्षाम्॥ ४॥
मां पातु देवोऽखिलदेवतात्मा
संसारकूपे पतितं गभीरे।
तन्नाम दिव्यं वरमन्त्रमूलं
धुनोतु मे सर्वमघं हृदिस्थम्॥ ५॥

पवित्र स्थानमें यथायोग्य आसन बिछाकर बैठे। इन्द्रियोंको अपने वशमें करके प्राणायामपूर्वक अविनाशी भगवान् शिवका चिन्तन करे॥ २॥

'परमानन्दमय भगवान् महेश्वर हृदयकमलके भीतरकी कर्णिकामें विराजमान हैं, उन्होंने अपने तेजसे आकाशमण्डलको व्याप्त कर रखा है। वे इन्द्रियातीत, सूक्ष्म, अनन्त एवं सबके आदिकारण हैं'—इस तरह उनका चिन्तन करे॥ ३॥

इस प्रकार ध्यानके द्वारा समस्त कर्मबन्धनका नाश करके चिदानन्दमय भगवान् सदाशिवमें अपने चित्तको चिरकालतक लगाये रहे। फिर षडक्षरन्यासके द्वारा अपने मनको एकाग्र करके मनुष्य निम्नाङ्कित शिवकवचके द्वारा अपनी रक्षा करे॥ ४॥

'सर्वदेवमय महादेवजी गहरे संसारकूपमें गिरे हुए मुझ असहायकी रक्षा करें। उनका दिव्य नाम जो उनके श्रेष्ठ मन्त्रका मूल है, मेरे हृदयस्थित समस्त पापोंका नाश करे'॥ ५॥
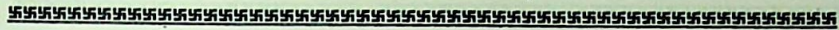
सर्वत्र मां रक्षतु विश्वमूर्ति-
ज्योतिर्मयानन्दघनश्चिदात्मा ।
अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः
स ईश्वरः पातु भयादशेषात् ॥ ६ ॥
यो भूस्वरूपेण बिभर्ति विश्वं
पायात् स भूमेर्गिरिशोऽष्टमूर्तिः ।
योऽपां स्वरूपेण नृणां करोति
संजीवनं सोऽवतु मां जलेभ्यः ॥ ७ ॥
कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा
सर्वाणि यो नृत्यति भूरिलीलः ।
स कालरुद्रोऽवतु मां दवाग्ने-
र्वात्यादिभीतेरखिलाच्च तापात् ॥ ८ ॥
प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो
विद्यावराभीतिकुठारपाणिः ।

सम्पूर्ण विश्व जिनकी मूर्ति है, जो ज्योतिर्मय आनन्दघनस्वरूप चिदात्मा हैं; वे भगवान् शिव मेरी सर्वत्र रक्षा करें। जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म हैं, महान् शक्तिसे सम्पन्न हैं, वे अद्वितीय 'ईश्वर' महादेवजी सम्पूर्ण भयोंसे मेरी रक्षा करें ॥ ६ ॥

जिन्होंने पृथ्वीरूपसे इस विश्वको धारण कर रखा है, वे अष्टमूर्ति 'गिरिश' पृथ्वीसे मेरी रक्षा करें। जो जलरूपसे जीवोंको जीवनदान दे रहे हैं, वे 'शिव' जलसे मेरी रक्षा करें ॥ ७ ॥

जो विशद लीलाविहारी 'शिव' कल्पके अन्तमें समस्त भुवनोंको दग्ध करके (आनन्दसे) नृत्य करते हैं, वे 'कालरुद्र' भगवान् दावानलसे, आँधी-तूफानके भयसे और समस्त तापोंसे मेरी रक्षा करें ॥ ८ ॥

प्रदीप्त विद्युत् एवं स्वर्णके सदृश जिनकी कान्ति है, विद्या, वर और अभय (मुद्राएँ) तथा कुल्हाड़ी जिनके करकमलोंमें सुशोभित हैं,

चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः
प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्त्रम्॥ ९ ॥
कुठारवेदाङ्कुशपाशशूल-
कपालढक्काक्षगुणान् दधानः।
चतुर्मुखो नीलरुचिस्त्रिनेत्रः
पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम्॥ १०॥
कुन्देन्दुशङ्खस्फटिकावभासो
वेदाक्षमालावरदाभयाङ्कः ।
त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरुप्रभावः
सद्योऽधिजातोऽवतु मां प्रतीच्याम्॥ ११॥
वराक्षमालाभयटङ्कहस्तः
सरोजकिञ्जल्कसमानवर्णः ।
त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखो मां
पायादुदीच्यां दिशि वामदेवः॥ १२॥

चतुर्मुख, त्रिलोचन हैं, वे भगवान् 'तत्पुरुष' पूर्व दिशामें निरन्तर मेरी रक्षा करें॥ ९॥

जिन्होंने अपने हाथोंमें कुल्हाड़ी, वेद, अङ्कुश, फंदा, त्रिशूल, कपाल, डमरू और रुद्राक्षकी मालाको धारण कर रखा है तथा जो चतुर्मुख हैं, वे नीलकान्ति त्रिनेत्रधारी भगवान् 'अघोर' दक्षिण दिशामें मेरी रक्षा करें॥ १०॥

कुन्द, चन्द्रमा, शङ्ख और स्फटिकके समान जिनकी उज्ज्वल कान्ति है, वेद, रुद्राक्षमाला, वरद और अभय (मुद्राओं)-से जो सुशोभित हैं, वे महाप्रभावशाली चतुरानन एवं त्रिलोचन भगवान् 'सद्योजात' पश्चिम दिशामें मेरी रक्षा करें॥ ११॥

जिनके हाथोंमें वर एवं अभय (मुद्राएँ), रुद्राक्षमाला और टाँकी विराजमान हैं तथा कमल-किञ्जल्कके सदृश जिनका गौर वर्ण है, वे सुन्दर चार मुखवाले त्रिनेत्रधारी भगवान् 'वामदेव' उत्तर दिशामें मेरी रक्षा करें॥ १२॥

वेदाभयेष्टाङ्कुशपाशटङ्क-
कपालढक्काक्षकशूलपाणिः ।
सितद्युतिः पञ्चमुखोऽवतान्मा-
मीशान ऊर्ध्वं परमप्रकाशः ॥ १३ ॥
मूर्द्धानमव्यान्मम चन्द्रमौलि-
र्भालं ममाव्यादथ भालनेत्रः ।
नेत्रे ममाव्याद् भगनेत्रहारी
नासां सदा रक्षतु विश्वनाथः ॥ १४ ॥
पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्तिः
कपोलमव्यात् सततं कपाली ।
वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो
जिह्वां सदा रक्षतु वेदजिह्वः ॥ १५ ॥

जिनके करकमलोंमें वेद, अभय और वर (मुद्राएँ), अङ्कुश, टाँकी, फंदा, कपाल, डमरू, रुद्राक्षमाला और त्रिशूल सुशोभित हैं, जो श्वेत आभासे युक्त हैं, वे परम प्रकाशरूप पञ्चमुख भगवान् 'ईशान' मेरी ऊपरसे रक्षा करें ॥ १३ ॥

भगवान् 'चन्द्रमौलि' मेरे सिरकी, 'भालनेत्र' मेरे ललाटकी, 'भगनेत्रहारी' मेरे नेत्रोंकी और 'विश्वनाथ' मेरी नासिकाकी सदा रक्षा करें ॥ १४ ॥

'श्रुतिगीतकीर्ति' मेरे कानोंकी, 'कपाली' निरन्तर मेरे कपोलोंकी, 'पञ्चमुख' मेरे मुखकी तथा 'वेदजिह्व' मेरी जीभकी सदा रक्षा करें ॥ १५ ॥

कण्ठं गिरीशोऽवतु नीलकण्ठः
पाणिद्वयं पातु पिनाकपाणिः।
दोर्मूलमव्यान्मम धर्मबाहु-
र्वक्षःस्थलं दक्षमखान्तकोऽव्यात्॥ १६॥
ममोदरं पातु गिरीन्द्रधन्वा
मध्यं ममाव्यान्मदनान्तकारी।
हेरम्बतातो मम पातु नाभिं
पायात् कटी धूर्जटिरीश्वरो मे॥ १७॥
ऊरुद्वयं पातु कुबेरमित्रो
जानुद्वयं मे जगदीश्वरोऽव्यात्।
जङ्घायुगं पुङ्गवकेतुरव्यात्
पादौ ममाव्यात् सुरवन्द्यपादः॥ १८॥
महेश्वरः पातु दिनादियामे
मां मध्ययामेऽवतु वामदेवः।

नीलवर्णके कण्ठकी शोभावाले भगवान् 'गिरीश' मेरे गलेकी, 'पिनाकपाणि' मेरे दोनों हाथोंकी, 'धर्मबाहु' मेरे दोनों कंधोंकी तथा 'दक्षयज्ञविध्वंसी' मेरे वक्षःस्थलकी रक्षा करें॥ १६॥

'गिरीन्द्रधन्वा' मेरे पेटकी, 'कामदेवके नाशक' भगवान् शिव मेरे मध्यदेशकी, 'गणेशजीके पिता' मेरी नाभिकी तथा 'धूर्जटिरीश्वर' [सिरपर जटा धारण करनेवाले ईश्वर] मेरी कटिकी रक्षा करें॥ १७॥

'कुबेरमित्र' मेरी दोनों जाँघोंकी, 'जगदीश्वर' मेरे दोनों घुटनोंकी, 'पुङ्गवकेतु' दोनों पिंडलियोंकी और 'सुरवन्द्यपाद' (जिनके चरणोंकी देवता वन्दना करते हैं) मेरे पैरोंकी सदैव रक्षा करें॥ १८॥

'महेश्वर' दिनके पहले पहरमें मेरी रक्षा करें। 'वामदेव' मध्य

त्रियम्बकः पातु तृतीययामे
वृषध्वजः पातु दिनान्त्ययामे॥ १९॥
पायान्निशादौ शशिशेखरो मां
गङ्गाधरो रक्षतु मां निशीथे।
गौरीपतिः पातु निशावसाने
मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्वकालम्॥ २०॥
अन्तःस्थितं रक्षतु शङ्करो मां
स्थाणुः सदा पातु बहिःस्थितं माम्।
तदन्तरे पातु पतिः पशूनां
सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात्॥ २१॥
तिष्ठन्तमव्याद्भुवनैकनाथः
पायाद् व्रजन्तं प्रमथाधिनाथः।
वेदान्तवेद्योऽवतु मां निषण्णं
मामव्ययः पातु शिवः शयानम्॥ २२॥

पहरमें मेरी रक्षा करें। 'त्र्यम्बक' तीसरे पहरमें और 'वृषध्वज' (वृष-चिह्न है ध्वजामें जिनके ऐसे) दिनके अन्तवाले पहरमें मेरी रक्षा करें॥ १९॥

'शशिशेखर' रात्रिके आरम्भमें, 'गङ्गाधर' अर्धरात्रिमें, 'गौरीपति' रात्रिके अन्तमें और 'मृत्युञ्जय' सर्वकालमें मेरी रक्षा करें॥ २०॥

'शङ्कर' घरके भीतर रहनेपर मेरी रक्षा करें। 'स्थाणु' बाहर रहनेपर मेरी रक्षा करें। 'पशुपति' बीचमें मेरी रक्षा करें और 'सदाशिव' सब ओर मेरी रक्षा करें॥ २१॥

'भुवनैकनाथ' खड़े रहनेके समय, 'प्रमथाधिनाथ' चलते समय, 'वेदान्तवेद्य' बैठे रहनेके समय और 'अविनाशी शिव' सोते समय मेरी रक्षा करें॥ २२॥

मार्गेषु मां रक्षतु नीलकण्ठः
शैलादिदुर्गेषु पुरत्रयारिः।
अरण्यवासादिमहाप्रवासे
पायान्मृगव्याध उदारशक्तिः॥ २३॥
कल्पान्तकाटोपपटुप्रकोपः
स्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोशः।
घोरारिसेनार्णवदुर्निवार-
महाभयाद् रक्षतु वीरभद्रः॥ २४॥
पत्त्यश्वमातङ्गघटावरूथ-
सहस्रलक्षायुतकोटिभीषणम्।
अक्षौहिणीनां शतमाततायिनां
छिन्द्यान्मृडो घोरकुठारधारया॥ २५॥
निहन्तु दस्यून् प्रलयानलार्चि-
र्ज्वलत् त्रिशूलं त्रिपुरान्तकस्य।

'नीलकण्ठ' गमन-मार्गपर मेरी रक्षा करें। 'त्रिपुरारि' पहाड़ आदि दुर्गम स्थानपर और उदारशक्ति 'मृगव्याध' वनवासादि महान् प्रवासोंमें मेरी रक्षा करें॥ २३॥

जिनका प्रबल क्रोध कल्पोंका अन्त करनेमें अत्यन्त पटु है, जिनके प्रचण्ड अट्टहाससे ब्रह्माण्ड काँप उठता है, वे 'वीरभद्रजी' समुद्रके सदृश भयानक शत्रुसेनाके दुर्निवार महान् भयसे मेरी रक्षा करें॥ २४॥

भगवान् 'मृड' मुझपर आततायीरूपसे आक्रमण करनेवालोंकी हजारों, दस हजारों, लाखों और करोड़ों पैदलों, घोड़ों और हाथियोंसे युक्त अति भीषण सैकड़ों अक्षौहिणी सेनाओंका अपने घोर कुठारधारसे भेदन करें॥ २५॥

भगवान् 'त्रिपुरान्तक'का प्रलयाग्निके समान ज्वालाओंसे युक्त जलता हुआ त्रिशूल (मेरे) दस्युदलका विनाश कर दे और उनका

शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान्
संत्रासयत्वीशधनुः पिनाकम् ॥ २६ ॥
दुःस्वप्नदुश्शकुनदुर्गतिदौर्मनस्य-
दुर्भिक्षदुर्व्यसनदुस्सहदुर्यशांसि ।
उत्पाततापविषभीतिमसद्ग्रहार्ति-
व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः ॥ २७ ॥

ॐ नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्त्वात्मकाय सकलतत्त्वविहाराय सकललोकैककर्त्रे सकललोकैकभर्त्रे सकललोकैकहर्त्रे सकललोकैकगुरवे सकल-लोकैकसाक्षिणे सकलनिगमगुह्याय सकलवरप्रदाय सकलदुरितार्त्तिभञ्जनाय सकलजगदभयंकराय सकललोकैक-शङ्कराय शशाङ्कशेखराय शाश्वतनिजाभासाय निर्गुणाय

पिनाक धनुष चीता, सिंह, रीछ, भेड़िया आदि हिंस्र जन्तुओंको संत्रस्त करे॥ २६॥

वे जगदीश्वर मेरे बुरे स्वप्न, बुरे शकुन, बुरी गति, मनकी दुष्ट भावना, दुर्भिक्ष, दुर्व्यसन, दुस्सह अपयश, उत्पात, संताप, विषभय, दुष्ट ग्रहोंकी पीड़ा तथा समस्त रोगोंका नाश करें॥ २७॥

'ॐ' जिनका वाचक है, सम्पूर्ण तत्त्व जिनके स्वरूप हैं, जो सम्पूर्ण तत्त्वोंमें विचरण करनेवाले, समस्त लोकोंके एकमात्र कर्ता और सम्पूर्ण विश्वके एकमात्र भरण-पोषण करनेवाले हैं, जो अखिल विश्वके एक ही संहारकारी, सब लोकोंके एकमात्र गुरु, समस्त संसारके एक ही साक्षी, सम्पूर्ण वेदोंके गूढ़ तत्त्व, सबको वर देनेवाले, समस्त पापों और पीड़ाओंका नाश करनेवाले, सारे संसारको अभय देनेवाले, सब लोकोंके एकमात्र कल्याणकारी, चन्द्रमाका मुकुट धारण करनेवाले, अपने सनातन-प्रकाशसे प्रकाशित होनेवाले, निर्गुण,

निरुपमाय नीरूपाय निराभासाय निरामयाय निष्प्रपञ्चाय निष्कलङ्काय निर्द्वन्द्वाय निस्सङ्गाय निर्मलाय निर्गमाय नित्यरूपविभवाय निरुपमविभवाय निराधाराय नित्यशुद्ध-बुद्धपरिपूर्णसच्चिदानन्दाद्वयाय परमशान्तप्रकाशतेजोरूपाय जय जय महारुद्र महारौद्र भद्रावतार दुःखदावदारण महाभैरव कालभैरव कल्पान्तभैरव कपालमालाधर खट्वाङ्गखड्ग-चर्मपाशाङ्कुशडमरुशूलचापबाणगदाशक्तिभिन्दिपाल-तोमरमुसलमुद्गरपट्टिशपरशुपरिघभुशुण्डीशतघ्नीचक्राद्यायुध-भीषणकर सहस्रमुख दंष्ट्राकराल विकटाट्टहासविस्फारित-ब्रह्माण्डमण्डलनागेन्द्रकुण्डल नागेन्द्रहार नागेन्द्रवलय नागेन्द्रचर्मधर मृत्युञ्जय त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक विरूपाक्ष विश्वेश्वर

उपमारहित, निराकार, निराभास, निरामय, निष्प्रपञ्च, निष्कलङ्क, निर्द्वन्द्व, निस्सङ्ग, निर्मल, गतिशून्य, नित्यरूप, नित्य-वैभवसे सम्पन्न, अनुपम ऐश्वर्यसे सुशोभित, आधारशून्य, नित्य-शुद्ध-बुद्ध, परिपूर्ण, सच्चिदानन्दघन, अद्वितीय तथा परम शान्त, प्रकाशमय, तेजःस्वरूप हैं, उन भगवान् सदाशिवको नमस्कार है। हे महारुद्र, महारौद्र, भद्रावतार, दुःख-दावाग्निविदारण, महाभैरव, कालभैरव, कल्पान्तभैरव, कपालमालाधारी! हे खट्वाङ्ग, खड्ग, ढाल, फंदा, अङ्कुश, डमरू, त्रिशूल, धनुष, बाण, गदा, शक्ति, भिन्दिपाल, तोमर, मुसल, मुद्गर, पट्टिश, परशु, परिघ, भुशुण्डी, शतघ्नी और चक्र आदि आयुधोंके द्वारा भयंकर हाथोंवाले! हजार मुख और दंष्ट्रासे कराल, विकट अट्टहाससे विशाल ब्रह्माण्ड-मण्डलका विस्तार करनेवाले, नागेन्द्र वासुकिको कुण्डल, हार, कङ्कण तथा ढालके रूपमें धारण करनेवाले, मृत्युञ्जय, त्रिनेत्र,

विश्वरूप वृषभवाहन विषभूषण विश्वतोमुख सर्वतो रक्ष रक्ष मां ज्वल ज्वल महामृत्युभयमपमृत्युभयं नाशय नाशय रोगभयमुत्सादयोत्सादय विषसर्पभयं शमय शमय चोरभयं मारय मारय मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय शूलेन विदारय विदारय कुठारेण भिन्धि भिन्धि खड्गेन छिन्धि छिन्धि खट्वाङ्गेन विपोथय विपोथय मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय बाणैः संताडय संताडय रक्षांसि भीषय भीषय भूतानि विद्रावय विद्रावय कूष्माण्डवेतालमारीगणब्रह्मराक्षसान् संत्रासय संत्रासय मामभयं कुरु कुरु वित्रस्तं मामाश्वासयाश्वासय

त्रिपुरनाशक, भयंकर नेत्रोंवाले, विश्वेश्वर, विश्वरूपमें प्रकट, बैलपर सवारी करनेवाले, विषको गलेमें भूषणरूपमें धारण करनेवाले तथा सब ओर मुखवाले शङ्कर! आपकी जय हो, जय हो! आप मेरी सब ओरसे रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये। प्रज्वलित होइये, प्रज्वलित होइये। मेरे महामृत्यु-भयका तथा अपमृत्युके भयका नाश कीजिये, नाश कीजिये। (बाहरी और भीतरी) रोग-भयको जड़से मिटा दीजिये, जड़से मिटा दीजिये। विष और सर्पके भयको शान्त कीजिये, शान्त कीजिये। चोरभयको मार डालिये, मार डालिये। मेरे (काम-क्रोध-लोभादि भीतरी तथा इन्द्रियोंके और शरीरके द्वारा होनेवाले पापकर्मरूपी बाहरी) शत्रुओंका उच्चाटन कीजिये, उच्चाटन कीजिये; त्रिशूलके द्वारा विदारण कीजिये, विदारण कीजिये; कुठारके द्वारा काट डालिये; काट डालिये, खड्गके द्वारा छेद डालिये, छेद डालिये, खट्वाङ्गके द्वारा नाश कीजिये, नाश कीजिये; मुसलके द्वारा पीस डालिये, पीस डालिये और बाणोंके द्वारा बींध डालिये, बींध डालिये। (आप मेरी हिंसा करनेवाले) राक्षसोंको भय दिखाइये, भय दिखाइये। भूतोंको भगा दीजिये, भगा दीजिये। कूष्माण्ड, वेताल, मारियों और ब्रह्मराक्षसोंको संत्रस्त कीजिये, संत्रस्त कीजिये। मुझको अभय कीजिये, अभय कीजिये। मुझ अत्यन्त डरे हुएको आश्वासन दीजिये, आश्वासन दीजिये।

नरकभयान्मामुद्धारयोद्धारय संजीवय संजीवय क्षुत्तृड्भ्यां मामाप्याययाप्यायय दुःखातुरं मामानन्दयानन्दय शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय त्र्यम्बक सदाशिव नमस्ते नमस्ते नमस्ते।

ऋषभ उवाच

इत्येतत्कवचं शैवं वरदं व्याहृतं मया।
सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम्॥ २८॥
यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवं कवचमुत्तमम्।
न तस्य जायते क्वापि भयं शम्भोरनुग्रहात्॥ २९॥
क्षीणायुर्मृत्युमापन्नो महारोगहतोऽपि वा।
सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति॥ ३०॥

नरक-भयसे मेरा उद्धार कीजिये, उद्धार कीजिये। मुझे जीवन-दान दीजिये, जीवन-दान दीजिये। क्षुधा-तृषाका निवारण करके मुझको आप्यायित कीजिये, आप्यायित कीजिये। आपकी जय हो, जय हो। मुझ दुःखातुरको आनन्दित कीजिये, आनन्दित कीजिये। शिवकवचसे मुझे आच्छादित कीजिये, आच्छादित कीजिये। त्र्यम्बक सदाशिव! आपको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।

ऋषभजी कहते हैं—इस प्रकार यह वरदायक शिवकवच मैंने कहा है। यह सम्पूर्ण बाधाओंको शान्त करनेवाला तथा समस्त देहधारियोंके लिये गोपनीय रहस्य है॥ २८॥

जो मनुष्य इस उत्तम शिवकवचको सदा धारण करता है, उसे भगवान् शिवके अनुग्रहसे कभी और कहीं भी भय नहीं होता॥ २९॥

जिसकी आयु क्षीण हो चली है, जो मरणासन्न हो गया है अथवा जिसे महान् रोगोंने मृतक-सा कर दिया है, वह भी इस कवचके प्रभावसे तत्काल सुखी हो जाता और दीर्घायु प्राप्त कर लेता है॥ ३०॥

सर्वदारिद्र्यशमनं सौमङ्गल्यविवर्धनम्।
यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते॥ ३१॥
महापातकसंघातैर्मुच्यते चोपपातकैः।
देहान्ते शिवमाप्नोति शिववर्मानुभावतः॥ ३२॥
त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवं कवचमुत्तमम्।
धारयस्व मया दत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि॥ ३३॥

॥ इति श्रीस्कान्दे महापुराणे एकाशीतिसाहस्र्यां तृतीये ब्रह्मोत्तरखण्डे अमोघशिवकवचं सम्पूर्णम्॥

शिवकवच समस्त दरिद्रताका शमन करनेवाला और सौमङ्गल्यको बढ़ानेवाला है, जो इसे धारण करता है, वह देवताओंसे भी पूजित होता है॥ ३१॥

इस शिवकवचके प्रभावसे मनुष्य महापातकोंके समूहों और उपपातकोंसे भी छुटकारा पा जाता है तथा शरीरका अन्त होनेपर शिवको पा लेता है॥ ३२॥

वत्स! तुम भी मेरे दिये हुए इस उत्तम शिवकवचको श्रद्धापूर्वक धारण करो, इससे तुम शीघ्र और निश्चय ही कल्याणके भागी होओगे॥ ३३॥

॥ इस प्रकार इक्यासी हजार श्लोकोंवाले स्कन्दपुराणके तीसरे ब्रह्मोत्तरखण्डमें वर्णित अमोघशिवकवच सम्पूर्ण हुआ॥

शिवनामावल्यष्टकम्

हे चन्द्रचूड मदनान्तक शूलपाणे
स्थाणो गिरीश गिरिजेश महेश शम्भो।
भूतेश भीतभयसूदन मामनाथं
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ १॥

हे पार्वतीहृदयवल्लभ चन्द्रमौले
भूताधिप प्रमथनाथ गिरीशजाप।
हे वामदेव भव रुद्र पिनाकपाणे
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ २॥

हे नीलकण्ठ वृषभध्वज पञ्चवक्त्र
लोकेश शेषवलयं प्रमथेश शर्व।
हे धूर्जटे पशुपते गिरिजापते मां
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ३॥

हे चन्द्रचूड! (चन्द्रमाको सिरमें धारण करनेवाले), हे मदनान्तक! (कामदेवको भस्म कर देनेवाले), हे शूलपाणे!, हे स्थाणो! (सदा स्थिर रहनेवाले), हे गिरीश तथा गिरिजापते, हे महेश, हे शम्भो, हे भूतेश, जरा, मृत्यु आदिसे भयभीतकी रक्षा करनेवाले, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ १॥

हे माता पार्वतीके हृदयेश्वर! हे चन्द्रमौले!, हे भूताधिप!, हे प्रमथ (रुण्ड-मुण्ड-तुण्ड) गणोंके स्वामिन्!, गिरिजाका पालन करनेवाले, हे वामदेव, हे भव, हे रुद्र, हे पिनाकपाणे, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ २॥

हे नीलकण्ठ, हे वृषकेतु, हे पञ्चमुख, लोकेश, शेषका कङ्कण धारण करनेवाले!, हे प्रमथगणोंके स्वामी, हे शर्व, हे धूर्जटि, हे पशुपते, हे गिरिजापते, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ३॥

हे विश्वनाथ शिव शङ्कर देवदेव
गङ्गाधर प्रमथनायक नन्दिकेश।
बाणेश्वरान्धकरिपो हर लोकनाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ४॥
वाराणसीपुरपते मणिकर्णिकेश
वीरेश दक्षमखकाल विभो गणेश।
सर्वज्ञ सर्वहृदयैकनिवास नाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ५॥
श्रीमन् महेश्वर कृपामय हे दयालो
हे व्योमकेश शितिकण्ठ गणाधिनाथ।
भस्माङ्गरागनृकपालकलापमाल
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ६॥
कैलासशैलविनिवास वृषाकपे हे
मृत्युञ्जय त्रिनयन त्रिजगन्निवास।

हे विश्वनाथ, हे शिव, हे शङ्कर, हे देवाधिदेव, हे गङ्गाको धारण करनेवाले, हे प्रमथगणोंके स्वामी, हे नन्दीश्वर, हे बाणेश्वर, हे अन्धकासुरके विनाशक, हे हर, हे लोकनाथ, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ४॥

हे वाराणसी नगरीके स्वामिन्, हे मणिकर्णिकेश, हे वीरेश, हे दक्षयज्ञके विध्वंसक, हे विभो, हे गणेश, हे सर्वज्ञ, हे सर्वान्तरात्मन्, हे नाथ! हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ५॥

हे श्रीमान् महेश्वर, हे कृपामय, हे दयालो, हे व्योमकेश, (आकाश ही है केश जिनका), हे नीलकण्ठ, हे गणाधिनाथ, हे भस्मको अङ्गराग बनानेवाले, मनुष्योंके कपालसमूहकी माला धारण करनेवाले, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ६॥

हे कैलासशैलपर निवास करनेवाले, हे वृषाकपे, हे मृत्युञ्जय, हे त्रिनयन,

नारायणप्रिय मदापह शक्तिनाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ ७ ॥
विश्वेश विश्वभवनाशक विश्वरूप
विश्वात्मक त्रिभुवनैकगुणाभिवेश।
हे विश्वबन्धु करुणामय दीनबन्धो
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ ८ ॥
गौरीविलासभवनाय महेश्वराय
पञ्चाननाय शरणागतरक्षकाय।
शर्वाय सर्वजगतामधिपाय तस्मै
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवनामावल्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥

हे तीनों लोकोंमें निवास करनेवाले, हे नारायणप्रिय, हे अहङ्कारको नष्ट करनेवाले, हे शक्तिनाथ, हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये ॥ ७ ॥

हे विश्वेश, हे संसारके जन्म-मरणके चक्रको दूर करनेवाले, हे विश्वरूप, हे विश्वात्मन्, हे त्रिभुवनके समस्त गुणोंसे परिपूर्ण, हे विश्वबन्धो, हे करुणामय, हे दीनबन्धो! हे जगदीश्वर शिव! संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये ॥ ८ ॥

भगवती पार्वतीके विलासके आधार महेश्वरके लिये, पञ्चाननके लिये, शरणागतोंके रक्षकके लिये, शर्व—शम्भुके लिये, सम्पूर्ण जगत्पतिके लिये एवं दारिद्र्य तथा दुःखको भस्म करनेवाले भगवान् शिवके लिये मेरा नमस्कार है ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित शिवनामावल्यष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

श्रीरुद्राष्टकम्

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं॥ १॥
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं
गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं
गुणागार संसारपारं नतोऽहं॥ २॥
तुषाराद्रि सङ्काश गौरं गभीरं
मनोभूत कोटि प्रभा श्रीशरीरं।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा
लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा॥ ३॥

हे ईशान! मैं मुक्तिस्वरूप, समर्थ, सर्वव्यापक, ब्रह्म, वेदस्वरूप, निज स्वरूपमें स्थित, निर्गुण, निर्विकल्प, निरीह, अनन्त ज्ञानमय और आकाशके समान सर्वत्र व्याप्त प्रभुको प्रणाम करता हूँ॥ १॥

जो निराकार हैं, ओंकाररूप आदिकारण हैं, तुरीय हैं, वाणी, बुद्धि और इन्द्रियोंके पथसे परे हैं, कैलासनाथ हैं, विकराल और महाकालके भी काल, कृपाल, गुणोंके आगार और संसारसे तारनेवाले हैं, उन भगवान्को मैं नमस्कार करता हूँ॥ २॥

जो हिमालयके समान श्वेतवर्ण, गम्भीर और करोड़ों कामदेवोंके समान कान्तिमान् शरीरवाले हैं, जिनके मस्तकपर मनोहर गङ्गाजी लहरा रही हैं, भालदेशमें बाल-चन्द्रमा सुशोभित होते हैं और गलेमें सर्पोंकी माला शोभा देती है॥ ३॥

चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं
प्रसन्नाननं नीलकंठं दयालं।
मृगाधीशचर्माम्बरं मुंडमालं
प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि॥ ४॥
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं
अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं।
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं
भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं॥ ५॥
कालातीत कल्याण कल्पान्तकारी
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी।
चिदानंद संदोह मोहापहारी
प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥ ६॥

जिनके कानोंमें कुण्डल हिल रहे हैं, जिनके नेत्र एवं भृकुटि सुन्दर और विशाल हैं, जिनका मुख प्रसन्न और कण्ठ नील है, जो बड़े ही दयालु हैं, जो बाघके चर्मका वस्त्र और मुण्डोंकी माला पहनते हैं, उन सर्वाधीश्वर प्रियतम शिवका मैं भजन करता हूँ॥ ४॥

जो प्रचण्ड, सर्वश्रेष्ठ, प्रगल्भ, परमेश्वर, पूर्ण, अजन्मा, कोटि सूर्यके समान प्रकाशमान, त्रिभुवनके शूलनाशक और हाथमें त्रिशूल धारण करनेवाले हैं, उन भावगम्य भवानीपतिका मैं भजन करता हूँ॥ ५॥

हे प्रभो! आप कलारहित, कल्याणकारी और कल्पका अन्त करनेवाले हैं। आप सर्वदा सत्पुरुषोंको आनन्द देते हैं, आपने त्रिपुरासुरका नाश किया था, आप मोहनाशक और ज्ञानानन्दघन परमेश्वर हैं, कामदेवके शत्रु हैं, आप मुझपर प्रसन्न हों, प्रसन्न हों॥ ६॥

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं
भजंतीह लोके परे वा नराणाम्।
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं
प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं॥ ७॥
न जानामि योगं जपं नैव पूजां
नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो॥ ८॥
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥ ९॥

॥ इति श्रीगोस्वामितुलसीदासकृतं श्रीरुद्राष्टकं सम्पूर्णम्॥

मनुष्य जबतक उमाकान्त महादेवजीके चरणारविन्दोंका भजन नहीं करते, उन्हें इहलोक या परलोकमें कभी सुख तथा शान्तिकी प्राप्ति नहीं होती और न उनका सन्ताप ही दूर होता है। हे समस्त भूतोंके निवासस्थान भगवान् शिव! आप मुझपर प्रसन्न हों॥ ७॥

हे प्रभो! हे शम्भो! हे ईश! मैं योग, जप और पूजा कुछ भी नहीं जानता, हे शम्भो! मैं सदा-सर्वदा आपको नमस्कार करता हूँ। जरा, जन्म और दुःखसमूहसे सन्तप्त होते हुए मुझ दुःखीकी दुःखसे आप रक्षा कीजिये॥ ८॥

जो मनुष्य भगवान् शङ्करकी तुष्टिके लिये ब्राह्मणद्वारा कहे हुए इस 'रुद्राष्टक'का भक्तिपूर्वक पाठ करते हैं, उनपर शङ्करजी प्रसन्न होते हैं॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीगोस्वामी तुलसीदासरचित श्रीरुद्राष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

लिङ्गाष्टकम्

ब्रह्ममुरारिसुरार्चितलिङ्गं निर्मलभासितशोभितलिङ्गम्।
जन्मजदुःखविनाशकलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ १॥
देवमुनिप्रवरार्चितलिङ्गं कामदहं करुणाकरलिङ्गम्।
रावणदर्पविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ २॥
सर्वसुगन्धिसुलेपितलिङ्गं बुद्धिविवर्धनकारणलिङ्गम्।
सिद्धसुरासुरवन्दितलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ३॥
कनकमहामणिभूषितलिङ्गं फणिपतिवेष्टितशोभितलिङ्गम्।
दक्षसुयज्ञविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ४॥
कुङ्कुमचन्दनलेपितलिङ्गं पङ्कजहारसुशोभितलिङ्गम्।

जो लिङ्ग (-स्वरूप) ब्रह्मा, विष्णु एवं समस्त देवगणोंद्वारा पूजित तथा निर्मल कान्तिसे सुशोभित है और जो लिङ्ग जन्मजन्य दुःखका विनाशक अर्थात् मोक्षप्रदायक है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ १॥

जो शिवलिङ्ग श्रेष्ठ देवगण एवं ऋषि-प्रवरोंद्वारा पूजित, कामदेवको नष्ट करनेवाला, करुणाकी खानि, रावणके घमण्डको नष्ट करनेवाला है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ २॥

जो लिङ्ग सभी दिव्य सुगन्धि (अगर-तगर-चन्दन आदि)-से सुलेपित, 'ज्ञानमिच्छेत्तु शङ्करात्' इस उक्तिद्वारा बुद्धि-वृद्धिकारक, समस्त सिद्ध, देवता एवं असुरगणोंसे वन्दित है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ३॥

साम्बसदाशिवका लिङ्गरूप विग्रह सुवर्ण, माणिक्यादि महामणियोंसे विभूषित तथा नागराजद्वारा वेष्टित (लिपटे) होनेसे अत्यन्त सुशोभित है और (अपने श्वसुर) दक्ष-यज्ञका विनाशक है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ४॥

सदाशिवका लिङ्गरूप विग्रह (शरीर) कुंकुम, चन्दन आदिसे लिम्पित (पुता हुआ), दिव्य कमलकी मालासे सुशोभित और अनेक जन्म-

सञ्चितपापविनाशनलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ५॥
देवगणार्चितसेवितलिङ्गं भावैर्भक्तिभिरेव च लिङ्गम्।
दिनकरकोटिप्रभाकरलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ६॥
अष्टदलोपरि वेष्टितलिङ्गं सर्वसमुद्भवकारणलिङ्गम्।
अष्टदरिद्रविनाशितलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ७॥
सुरगुरुसुरवरपूजितलिङ्गं सुरवनपुष्पसदार्चितलिङ्गम्।
परात्परं परमात्मकलिङ्गं तत्प्रणमामि सदाशिवलिङ्गम्॥ ८॥
लिङ्गाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ ९॥

॥ इति लिङ्गाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जन्मान्तरके संचित पापको नष्ट करनेवाला है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ५॥

भावभक्तिद्वारा समस्त देवगणोंसे पूजित एवं सेवित, करोड़ों सूर्योंकी प्रखर कान्तिसे युक्त उस भगवान् सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ६॥

अष्टदल कमलसे वेष्टित सदाशिवका लिङ्गरूप विग्रह सभी चराचर (स्थावर-जङ्गम)-की उत्पत्तिका कारणभूत एवं अष्ट दरिद्रोंका विनाशक है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ७॥

जो लिङ्ग देवगुरु बृहस्पति एवं देवश्रेष्ठ इन्द्रादिके द्वारा पूजित, निरन्तर नन्दनवनके दिव्य पुष्पोंद्वारा अर्चित, परात्पर एवं परमात्मस्वरूप है, उस सदाशिव-लिङ्गको मैं प्रणाम करता हूँ॥ ८॥

जो साम्ब-सदाशिवके समीप पुण्यकारी इस 'लिङ्गाष्टक' का पाठ करता है, वह निश्चित ही शिवलोक (कैलास)-में निवास करता है तथा शिवके साथ रहते हुए अत्यन्त प्रसन्न होता है॥ ९॥

॥ इस प्रकार लिङ्गाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीपशुपत्यष्टकम्

ध्यानम्

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

स्तोत्रम्

पशुपतिं द्युपतिं धरणीपतिं भुजगलोकपतिं च सतीपतिम्।
प्रणतभक्तजनार्तिहरं परं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ १॥

चाँदीके पर्वतसमान जिनकी श्वेत कान्ति है, जो सुन्दर चन्द्रमाको आभूषणरूपसे धारण करते हैं, रत्नमय अलङ्कारोंसे जिनका शरीर उज्ज्वल है, जिनके हाथोंमें परशु, मृग, वर और अभय हैं, जो प्रसन्न हैं, पद्मके आसनपर विराजमान हैं, देवतागण जिनके चारों ओर खड़े होकर स्तुति करते हैं, जो बाघकी खाल पहनते हैं, जो विश्वके आदि, जगत्‌की उत्पत्तिके बीज और समस्त भयोंको हरनेवाले हैं, जिनके पाँच मुख और तीन नेत्र हैं, उन महेश्वरका प्रतिदिन ध्यान करे।

अरे मनुष्यो! जो समस्त प्राणियों, स्वर्ग, पृथ्वी और नागलोकके पति हैं, दक्ष-कन्या सतीके स्वामी हैं, शरणागत प्राणियों और भक्तजनोंकी पीड़ा दूर करनेवाले हैं, उन परमपुरुष पार्वतीवल्लभ शङ्करजीको भजो॥ १॥

न जनको जननी न च सोदरो न तनयो न च भूरिबलं कुलम्।
अवति कोऽपि न कालवशं गतं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ २॥
मुरजडिण्डिमवाद्यविलक्षणं मधुरपञ्चमनादविशारदम्।
प्रमथभूतगणैरपि सेवितं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ३॥
शरणदं सुखदं शरणान्वितं शिव शिवेति शिवेति नतं नृणाम्।
अभयदं करुणावरुणालयं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ४॥
नरशिरोरचितं मणिकुण्डलं भुजगहारमुदं वृषभध्वजम्।
चितिरजोधवलीकृतविग्रहं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ५॥
मखविनाशकरं शशिशेखरं सततमध्वरभाजिफलप्रदम्।

अरे मनुष्यो! कालके वशमें पड़े हुए जीवको पिता, माता, भाई, बेटा, अत्यन्त बल और कुल—इनमेंसे कोई भी नहीं बचा सकता, इसलिये तुम गिरिजापतिको भजो॥ २॥

अरे मनुष्यो! जो मृदङ्ग और डमरू बजानेमें निपुण हैं, मधुर पञ्चम स्वरके गायनमें कुशल हैं, प्रमथ और भूतगण जिनकी सेवामें रहते हैं, उन गिरिजापतिको भजो॥ ३॥

अरे मनुष्यो! 'शिव! शिव! शिव!' कहकर मनुष्य जिनको प्रणाम करते हैं, जो शरणागतोंको शरण, सुख और अभय देनेवाले हैं, उन दयासागर गिरिजापतिको भजो॥ ४॥

अरे मनुष्यो! जो नरमुण्डरूपी मणियोंका कुण्डल और साँपोंका हार पहनते हैं, जिनका शरीर चिताकी धूलिसे धवल है, उन वृषभध्वज गिरिजापतिको भजो॥ ५॥

अरे मनुष्यो! जिन्होंने दक्ष-यज्ञका विध्वंस किया था; जिनके मस्तकपर चन्द्रमा सुशोभित हैं, जो यज्ञ करनेवालोंको सदा ही फल

प्रलयदग्धसुरासुरमानवं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ६॥
मदमपास्य चिरं हृदि संस्थितं मरणजन्मजराभयपीडितम्।
जगदुदीक्ष्य समीपभयाकुलं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ७॥
हरिविरञ्चिसुराधिपपूजितं यमजनेशधनेशनमस्कृतम्।
त्रिनयनं भुवनत्रितयाधिपं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्॥ ८॥
पशुपतेरिदमष्टकमद्भुतं विरचितं पृथिवीपतिसूरिणा।
पठति संशृणुते मनुजः सदा शिवपुरीं वसते लभते मुदम्॥ ९॥

॥ इति श्रीपृथिवीपतिसूरिविरचितं श्रीपशुपत्यष्टकं सम्पूर्णम्॥

देनेवाले हैं और जो प्रलयकी अग्निमें देवता, दानव और मानवोंको दग्ध करनेवाले हैं, उन गिरिजापतिको भजो॥ ६॥

अरे मनुष्यो! जगत्‌को जन्म, जरा और मरणके भयसे पीड़ित, सामने उपस्थित भयसे व्याकुल देखकर बहुत दिनोंसे हृदयमें सञ्चित मदका त्याग कर उन गिरिजापतिको भजो॥ ७॥

अरे मनुष्यो! विष्णु, ब्रह्मा और इन्द्र जिनकी पूजा करते हैं, यम, जनेश और कुबेर जिनको प्रणाम करते हैं, जिनके तीन नेत्र हैं तथा जो त्रिभुवनके स्वामी हैं, उन गिरिजापतिको भजो॥ ८॥

जो मनुष्य पृथ्वीपति सूरिके बनाये हुए इस अद्भुत पशुपत्यष्टकका सदा पाठ और श्रवण करता है, वह शिवपुरीमें निवास करता और आनन्दित होता है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीपृथिवीपतिसूरिविरचित श्रीपशुपत्यष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीशङ्कराष्टकम्

हे वामदेव शिवशङ्कर दीनबन्धो
काशीपते पशुपते पशुपाशनाशिन्।
हे विश्वनाथ भवबीज जनार्तिहारिन्
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ १॥

हे भक्तवत्सल सदाशिव हे महेश
हे विश्वतात जगदाश्रय हे पुरारे।
गौरीपते मम पते मम प्राणनाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ २॥

हे दुःखभञ्जक विभो गिरिजेश शूलिन्
हे वेदशास्त्रविनिवेद्य जनैकबन्धो।
हे व्योमकेश भुवनेश जगद्विशिष्ट
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ३॥

हे वामदेव, शिवशङ्कर, दीनबन्धु, काशीपति, हे पशुपति, प्राणियोंके भव-बन्धनको नष्ट करनेवाले, हे विश्वनाथ संसारके कारण और भक्तोंकी पीडाका हरण करनेवाले, हे जगदीश्वर! इस संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ १॥

हे भक्तवत्सल सदाशिव, हे महेश, जगत्के पिता, संसारके आधार, हे पुर नामक दैत्यके विध्वंसक, गौरीपति, मेरे रक्षक एवं मेरे प्राणनाथ, हे जगदीश्वर, आप इस संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ २॥

हे समस्त दुःखोंके विध्वंसक, विभु, हे गिरिजेश!, हे शूली, आपका स्वरूप वेद एवं शास्त्रसे ही गम्य है, समस्त चराचरके एकमात्र बन्धुरूप, हे व्योमकेश, हे त्रिभुवनके स्वामी, जगत्से विलक्षण, हे जगदीश्वर! इस संसारके गहन दुःखोंसे आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ३॥
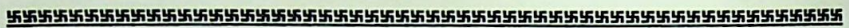
हे धूर्जटे गिरिश हे गिरिजार्धदेह
हे सर्वभूतजनक प्रमथेश देव।
हे सर्वदेवपरिपूजितपादपद्म
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ४॥
हे देवदेव वृषभध्वज नन्दिकेश
कालीपते गणपते गजचर्मवास।
हे पार्वतीश परमेश्वर रक्ष शम्भो
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ५॥
हे वीरभद्र भववैद्य पिनाकपाणे
हे नीलकण्ठ मदनान्त शिवाकलत्र।
वाराणसीपुरपते भवभीतिहारिन्
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ६॥

हे धूर्जटि, कैलाश पर्वतपर शयन करनेवाले, हे अर्धनारीश्वर (पार्वतीरूप अर्धशरीरवाले) तथा हे समस्त चराचरके उत्पादक, हे प्रमथगणोंके स्वामी, देव, समस्त देवताओंसे वन्दित चरणकमलवाले हे जगदीश्वर! आप इस संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ४॥

हे देवाधिदेव वृषभध्वज, नन्दीके स्वामी, कालीपति, समस्त वीरभद्रादि गणोंके एकमात्र अधिपति, गजचर्म धारण करनेवाले, हे पार्वतीवल्लभ! हे परमेश्वर शम्भु! आप इस संसारके गहन दुःखोंसे मेरी रक्षा कीजिये॥ ५॥

हे वीरभद्रस्वरूप, संसाररूपी रोगके चिकित्सक, अपने करकमलोंमें पिनाक नामक धनुष धारण करनेवाले, हे नीलकण्ठ, कामदेवका अन्त करनेवाले, पार्वतीके स्वामी एवं वाराणसी नगरीके अधिपति, संसाररूपी भयके विनाशक, हे जगदीश्वर! इस संसारके गहन दुःखोंसे आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ६॥

हे कालकाल मृड शर्व सदासहाय
हे भूतनाथ भवबाधक हे त्रिनेत्र।
हे यज्ञशासक यमान्तक योगिवन्द्य
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ७॥
हे वेदवेद्य शशिशेखर हे दयालो
हे सर्वभूतप्रतिपालक शूलपाणे।
हे चन्द्रसूर्यशिखिनेत्र चिदेकरूप
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष॥ ८॥
श्रीशङ्कराष्टकमिदं योगानन्देन निर्मितम्।
सायं प्रातः पठेन्नित्यं सर्वपापविनाशकम्॥ ९॥

॥ इति श्रीयोगानन्दतीर्थविरचितं श्रीशङ्कराष्टकं सम्पूर्णम्॥

हे कालके भी महाकालस्वरूप, हे सुखस्वरूप, हे शिव, हे सदा सहायक, हे भूतनाथ, भवको बाधित करनेवाले, त्रिनेत्रधारी, यज्ञके नियन्ता, यमके भी विनाशक, परम योगियोंके द्वारा वन्दनीय, हे जगदीश्वर! इस संसारके गहन दुःखोंसे आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ७॥

हे वेद-प्रतिपाद्य, हे शशिशेखर, हे दयालु, प्राणिमात्रकी रक्षा करनेमें निरन्तर तत्पर, हे अपने करकमलोंमें त्रिशूल धारण करनेवाले, सूर्य, चन्द्र एवं अग्निरूप त्रिनेत्रधारी चिन्मात्रस्वरूप, हे जगदीश्वर! इस संसारके गहन दुःखोंसे आप मेरी रक्षा कीजिये॥ ८॥

श्रीस्वामी योगानन्दतीर्थद्वारा विरचित इस 'श्रीशङ्कराष्टक'का जो भक्तगण श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सायं तथा प्रातः नित्य पाठ करते हैं, उनके समस्त पाप निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं॥ ९॥

॥ इस प्रकार योगानन्दतीर्थविरचित श्रीशङ्कराष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीविश्वनाथाष्टकम्

गङ्गातरङ्गरमणीयजटाकलापं
गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम् ।
नारायणप्रियमनङ्गमदापहारं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ १॥
वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं
वागीशविष्णुसुरसेवितपादपीठम् ।
वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ २॥
भूताधिपं भुजगभूषणभूषिताङ्गं
व्याघ्राजिनाम्बरधरं जटिलं त्रिनेत्रम्।
पाशाङ्कुशाभयवरप्रदशूलपाणिं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ३॥

जिनकी जटाएँ गङ्गाजीकी लहरोंसे सुन्दर प्रतीत होती हैं, जिनका वामभाग सदा पार्वतीजीसे सुशोभित रहता है, जो नारायणके प्रिय और कामदेवके मदका नाश करनेवाले हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ १॥

वाणीद्वारा जिनका वर्णन नहीं हो सकता, जिनके अनेक गुण और अनेक स्वरूप हैं, ब्रह्मा, विष्णु और अन्य देवता जिनकी चरणपादुकाका सेवन करते हैं, जो अपने सुन्दर वामाङ्गके द्वारा ही सपत्नीक हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ २॥

जो भूतोंके अधिपति हैं, जिनका शरीर सर्परूपी गहनोंसे विभूषित है, जो बाघकी खालका वस्त्र पहनते हैं, जिनके हाथोंमें पाश, अङ्कुश, अभय, वर और शूल हैं, उन जटाधारी त्रिनेत्र काशीपति विश्वनाथको भज॥ ३॥

शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं
भालेक्षणानलविशोषितपञ्चबाणम् ।
नागाधिपारचितभासुरकर्णपूरं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥ ४ ॥

पञ्चाननं दुरितमत्तमतङ्गजानां
नागान्तकं दनुजपुङ्गवपन्नगानाम् ।
दावानलं मरणशोकजराटवीनां
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥ ५ ॥

तेजोमयं सगुणनिर्गुणमद्वितीय-
मानन्दकन्दमपराजितमप्रमेयम् ।
नागात्मकं सकलनिष्कलमात्मरूपं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम् ॥ ६ ॥

रागादिदोषरहितं स्वजनानुरागं
वैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम् ।

जो चन्द्रमाद्वारा प्रकाशित किरीटसे शोभित हैं, जिन्होंने अपने भालस्थ नेत्रकी अग्निसे कामदेवको दग्ध कर दिया, जिनके कानोंमें बड़े-बड़े साँपोंके कुण्डल चमक रहे हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ४ ॥

जो पापरूपी मतवाले हाथियोंके मारनेवाले सिंह हैं, दैत्यसमूहरूपी साँपोंका नाश करनेवाले गरुड हैं तथा जो मरण, शोक और बुढ़ापारूपी भीषण वनको जलानेवाले दावानल हैं, ऐसे काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ५ ॥

जो तेजपूर्ण, सगुण, निर्गुण, अद्वितीय, आनन्दकन्द, अपराजित और अतुलनीय हैं, जो अपने शरीरपर साँपोंको धारण करते हैं, जिनका रूप ह्रास-वृद्धिरहित है, ऐसे आत्मस्वरूप काशीपति विश्वनाथको भज ॥ ६ ॥

जो रागादि दोषोंसे रहित हैं, अपने भक्तोंपर कृपा रखते हैं, वैराग्य और शान्तिके स्थान हैं, पार्वतीजी सदा जिनके साथ रहती हैं,

माधुर्यधैर्यसुभगं गरलाभिरामं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ७ ॥
आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ।
आदाय हृत्कमलमध्यगतं परेशं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ८ ॥
वाराणसीपुरपतेः स्तवनं शिवस्य
व्याख्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः।
विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्तिं
सम्प्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम्॥ ९ ॥
विश्वनाथाष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ १०॥

॥ इति श्रीमहर्षिव्यासप्रणीतं श्रीविश्वनाथाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जो धीरता और मधुर स्वभावसे सुन्दर जान पड़ते हैं तथा जो कण्ठमें गरलके चिह्नसे सुशोभित हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ ७॥

सब आशाओंको छोड़कर, दूसरोंकी निन्दा त्यागकर और पापकर्मसे अनुराग हटाकर, चित्तको समाधिमें लगाकर, हृदयकमलमें प्रकाशमान परमेश्वर काशीपति विश्वनाथको भज॥ ८॥

जो मनुष्य काशीपति शिवके इस आठ श्लोकोंके स्तवनका पाठ करता है, वह विद्या, धन, प्रचुर सौख्य और अनन्त कीर्ति प्राप्तकर देहावसान होनेपर मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है॥ ९॥

जो शिवके समीप इस 'विश्वनाथाष्टक'का पाठ करता है, वह शिवलोक प्राप्त करता और शिवके साथ आनन्दित होता है॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीमहर्षिव्यासप्रणीत श्रीविश्वनाथाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

बिल्वाष्टकम्

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रयायुधम्।
त्रिजन्मपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम्॥ १॥
त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च ह्यच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः।
शिवपूजां करिष्यामि बिल्वपत्रं शिवार्पणम्॥ २॥
अखण्डबिल्वपत्रेण पूजिते नन्दिकेश्वरे।
शुद्ध्यन्ति सर्वपापेभ्यो बिल्वपत्रं शिवार्पणम्॥ ३॥
शालग्रामशिलामेकां विप्राणां जातु अर्पयेत्।
सोमयज्ञमहापुण्यं बिल्वपत्रं शिवार्पणम्॥ ४॥
दन्तिकोटिसहस्राणि वाजपेयशतानि च।

तीन दलवाला, सत्त्व, रज एवं तमःस्वरूप, सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि—त्रिनेत्रस्वरूप और आयुधत्रय स्वरूप, तथा तीनों जन्मोंके पापोंको नष्ट करनेवाला बिल्वपत्र मैं भगवान् शिवके लिये समर्पित करता हूँ॥ १॥

छिद्ररहित, सुकोमल, तीन पत्तेवाले, मङ्गल प्रदान करनेवाले बिल्वपत्रसे मैं भगवान् शिवकी पूजा करूँगा। यह बिल्वपत्र शिवको समर्पित करता हूँ॥ २॥

अखण्ड बिल्वपत्रसे नन्दिकेश्वर भगवान्‌की पूजा करनेपर मनुष्य सभी पापोंसे मुक्त होकर शुद्ध हो जाते हैं। मैं बिल्वपत्र शिवको समर्पित करता हूँ॥ ३॥

मेरे द्वारा किया गया भगवान् शिवको यह बिल्वपत्रका समर्पण, कदाचित् ब्राह्मणोंको शालग्रामकी शिलाके समान तथा सोमयज्ञके अनुष्ठानके समान महान् पुण्यशाली हो। (अतः मैं बिल्वपत्र भगवान् शिवको समर्पित करता हूँ)॥ ४॥

मेरे द्वारा किया गया भगवान् शिवको यह बिल्वपत्रका समर्पण हजारों करोड़ गजदान, सैकड़ों वाजपेय यज्ञके अनुष्ठान तथा करोड़ों

कोटिकन्यामहादानं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥ ५ ॥
लक्ष्म्याः स्तनत उत्पन्नं महादेवस्य च प्रियम्।
बिल्ववृक्षं प्रयच्छामि बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥ ६ ॥
दर्शनं बिल्ववृक्षस्य स्पर्शनं पापनाशनम्।
अघोरपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥ ७ ॥
मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे।
अग्रतः शिवरूपाय बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥ ८ ॥
बिल्वाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोकमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥

॥ इति बिल्वाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

कन्याओंके महादानके समान हो। (अतः मैं बिल्वपत्र भगवान् शिवको समर्पित करता हूँ) ॥ ५ ॥

विष्णु-प्रिया भगवती लक्ष्मीके वक्षःस्थलसे प्रादुर्भूत तथा महादेवजीके अत्यन्त प्रिय बिल्ववृक्षको मैं समर्पित करता हूँ, यह बिल्वपत्र भगवान् शिवको समर्पित है ॥ ६ ॥

बिल्ववृक्षका दर्शन और उसका स्पर्श समस्त पापोंको नष्ट करनेवाला तथा शिवापराधका संहार करनेवाला है। यह बिल्वपत्र भगवान् शिवको समर्पित है ॥ ७ ॥

बिल्वपत्रका मूलभाग ब्रह्मरूप, मध्यभाग विष्णुरूप एवं अग्रभाग शिवरूप है, ऐसा बिल्वपत्र भगवान् शिवको समर्पित है ॥ ८ ॥

जो भगवान् शिवके समीप इस पुण्य प्रदान करनेवाले 'बिल्वाष्टक'का पाठ करता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त होकर अन्तमें शिवलोकको प्राप्त करता है ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार बिल्वाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

मूर्त्यष्टकस्तोत्रम्

भार्गव उवाच

त्वं भाभिराभिरभिभूय तमस्समस्त-
मस्तं नयस्यभिमतानि निशाचराणाम्।
देदीप्यसे दिवमणे गगने हिताय
लोकत्रयस्य जगदीश्वर तन्नमस्ते॥ १॥
लोकेऽतिवेलमतिवेलमहामहोभि-
र्निर्भासि कौ च गगनेऽखिललोकनेत्रः।
विद्राविताखिलतमास्सुतमो हिमांशो
पीयूषपूरपरिपूरित तन्नमस्ते॥ २॥
त्वं पावने पथि सदा गतिरस्युपास्यः
कस्त्वां विना भुवनजीवन जीवतीह।

भार्गवने कहा—सूर्यस्वरूप भगवन्! आप त्रिलोकीका हित करनेके लिये आकाशमें प्रकाशित होते हैं और अपनी इन किरणोंसे समस्त अन्धकारको अभिभूत करके रातमें विचरनेवाले असुरोंका मनोरथ नष्ट कर देते हैं। जगदीश्वर! आपको नमस्कार है॥ १॥

घोर अन्धकारके लिये चन्द्रस्वरूप शङ्कर! आप अमृतके प्रवाहसे परिपूर्ण तथा जगत्के सभी प्राणियोंके नेत्र हैं। आप अपनी अमर्याद तेजोमय किरणोंसे आकाशमें और भूतलपर अपार प्रकाश फैलाते हैं जिससे सारा अन्धकार दूर हो जाता है; आपको प्रणाम है॥ २॥

सर्वव्यापिन्! आप पावन पथ—योगमार्गका आश्रय लेनेवालोंकी सदा गति तथा उपास्यदेव हैं। भुवन-जीवन! आपके बिना भला इस

स्तब्धप्रभञ्जनविवर्धितसर्वजन्तो

संतोषिताहिकुल सर्वग वै नमस्ते ॥ ३ ॥

विश्वैकपावक नतावक पावकैक-

शक्ते ऋते मृतवतामृतदिव्यकार्यम् ।

प्राणिष्यदो जगदहो जगदन्तरात्म-

स्त्वं पावकः प्रतिपदं शमदो नमस्ते ॥ ४ ॥

पानीयरूप परमेश जगत्पवित्र

चित्रातिचित्रसुचरित्रकरोऽसि नूनम् ।

विश्वं पवित्रममलं किल विश्वनाथ

पानीयगाहनत एतदतो नतोऽस्मि ॥ ५ ॥

लोकमें कौन जीवित रह सकता है। सर्पकुलके संतोषदाता! आप निश्चल वायुरूपसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी वृद्धि करनेवाले हैं, आपको अभिवादन है ॥ ३ ॥

विश्वके एकमात्र पावनकर्ता! आप शरणागतरक्षक और अग्निकी एकमात्र शक्ति हैं। पावक आपका ही स्वरूप है। आपके बिना मृतकोंका वास्तविक दिव्य कार्य—दाह आदि नहीं हो सकता। जगत्के अन्तरात्मन्! आप प्राणशक्तिके दाता, जगत्स्वरूप और पद-पदपर शान्ति प्रदान करनेवाले हैं; आपके चरणोंमें मैं सिर झुकाता हूँ ॥ ४ ॥

जलस्वरूप परमेश्वर! आप निश्चय ही जगत्के पवित्रकर्ता और चित्र-विचित्र सुन्दर चरित्र करनेवाले हैं। विश्वनाथ! जलमें अवगाहन करनेसे आप विश्वको निर्मल एवं पवित्र बना देते हैं; आपको नमस्कार है ॥ ५ ॥
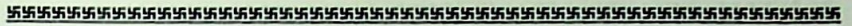
आकाशरूप बहिरन्तरुतावकाश-
दानाद् विकस्वरमिहेश्वर विश्वमेतत्।
त्वत्तस्सदा सदय संश्वसिति स्वभावात्
संकोचमेति भवतोऽस्मि नतस्ततस्त्वाम्॥ ६॥

विश्वम्भरात्मक बिभर्षि विभोऽत्र विश्वं
को विश्वनाथ भवतोऽन्यतमस्तमोऽरिः।
स त्वं विनाशय तमो मम चाहिभूष
स्तव्यात् परः परपरं प्रणतस्ततस्त्वाम्॥ ७॥

आत्मस्वरूप तव रूपपरम्पराभि-
राभिस्ततं हर चराचररूपमेतत्।

आकाशरूप ईश्वर! आपसे अवकाश प्राप्त करनेके कारण यह विश्व बाहर और भीतर विकसित होकर सदा स्वभाववश श्वास लेता है अर्थात् इसकी परम्परा चलती रहती है तथा आपके द्वारा यह संकुचित भी होता है अर्थात् नष्ट हो जाता है; इसलिये दयालु भगवन्! मैं आपके आगे नतमस्तक होता हूँ॥ ६॥

विश्वम्भरात्मक! आप ही इस विश्वका भरण-पोषण करते हैं। सर्वव्यापिन्! आपके अतिरिक्त दूसरा कौन अज्ञानान्धकारको दूर करनेमें समर्थ हो सकता है। अतः विश्वनाथ! आप मेरे अज्ञानरूपी तमका विनाश कर दीजिये। नागभूषण! आप स्तवनीय पुरुषोंमें सबसे श्रेष्ठ हैं; आप परात्पर प्रभुको मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ॥ ७॥

आत्मस्वरूप शङ्कर! आप समस्त प्राणियोंकी अन्तरात्मामें निवास करनेवाले, प्रत्येक रूपमें व्याप्त हैं और मैं आप परमात्माका जन हूँ।

सर्वान्तरात्मनिलय प्रतिरूपरूप
नित्यं नतोऽस्मि परमात्मजनोऽष्टमूर्ते॥ ८॥
इत्यष्टमूर्तिभिरिमाभिरबन्धवन्धो
युक्तः करोषि खलु विश्वजनीनमूर्ते।
एतत्ततं सुविततं प्रणतप्रणीत
सर्वार्थसार्थपरमार्थ ततो नतोऽस्मि॥ ९॥

॥ इति श्रीशिवपुराणे रुद्रसंहितायां मूर्त्यष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

अष्टमूर्ते! आपकी इन रूपपरम्पराओंसे यह चराचर विश्व विस्तारको प्राप्त हुआ है, अतः मैं सदासे आपको नमस्कार करता हूँ॥ ८॥

हे मुक्तपुरुषोंके वन्धो! आप विश्वके समस्त प्राणियोंके स्वरूप, प्रणतजनोंके सम्पूर्ण योगक्षेमका निर्वाह करनेवाले और परमार्थस्वरूप हैं। आप अपनी इन अष्टमूर्तियोंसे युक्त होकर इस फैले हुए विश्वको भलीभाँति विस्तृत करते हैं, अतः आपको मेरा अभिवादन है॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवपुराणके रुद्रसंहितामें मूर्त्यष्टकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

हर! जनि बिसरब मो ममता, हम नर अधम परम पतिता।
तुअ-सन अधम-उधार न दोसर हम-सन नहिं पतिता॥
जम के द्वार जबाब कौन देब, जखन बुझब निज गुन कर बतिया।
जब जम किंकर कोपि पठाएत, तखन के होत धरहरिया॥
भन बिद्यापति सुकवि पुनीत मति, संकर बिपरीत बानी।
असरन-सरन-चरन सिर नाओत, दया करु दिअ सुलपानी॥

शिवाष्टकम्

तस्मै नमः परमकारणकारणाय
दीप्तोज्ज्वलज्ज्वलितपिङ्गललोचनाय।
नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय॥ १॥
श्रीमत्प्रसन्नशशिपन्नगभूषणाय
शैलेन्द्रजावदनचुम्बितलोचनाय ।
कैलासमन्दरमहेन्द्रनिकेतनाय
लोकत्रयार्तिहरणाय नमः शिवाय॥ २॥
पद्मावदातमणिकुण्डलगोवृषाय
कृष्णागरुप्रचुरचन्दनचर्चिताय ।
भस्मानुषक्तविकचोत्पलमल्लिकाय
नीलाब्जकण्ठसदृशाय नमः शिवाय॥ ३॥

जो कारणके भी परम कारण हैं, [अग्निशिखाके समान] अति देदीप्यमान उज्ज्वल और पिङ्गल नेत्रोंवाले हैं, सर्पराजोंके हार कुण्डलादिसे भूषित हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादिको भी वर देनेवाले हैं, उन श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है॥ १॥

शोभायमान एवं निर्मल चन्द्रकला तथा सर्प ही जिनके भूषण हैं, गिरिराजकुमारी अपने मुखसे जिनके लोचनोंका चुम्बन करती हैं, कैलास और महेन्द्रगिरि जिनके निवासस्थान हैं तथा जो त्रिलोकीके दुःखको दूर करनेवाले हैं, उन श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है॥ २॥

जो स्वच्छ पद्मरागमणिके कुण्डलोंसे दीप्त किरणोंकी वर्षा करनेवाले, अगरु और बहुत-से चन्दनसे चर्चित तथा भस्म एवं प्रफुल्लित कमल और जूहीसे सुशोभित हैं, ऐसे नीलकमलसदृश कण्ठवाले श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है॥ ३॥
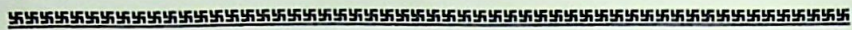
लम्बत्सपिङ्गलजटामुकुटोत्कटाय
दंष्ट्राकरालविकटोत्कटभैरवाय ।
व्याघ्राजिनाम्बरधराय मनोहराय
त्रैलोक्यनाथनमिताय नमः शिवाय॥ ४॥

दक्षप्रजापतिमहामखनाशनाय
क्षिप्रं महात्रिपुरदानवघातनाय।
ब्रह्मोर्जितोर्ध्वगकरोटिनिकृन्तनाय
योगाय योगनमिताय नमः शिवाय॥ ५॥

संसारसृष्टिघटनापरिवर्तनाय
रक्षःपिशाचगणसिद्धसमाकुलाय ।
सिद्धोरगग्रहगणेन्द्रनिषेविताय
शार्दूलचर्मवसनाय नमः शिवाय॥ ६॥

लटकती हुई पिङ्गलवर्णकी जटाओंके सहित मुकुट धारण करनेसे जो उत्कट जान पड़ते हैं, तीक्ष्ण दाढ़ोंके कारण जो अति विकट और भयानक प्रतीत होते हैं, व्याघ्रचर्म धारण किये हुए हैं, अति मनोहर हैं तथा तीनों लोकोंके अधीश्वर भी जिनके चरणोंमें झुकते हैं, उन श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है॥ ४॥

दक्षप्रजापतिके महायज्ञको ध्वंस करनेवाले, महान् त्रिपुरासुरको शीघ्र मार डालनेवाले, दर्पयुक्त ब्रह्माके ऊर्ध्वमुख पञ्चम सिरका छेदन करनेवाले, योगस्वरूप तथा योगसे नमस्कृत शङ्करको मेरा नमस्कार है॥ ५॥

जो कल्प-कल्पमें संसार-रचनाका परिवर्तन करनेवाले हैं; राक्षस, पिशाच और सिद्धगणोंसे घिरे रहते हैं; सिद्ध, सर्प, ग्रहगण तथा इन्द्रादिसे सेवित हैं तथा जो व्याघ्रचर्म धारण किये हुए हैं, उन श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है॥ ६॥

भस्माङ्गरागकृतरूपमनोहराय
सौम्यावदातवनमाश्रितमाश्रिताय ।
गौरीकटाक्षनयनार्धनिरीक्षणाय
गोक्षीरधारधवलाय नमः शिवाय ॥ ७ ॥
आदित्यसोमवरुणानिलसेविताय
यज्ञाग्निहोत्रवरधूमनिकेतनाय ।
ऋक्सामवेदमुनिभिः स्तुतिसंयुताय
गोपाय गोपनमिताय नमः शिवाय ॥ ८ ॥
शिवाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसंनिधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

भस्मरूपी अङ्गरागसे जिन्होंने अपने रूपको अत्यन्त मनोहर बनाया है तथा जो अति शान्त और सुन्दर वनका आश्रय लेनेवालोंके आश्रय हैं, श्रीपार्वतीजीके कटाक्षकी ओर जो बाँकी चितवनसे निहार रहे हैं और गोदुग्धकी धाराके समान जिनका श्वेत वर्ण है, उन श्रीशङ्करको मेरा नमस्कार है ॥ ७ ॥

सूर्य, चन्द्र, वरुण और पवनसे जो सेवित हैं, यज्ञ और अग्निहोत्रके धूममें जिनका निवास है, ऋक्-सामादि वेद और मुनिजन जिनकी स्तुति करते हैं, उन नन्दीश्वर-पूजित गौओंका पालन करनेवाले श्रीशङ्करजीको मेरा नमस्कार है ॥ ८ ॥

जो इस पवित्र 'शिवाष्टक' को श्रीमहादेवजीके समीप पढ़ता है, वह शिव-लोकको प्राप्त होता है और शङ्करजीके साथ आनन्द प्राप्त करता है ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित शिवाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

विश्वमूर्त्यष्टकस्तोत्रम्

अकारणायाखिलकारणाय नमो महाकारणकारणाय।
नमोऽस्तु कालानललोचनाय कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ १॥
नमोऽस्त्वहीनाभरणाय नित्यं नमः पशूनां पतये मृडाय।
वेदान्तवेद्याय नमो नमस्ते कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ २॥
नमोऽस्तु भक्तेर्हितदानदात्रे सर्वौषधीनां पतये नमोऽस्तु।
ब्रह्मण्यदेवाय नमो नमस्ते कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ३॥
कालाय कालानलसंनिभाय हिरण्यगर्भाय नमो नमस्ते।
हालाहलादाय सदा नमस्ते कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ४॥

जिनका कोई कारण नहीं है, पर जो स्वयं संसारके कारण एवं महाकारणके भी कारण हैं, उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ, कालाग्निको नेत्रमें धारण करनेवाले शिवको नमस्कार करता हूँ, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ १॥

श्रेष्ठ आभूषणको धारण करनेवाले, समस्त प्राणियोंके स्वामी भगवान् मृडको नित्य नमस्कार है। उपनिषदोंके द्वारा जिनका अवबोध प्राप्त होता है, उन्हें बार-बार नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ २॥

भक्ति और कल्याणका दान करनेवाले तथा सभी औषधियोंके स्वामीको नमस्कार है। ब्रह्मण्यदेवको बार-बार नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ३॥

काल और कालाग्निके सदृश हिरण्यगर्भको बार-बार नमस्कार है। हालाहलको पीनेवालेको सर्वदा नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ४॥

विरिञ्चिनारायणशक्रमुख्यैरज्ञातवीर्याय नमो नमस्ते।
सूक्ष्माऽतिसूक्ष्माय नमोऽघहन्त्रे कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ५॥
अनेककोटीन्दुनिभाय तेऽस्तु नमो गिरीणां पतयेऽघहन्त्रे।
नमोऽस्तु ते भक्तविपद्धराय कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ६॥
सर्वान्तरस्थाय विशुद्धधाम्ने नमोऽस्तु ते दुष्टकुलान्तकाय।
समस्ततेजोनिधये नमस्ते कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ७॥
यज्ञाय यज्ञादिफलप्रदात्रे यज्ञस्वरूपाय नमो नमस्ते।
नमो महानन्दमयाय नित्यं कृतागसं मामव विश्वमूर्ते॥ ८॥

ब्रह्मा, विष्णु एवं शक्रादि देवताओंके द्वारा भी जिनके पराक्रम नहीं जाने जा सकते, उन्हें बार-बार नमस्कार है। जो सूक्ष्मसे भी जो सूक्ष्म हैं और पापके विनाश करनेवाले हैं, ऐसे शिवको मैं नमस्कार करता हूँ, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ५॥

अनन्तानन्त चन्द्रमाके समान आह्लाद प्रदान करनेवाले आपको मेरा नमस्कार है, गिरीश, अघनाशक आपको नमस्कार है, भक्तोंकी विपत्तिको दूर करनेवाले, आपको मेरा नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ६॥

सभीमें आत्मरूपमें स्थित, विशुद्ध तेजसे युक्त, दुष्ट कुलोंका नाश करनेवाले, आपको नमस्कार है, समस्त तेजोंके निधि आपको नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ७॥

यज्ञ तथा यज्ञ आदिका फल प्रदान करनेवाले एवं यज्ञस्वरूप आपको बारम्बार नमस्कार है। परमानन्दस्वरूप आपको नित्य नमस्कार है, हे विश्वमूर्ते! मैं कृतापराध (अपराधी) हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ८॥

इति स्तुतो महादेवो दक्षं प्राह कृताञ्जलिम्।
यत् तेऽभिलषितं दक्ष तत् ते दास्याम्यहं ध्रुवम्॥ ९ ॥
अन्यच्च शृणु भो दक्ष यच्च किञ्चिद् ब्रवीम्यहम्।
यत्कृतं हि मम स्तोत्रं त्वया भक्त्या प्रजापते॥ १०॥
ये श्रद्धया पठिष्यन्ति मानवाः प्रत्यहं शुभम्।
निष्कल्मषा भविष्यन्ति सापराधा अपि ध्रुवम्॥ ११ ॥

॥ इति दक्षकृतं विश्वमूर्त्यष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

हाथ जोड़े हुए दक्षके द्वारा इस प्रकार स्तुति किये जानेपर, भगवान् शिवने कहा—हे दक्ष! तुम्हारा जो अभीष्ट है, उसे मैं अवश्य ही दूँगा॥ ९ ॥

हे दक्ष और भी जो मैं कह रहा हूँ उसे तुम सुनो। हे प्रजापते! तुमने जो मेरी स्तुति की है, उस शुभ स्तुतिको जो लोग श्रद्धासे प्रतिदिन पढ़ेंगे, वे अपराध करनेपर भी सर्वथा पापसे रहित और निष्कल्मष हो जायँगे॥ १०-११ ॥

॥ इस प्रकार दक्षकृतविश्वमूर्त्यष्टकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

अरध अंग अंगना, नामु जोगीसु, जोगपति।
बिषम असन, दिगबसन, नाम बिस्वेसु बिस्वगति॥
कर कपाल, सिर माल ब्याल, बिष-भूति-बिभूषन।
नाम सुद्ध, अबिरुद्ध, अमर अनवद्य, अदूषन॥
बिकराल-भूत-बेताल-प्रिय भीम नाम, भवभयदमन।
सब बिधि समर्थ, महिमा अकथ, तुलसिदास-संसय-समन॥

(कवितावली १५१)

श्रीकालभैरवाष्टकम्

देवराजसेव्यमानपावनाङ्घ्रिपङ्कजं
व्यालयज्ञसूत्रमिन्दुशेखरं कृपाकरम्।
नारदादियोगिवृन्दवन्दितं दिगम्बरं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥ १॥

भानुकोटिभास्वरं भवाब्धितारकं परं
नीलकण्ठमीप्सितार्थदायकं त्रिलोचनम्।
कालकालमम्बुजाक्षमक्षशूलमक्षरं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे॥ २॥

जिनके पवित्र चरण-कमलकी सेवा देवराज इन्द्र सदा करते रहते हैं तथा जिन्होंने शिरोभूषणके रूपमें चन्द्रमा और सर्पका यज्ञोपवीत धारण किया है। जो दिगम्बर-वेशमें हैं एवं नारद आदि योगियोंका समूह जिसकी वन्दना करता रहता है, ऐसे काशी नगरीके स्वामी कृपालु कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ॥ १॥

जो करोड़ों सूर्योंके समान दीप्तिमान्, संसार-समुद्रसे तारनेवाले, श्रेष्ठ, नीले कण्ठवाले, अभीष्ट वस्तुको देनेवाले, तीन नयनोंवाले, कालके भी महाकाल, कमलके समान नेत्रवाले तथा अक्षमाला और त्रिशूल धारण करनेवाले हैं, उन काशी नगरीके स्वामी अविनाशी कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ॥ २॥

शूलटङ्कपाशदण्डपाणिमादिकारणं
श्यामकायमादिदेवमक्षरं निरामयम्।
भीमविक्रमं प्रभुं विचित्रताण्डवप्रियं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ३ ॥
भुक्तिमुक्तिदायकं प्रशस्तचारुविग्रहं
भक्तवत्सलं स्थितं समस्तलोकविग्रहम्।
विनिक्वणन्मनोज्ञहेमकिङ्किणीलसत्कटिं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ४ ॥
धर्मसेतुपालकं त्वधर्ममार्गनाशकं
कर्मपाशमोचकं सुशर्मदायकं विभुम्।

जिनके शरीरकी कान्ति श्याम वर्णकी है तथा जिन्होंने अपने हाथोंमें शूल, टङ्क, पाश और दण्ड धारण किया है। जो आदिदेव अविनाशी और आदिकारण हैं, जो त्रिविध तापोंसे रहित हैं और जिनका पराक्रम महान् है। जो सर्वसमर्थ हैं एवं विचित्र ताण्डव जिनको प्रिय है, ऐसे काशी नगरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ॥ ३॥

जिनका स्वरूप सुन्दर और प्रशंसनीय है, सारा संसार ही जिनका शरीर है, जिनके कटिप्रदेशमें सोनेकी सुन्दर करधनी रुनझुन करती हुई सुशोभित हो रही है, जो भक्तोंके प्रिय एवं स्थिर-शिवस्वरूप हैं, ऐसे भुक्ति तथा मुक्ति प्रदान करनेवाले काशी नगरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ॥ ४॥

जो धर्म-सेतुके पालक एवं अधर्मके नाशक हैं तथा कर्मपाशसे छुड़ानेवाले, प्रशस्त कल्याण प्रदान करनेवाले और व्यापक हैं;
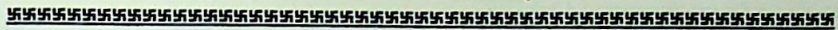
स्वर्णवर्णशेषपाशशोभिताङ्गमण्डलं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ५ ॥
रत्नपादुकाप्रभाभिरामपादयुग्मकं
नित्यमद्वितीयमिष्टदैवतं निरञ्जनम्।
मृत्युदर्पनाशनं करालदंष्ट्रमोक्षणं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ६ ॥
अट्टहासभिन्नपद्मजाण्डकोशसन्ततिं
दृष्टिपातनष्टपापजालमुग्रशासनम् ।
अष्टसिद्धिदायकं कपालमालिकन्धरं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ७ ॥

जिनका सारा अङ्गमण्डल स्वर्णवर्णवाले शेषनागसे सुशोभित है, ऐसे काशीपुरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ ॥ ५ ॥

जिनके चरणयुगल रत्नमयी पादुका (खड़ाऊँ)-की कान्तिसे सुशोभित हो रहे हैं, जो निर्मल (मलरहित—स्वच्छ), अविनाशी, अद्वितीय तथा सभीके इष्टदेवता हैं। मृत्युके अभिमानको नष्ट करनेवाले हैं तथा कालके भयंकर दाँतोंसे मोक्ष दिलानेवाले हैं, ऐसे काशी नगरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ ॥ ६ ॥

जिनके अट्टहाससे ब्रह्माण्डोंके समूह विदीर्ण हो जाते हैं, जिनकी कृपामयी दृष्टिके पातमात्रसे पापोंके समूह विनष्ट हो जाते हैं, जिनका शासन कठोर है, जो आठों प्रकारकी सिद्धियाँ प्रदान करनेवाले तथा कपालकी माला धारण करनेवाले हैं, ऐसे काशी नगरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ ॥ ७ ॥

भूतसङ्घनायकं विशालकीर्तिदायकं
काशिवासलोकपुण्यपापशोधकं विभुम्।
नीतिमार्गकोविदं पुरातनं जगत्पतिं
काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ ८ ॥
कालभैरवाष्टकं पठन्ति ये मनोहरं
ज्ञानमुक्तिसाधनं विचित्रपुण्यवर्धनम्।
शोकमोहदैन्यलोभकोपतापनाशनं
ते प्रयान्ति कालभैरवाङ्घ्रिसंनिधिं ध्रुवम्॥ ९ ॥

॥ इति श्रीकालभैरवाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

जो समस्त प्राणिसमुदायके नायक हैं, जो अपने भक्तोंको विशाल कीर्ति प्रदान करनेवाले हैं, जो काशीमें निवास करनेवाले सभी लोगोंके पुण्य तथा पापोंका शोधन करनेवाले और व्यापक हैं, जो नीतिमार्गके महान् वेत्ता, पुरातन-से-पुरातन हैं, संसारके स्वामी हैं, ऐसे काशी नगरीके अधीश्वर कालभैरवकी मैं आराधना करता हूँ॥ ८॥

ज्ञान और मुक्ति प्राप्त करनेके साधनरूप, भक्तोंके विचित्र पुण्यकी वृद्धि करनेवाले, शोक-मोह-दीनता-लोभ-कोप तथा तापको नष्ट करनेवाले इस मनोहर 'कालभैरवाष्टक' का जो लोग पाठ करते हैं, वे निश्चय ही कालभैरवके चरणोंकी संनिधि प्राप्त कर लेते हैं॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीकालभैरवाष्टकस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

श्रीशिवाष्टकम्

पुरारिः कामारिर्निखिलभयहारी पशुपति-
र्महेशो भूतेशो नगपतिसुतेशो नटपतिः।
कपाली यज्ञाली विबुधदलपाली सुरपतिः
सुराराध्यः शर्वो हरतु भवभीतिं भवपतिः॥ १॥
शये शूलं भीमं दितिजभयदं शत्रुदलनं
गले मौण्डीमालां शिरसि च दधानः शशिकलाम्।
जटाजूटे गङ्गामघनिवहभङ्गां सुरनदीं
सुराराध्यः शर्वो हरतु भवभीतिं भवपतिः॥ २॥

हे पुर नामक राक्षसको नष्ट करनेवाले पुरारि तथा कामको भस्म करनेवाले कामारि! आप सभी प्रकारके भयको नष्ट करनेवाले हैं। आप जीवोंके स्वामी, महान् ऐश्वर्यसम्पन्न, भूतगणोंके अधिपति, पर्वतराज हिमालयकी पुत्री पार्वतीके ईश तथा नटेश्वर हैं। आप कपाल धारण करनेवाले, यज्ञस्वरूप, देवसमुदायके पालक तथा देवताओंके स्वामी हैं। देवोंके आराध्य एवं संसारके स्वामी भगवान् शर्व! आप संसारके भयका हरण कर लें॥ १॥

आपके हाथोंमें शत्रुओं एवं दैत्योंका संहार करनेवाला भयावह त्रिशूल सुशोभित हो रहा है। आप गलेमें मुण्डोंकी माला और सिरपर चन्द्रकलाको धारण किये हुए हैं। आपकी जटाओंमें पापोंको नष्ट करनेवाली देवनदी गङ्गा सुशोभित हो रही हैं। देवोंके आराध्य एवं संसारके स्वामी भगवान् शर्व! आप संसारके भयका हरण कर लें॥ २॥
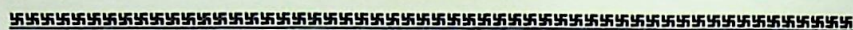
भवो भर्गो भीमो भवभयहरो भालनयनो
वदान्यः सम्मान्यो निखिलजनसौजन्यनिलयः।
शरण्यो ब्रह्मण्यो विबुधगणगण्यो गुणनिधिः
सुराराध्यः शर्वो हरतु भवभीतिं भवपतिः॥ ३॥
त्वमेवेदं विश्वं सृजसि सकलं ब्रह्मवपुषा
तथा लोकान् सर्वानवसि हरिरूपेण नियतम्।
लयं लीलाधाम त्रिपुरहररूपेण कुरुषे
त्वदन्यो नो कश्चिज्जगति सकलेशो विजयते॥ ४॥
यथा रज्जौ भानं भवति भुजगस्यान्धकरिपो
तथा मिथ्याज्ञानं सकलविषयाणामिह भवे।

आप सबको उत्पन्न करनेवाले, पापको भूँज डालनेवाले, दुष्ट जनोंको डरानेवाले तथा संसारके भयको दूर करनेवाले हैं। आपके ललाटपर नेत्र सुशोभित है। आप दान देनेमें बड़े उदार, सम्मान्य और सभी लोगोंके लिये सौजन्यधाम हैं, आप शरण्य (शरणागतकी रक्षा करनेवाले), ब्रह्मण्य (ब्राह्मणोंकी रक्षा करनेवाले), देवगणोंमें अग्रगण्य और गुणोंके निधान हैं। देवताओंके आराध्य एवं संसारके स्वामी भगवान् शर्व! आप संसारके भयका हरण कर लें॥ ३॥

ब्रह्माके रूपमें आप ही इस सारे विश्वकी रचना करते हैं, विष्णुरूपमें इन सभी लोकोंकी रक्षा भी निश्चितरूपसे आप ही करते हैं और हे लीलाधाम! त्रिपुरहरके रूपमें आप ही इस संसारका प्रलय भी करते हैं। संसारमें आपके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है, जो सबसे अधिक उत्कृष्ट (सकलेश) कहा जा सके। आपकी जय हो॥ ४॥

हे अन्धकासुरके नाशक! इस संसारमें सभी विषयोंका ज्ञान

त्वमेकश्चित्सर्गस्थितिलयवितानं वितनुषे
भवेन्माया तत्र प्रकृतिपदवाच्या सहचरी॥ ५॥
प्रभो साऽनिर्वाच्या चितिविरहिता विभ्रमकरी
तवच्छायापत्त्या सकलघटनामञ्चति सदा।
रथो यन्तुर्योगाद् व्रजति पदवीं निर्भयतया
तथैवासौ कर्त्री त्वमसि शिव साक्षी त्रिजगताम्॥ ६॥
नमामि त्वामीशं सकलसुखदातारमजरं
परेशं गौरीशं गणपतिसुतं वेदविदितम्।
वरेण्यं सर्वज्ञं भुजगवलयं विष्णुदयितं
गणाध्यक्षं दक्षं प्रणतजनतापार्तिहरणम्॥ ७॥

वैसे ही झूठा है, जैसे रज्जुमें सर्पका ज्ञान। आप ही सृष्टि, स्थिति और प्रलयके विस्तारमें एकमात्र मूलकारण हैं। प्रकृति कहलानेवाली माया इस कार्यमें केवल आपकी सहायिका ही जान पड़ती है॥ ५॥

हे प्रभो! आपकी वह (माया) अनिर्वचनीय है (इसे न सत् कहा जा सकता है और न असत्), इसमें चैतन्यका अभाव है। यह भ्रम उत्पन्न करनेवाली है। आपकी सहायता पाकर वह सम्पूर्ण घटनाएँ वैसे ही घटाया करती हैं, जैसे जड़ रथ अपने गन्तव्यतक निर्भय दौड़ता दिखायी देता है, किंतु उसके दौड़नेमें सारथिकी सहायता रहती है। इसी प्रकारसे यह माया भी कर्त्री दिखायी देती है। हे शिव! आप ही तीनों लोकोंके साक्षी हैं॥ ६॥

आप ईश हैं, समस्त सुखोंको देनेवाले हैं, अजर हैं, परात्पर परमेश्वर हैं। आप पार्वतीके पति हैं, गणेशजी आपके पुत्र हैं। आपका परिचय वेदोंके द्वारा ही प्राप्त होता है। आप वरणीय तथा सब कुछ जाननेवाले हैं, आभूषणके रूपमें आप सर्पका कंकण धारण करते हैं। आप भगवान् विष्णुको प्रिय (या विष्णुके प्रिय) हैं, आप गणाध्यक्ष, दक्ष तथा शरणागतोंकी विपत्तियोंका नाश करनेवाले हैं, आपको मैं नमस्कार करता हूँ॥ ७॥

गुणातीतं शम्भुं बुधगणमुखोद्गीतयशसं
विरूपाक्षं देवं धनपतिसखं वेदविनुतम्।
विभुं नत्वा याचे भवतु भवतः श्रीचरणयो-
र्विशुद्धा सद्भक्तिः परमपुरुषस्यादिविदुषः ॥ ८ ॥
शङ्करे यो मनः कृत्वा पठेच्छ्रीशङ्कराष्टकम्।
प्रीतस्तस्मै महादेवो ददाति सकलेप्सितम् ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीशिवाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

हे विरूपाक्ष (त्रिनयन) भगवान् शिव! आप प्रकृतिके गुणोंसे अतीत हैं। आपके यशका गान विद्वज्जन किया करते हैं तथा वेदोंके द्वारा आपकी स्तुति की गयी है। आप कुबेरके मित्र और व्यापक हैं, आपको प्रणाम करके मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि परम पुरुष और आदि विद्वान् आपके श्रीचरणोंमें मेरी विशुद्ध सद्भक्ति बनी रहे ॥ ८ ॥

भगवान् शङ्करमें चित्त लगाकर जो इस 'श्रीशिवाष्टक' का पाठ करेगा, उसपर वे प्रसन्न होंगे और उसकी समस्त कामनाओंको पूर्ण कर देंगे ॥ ९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

म्हारे घर रमतो जोगिया तू आव।
कानाँ बिच कुंडल, गले बिच सेली, अंग भभूत रमाय॥
तुम देख्याँ बिण कल न परत है, ग्रिह अंगणो न सुहाय।
मीराँ के प्रभु हरि अबिनासी, दरसन द्यौ ण मोकूँ आय॥
(मीराँ-पदावली)

श्रीशिवजटाजूटस्तुतिः

स धूर्जटिजटाजूटो जायतां विजयाय वः।
यत्रैकपलितभ्रान्तिं करोत्यद्यापि जाह्नवी॥ १॥

चूडापीडकपालसंकुलगलन्मन्दाकिनीवारयो
विद्युत्प्रायललाटलोचनपुटज्योतिर्विमिश्रत्विषः।
पान्तु त्वामकठोरकेतकशिखासंदिग्धमुग्धेन्दवो
भूतेशस्य भुजङ्गवल्लिवलयस्त्रङ्नद्धजूटा जटाः॥ २॥

गङ्गावारिभिरुक्षिताः फणिफणैरुत्पल्लवास्तच्छिखा-
रत्नैः कोरकिताः सितांशुकलया स्मेरैकपुष्पश्रियः।

जिस भगवान् शङ्करके जटाजूटमें रहनेवाली गङ्गाजी उनके जटाजूटमें पके हुए बालकी भ्रान्ति आज भी पैदा कर रही हैं—वह भगवान् धूर्जटिका जटाजूट आपलोगोंके विजयके लिये हो॥ १॥

भगवान् शिवके सिरकी जटा भुजङ्गरूपी लताओंकी वलयरूपी मालासे बँधी हुई है। उससे शिरोभूषण एवं कपालसे व्याप्त मन्दाकिनीके जलकी धारा निकल रही है। शिवके ललाटप्रदेशमें स्थित नेत्रसे बिजलीकी-सी ज्योति छिटक रही है। उस अवस्थामें सुन्दर चन्द्रमामें केतकीके छोटे-से सुकोमल फूलका भ्रम हो जाता है। ऐसा भगवान् शङ्करका वह जटाजूट आप सबकी रक्षा करे॥ २॥

धूर्जटि भगवान् शङ्करकी जटा निरन्तर गङ्गाजलसे अभिषिक्त हो रही है। साँपोंके फणोंके कारण जटाका अग्रभाग ऊपर उठे हुए पल्लवोंकी भाँति प्रतीत हो रहा है। साँपोंके फणोंमें लगी हुई मणियोंकी ज्वाला जटाप्रदेशमें विखरित हो रही है। चन्द्रमाकी किरणोंके कारण ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो विकसित पुष्पोंकी छटा बिखरी हुई हो।
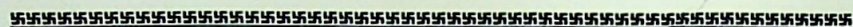
आनन्दाश्रुपरिप्लुताक्षिहुतभुग्धूमैर्मिलद्दोहदा
नाल्पं कल्पलता: फलं ददतु वोऽभीष्टं जटा धूर्जटे: ॥ ३ ॥

॥ इति श्रीशिवजटाजूटस्तुति: सम्पूर्णा ॥

श्रीशिवस्तुति:

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥ १ ॥
चन्द्राननार्धदेहाय चन्द्रांशुसितमूर्तये ।
चन्द्रार्कानलनेत्राय चन्द्रार्धशिरसे नम: ॥ २ ॥

॥ इति श्रीशिवस्तुति: सम्पूर्णा ॥

आनन्दाश्रुओंसे परिपूरित होनेके कारण अग्निरूपी नेत्रसे निकलती हुई धूम्रशिखाके समान, कल्पलतासदृश समस्त इच्छाओंको पूर्ण करनेवाली भगवान् धूर्जटि (शिव)-की जटा आपलोगोंको समस्त अभीष्ट प्रदान करे।

॥ इस प्रकार श्रीशिवजटाजूटस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

ऊँचे सिरको चुम्बन करनेवाले अर्थात् ऊँचे सिरपर विराजमान चन्द्रमारूपी चँवरसे मनोहर तथा त्रैलोक्यरूपी नगरके निर्माणमें सर्वप्रथम मूल स्तम्भ बने हुए श्रीशिवजीको नमस्कार है ॥ १ ॥

शिवके आधे अङ्गमें चन्द्रानना—चन्द्रमुखी पार्वती हैं, चन्द्रकी किरणोंके समान इनकी मूर्ति गौर है, इनका पहला (वाम) नेत्र चन्द्र है तो दूसरा (दक्षिण) सूर्य और तीसरा नेत्र अग्नि ललाटमें है एवं आधा चन्द्रमा जिनके सिरपर है, ऐसे अर्धनारीश्वर शिवको प्रणाम है ॥ २ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

गौरीश्वरस्तुतिः

दिव्यं वारि कथं यतः सुरधुनी मौलौ कथं पावको
दिव्यं तद्धि विलोचनं कथमहिर्दिव्यं स चाङ्गे तव।
तस्माद् द्यूतविधौ त्वयाऽद्य मुषितो हारः परित्यज्यता-
मित्थं शैलभुवा विहस्य लपितः शम्भुः शिवायास्तु वः॥ १॥

श्रीकण्ठस्य सकृत्तिकार्द्रभरणी मूर्तिः सदा रोहिणी
ज्येष्ठा भाद्रपदा पुनर्वसुयुता चित्रा विशाखान्विता।

[एक बार माता पार्वती शिवजीसे हँसकर बोलीं—प्रभो!] गङ्गा तो आपके जटाजूटमें निवास कर रही हैं, फिर आकाशसे यह जल कहाँसे आ रहा है? आपका तीसरा नेत्र ही अग्निका काम करता है, फिर अलगसे यह अग्नि कहाँसे उत्पन्न हो गयी है? साँप तो आपके देहमें आभूषण बने हुए हैं, फिर ये दूसरे सर्प कहाँसे आ गये? इससे लगता है कि आज द्यूतक्रीडाके समय आपने ही मेरा हार चुराया है, उसे लौटा दीजिये। इस प्रकार भगवती पार्वतीके साथ हँसकर वार्तालाप करनेवाले भगवान् शम्भु आपलोगोंके लिये कल्याणकारक बनें॥ १॥

भगवान् श्रीकण्ठकी मूर्ति गजचर्मसे सुशोभित है अर्थात् कृत्तिका नक्षत्रसे युक्त है। वह प्राणियोंकी रक्षा करनेवाली तथा भरण-पोषण करनेवाली है, इसलिये आर्द्रा-भरणी नक्षत्रसे युक्त है। वह कमण्डलु धारण करनेवाली है, इसलिये रोहिणी नक्षत्रसे युक्त है। वह मूर्ति सर्वोत्तम होनेसे ज्येष्ठा तथा पद-पदपर कल्याण-सम्पादन करनेवाली होनेसे भाद्रपदा है। निरन्तर धन-सम्पत्ति प्रदान करनेवाली होनेसे पुनर्वसु, देखनेमें विचित्र होनेसे चित्रा तथा कार्तिकेयसे युक्त होनेके कारण विशाखा नक्षत्र-समन्वित है।

दिश्यादक्षतहस्तमूलघटिताषाढा मघालङ्कृता
श्रेयो वै श्रवणान्विता भगवतो नक्षत्रपालीव वः ॥ २ ॥

एषा ते हर का सुगात्रि कतमा मूर्ध्नि स्थिता किं जटा
हंसः किं भजते जटां नहि शशी चन्द्रो जलं सेवते।

हाथमें अभयमुद्रा धारण करनेके कारण हस्त, सृष्टि-प्रपञ्चका मूल कारण होनेसे मूल, मलयगिरिचन्दनसे लिप्त होनेके कारण आषाढ़ाद्वय (पूर्वाषाढ़ और उत्तराषाढ़), स्मरणमात्रसे रोगोंका नाश करनेके कारण मघा एवं श्रवणीय कीर्ति होनेके कारण श्रवण नक्षत्रसे युक्त है, ऐसी नक्षत्रमालामयी भगवान् शिवकी मूर्ति आपलोगोंको कल्याण प्रदान करे॥ २॥

[यहाँ भक्त कविने मुख्यतया भगवान्‌के गुणोंका वर्णन किया है, जिन गुणोंके आधारपर ज्योतिष-शास्त्रमें वर्णित नक्षत्रोंका भी ग्रहण हो जाता है। इस प्रकार प्रधानतया उनके गुणोंके वर्णनके साथ ही नक्षत्रमयी मूर्तिका भी प्रतिपादन हुआ है।]

[एक बार भगवती पार्वतीने भगवान् शङ्करके द्वारा गङ्गाको सिरपर धारण किये जानेसे क्षुब्ध होकर उनसे गङ्गाके विषयमें पूछा—]

पार्वती—हे शिव! यह कौन है? *शिव*—हे सुन्दर शरीरवाली! किसके विषयमें पूछ रही हो? *पार्वती*—जो आपके मस्तकपर स्थित है। *शिव*—क्या जटाके विषयमें पूछ रही हो? *पार्वती*—नहीं, सफेद-सी वस्तु कौन-सी दीख रही है? *शिव*—हंस? *पार्वती*—क्या हंस जटामें रहता है? *शिव*—नहीं, यह चन्द्रमा है। *पार्वती*—तो क्या चन्द्रमा जलमें रहता है?

मुग्धे भूतिरियं कुतोऽत्र सलिलं भूतिस्तरङ्गायते
एवं यो विनिगूहते त्रिपथगां पायात् स वः शङ्करः ॥ ३ ॥

॥ इति गौरीश्वरस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

नन्दिस्तवः

कण्ठालङ्कारघण्टाघणघणरणिताध्मातरोदःकटाहः
कण्ठेकालाधिरोहोचितघनसुभगंभावुकस्निग्धपृष्ठः ।
साक्षाद्धर्मो वपुष्मान् धवलककुदनिर्धूतकैलासकूटः
कूटस्थो वः ककुद्मान्निविडतरतमःस्तोमतृण्यां वितृण्यात् ॥ १ ॥

॥ इति नन्दिस्तवः सम्पूर्णः ॥

शिव—मुग्धे! यह विभूति है। *पार्वती*—इसमें जल कहाँसे आ गया? *शिव*—यह जल नहीं प्रत्युत विभूति ही तरङ्गायमान हो रही है। इस प्रकार जो भगवान् शङ्कर त्रिपथगा गङ्गाको छिपा रहे हैं, वे आप सबकी रक्षा करें॥ ३ ॥

॥ इस प्रकार गौरीश्वरस्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

अपने गलेके आभूषणरूप घंटेकी घन-घन ध्वनिसे आकाश और पृथ्वीको क्षुब्ध कर देनेवाले भगवान् नीलकण्ठ शिवके आरोहण करने योग्य, परिपुष्ट सुन्दर, भावयुक्त तथा स्निग्ध पृष्ठदेशवाले, साक्षात् शरीरधारी धर्मके प्रतिरूप, अपने श्वेतवर्णके ककुद् (डील)-की कान्तिसे कैलासशिखरको निर्मल बना देनेवाले भगवान् नन्दिकेश्वर आपलोगोंके घनीभूत अज्ञानान्धकारसमूहरूप तृणपुञ्जको छिन्न-भिन्न कर दें॥ १ ॥

॥ इस प्रकार नन्दिस्तव सम्पूर्ण हुआ ॥

शिवशिरोमालिकास्तुतिः

पित्रोः पादाब्जसेवागतगिरितनयापुत्रपत्रातिभीत-
क्षुभ्यद्भूषाभुजङ्गश्वसनगुरुमरुद्दीप्तनेत्राग्नितापात् ।
स्विद्यन्मौलीन्दुखण्डस्त्रुतबहुलसुधासेकसंजातजीवा
पूर्वाधीतं पठन्ती ह्यवतु विधिशिरोमालिका शूलिनो वः ॥

॥ इति शिवशिरोमालिकास्तुतिः सम्पूर्णा ॥

अपने माता एवं पिताके चरण-कमलोंकी सेवाके लिये जब पार्वतीपुत्र कार्तिकेय अपने वाहनपर चढ़कर उपस्थित होते हैं तब उनके वाहन मयूरसे डरकर भगवान् शङ्करके शरीरके आभूषणभूत सर्पोंके क्षुब्ध हो जाने तथा गहरी लम्बी साँसें लेनेसे भगवान् शङ्करके नेत्रमें अग्निके समान ताप उठने लगता है, जिससे जटा-जूटमें स्थित चन्द्रखण्ड पसीजने लगता है। ऐसी अवस्थामें चन्द्रखण्डसे बहती हुई प्रचुर सुधाधारासे सिंचित शङ्करके गलेमें विद्यमान ब्रह्माके सिरकी मुण्डमाला, जो निर्जीव है वह पुनः जीवित हो उठती है और पूर्व कालमें अध्ययन किये हुए शास्त्रोंका पाठ करने लगती है। ऐसे त्रिशूलधारी भगवान् शङ्करके गलेमें विद्यमान विधिमुण्डमाला आप लोगोंकी रक्षा करे।

॥ इस प्रकार शिवशिरोमालिकास्तुति सम्पूर्ण हुई ॥

श्रीविश्वनाथस्तोत्रम्

उपहरणं विभवानां संहरणं सकलदुरितजालस्य।
उद्धरणं संसाराच्चरणं वः श्रेयसेऽस्तु विश्वपतेः॥ १॥
भिक्षुकोऽपि सकलेप्सितदाता प्रेतभूमिनिलयोऽपि पवित्रः।
भूतमित्रमपि योऽभयसत्री तं विचित्रचरितं शिवमीडे॥ २॥

॥ इति श्रीविश्वनाथस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

समस्त ऐश्वर्योंको प्रदान करनेवाले तथा समस्त पापसमूहोंका नाश करनेवाले एवं संसारसे उद्धार करनेवाले भगवान् शङ्करके चरण आप लोगोंके लिये मङ्गलदायक हों॥ १॥

स्वयं भिक्षुक होते हुए भी समस्त प्राणियोंकी अभिलाषाओंको पूर्ण करनेवाले तथा प्रेतोंकी अपवित्र भूमि—श्मशानमें रहनेपर भी स्वयं पवित्र और भूतोंके मित्र (साथ) रहनेपर भी अभयका सत्र चलानेवाले (अभय प्रदान करनेवाले) ऐसे विचित्र चरित्रवाले शिवकी मैं स्तुति करता हूँ॥ २॥

॥ इस प्रकार श्रीविश्वनाथस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

देव बड़े, दाता बड़े, संकर बड़े भोरे।
किये दूर दुख सबनिके, जिन्ह-जिन्ह कर जोरे॥
सेवा, सुमिरन, पूजिबौ, पात आखत थोरे।
दिये जगत जहँ लगि सबै, सुख, गज, रथ, घोरे॥
गाँव बसत बामदेव, मैं कबहूँ न निहोरे।
अधिभौतिक बाधा भई, ते किंकर तोरे॥
बेगि बोलि बलि बरजिये, करतूति कठोरे।
तुलसी दलि, रूँध्यो चहैं सठ साखि सिहोरे॥

(विनय-पत्रिका ८)

शिवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

जय शम्भो विभो रुद्र स्वयम्भो जय शङ्कर।
जयेश्वर जयेशान जय जय सर्वज्ञ कामदं॥ १॥
नीलकण्ठ जय श्रीद श्रीकण्ठ जय धूर्जटे।
अष्टमूर्तेऽनन्तमूर्ते महामूर्ते जयानघ॥ २॥
जय पापहरानङ्गनिःसङ्ग भङ्गनाशन।
जय त्वं त्रिदशाधार त्रिलोकेश त्रिलोचन॥ ३॥

---

(१) हे शम्भो! (कल्याणकी भूमि)! आपकी जय हो, (२) हे विभो (व्यापक)! (३) हे रुद्र! (४) हे स्वयम्भो! (५) हे शङ्कर! आपकी जय हो। (६) हे ईश्वर! (७) हे ईशान! (८) हे सर्वज्ञ! तथा (९) हे कामद! (कामनाओंको प्रदान करनेवाले भगवान् शिव!) आपकी जय हो, जय हो॥ १॥

(१०) हे नीलकण्ठ! (११) हे श्रीद (ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले)! (१२) हे श्रीकण्ठ! (१३) हे धूर्जटि! (१४) हे अष्टमूर्ते! (१५) हे अनन्तमूर्ते! (१६) हे महामूर्ते! (१७) हे अनघ! आपकी जय हो॥ २॥

(१८) हे पापहारी! (१९) हे अनङ्गनिःसङ्ग! (२०) हे भङ्गनाशन (बाधा तथा भयके नाशक)! (२१) हे त्रिदशाधार (देवताओंके आधार) (२२) त्रिलोकेश (तीनों लोकोंके स्वामी)! (२३) हे त्रिलोचन! आपकी जय हो॥ ३॥

जय त्वं त्रिपथाधार त्रिमार्ग त्रिभिरूर्जित।
त्रिपुरारे त्रिधामूर्ते जयैकत्रिजटात्मक॥ ४॥
शशिशेखर शूलेश पशुपाल शिवाप्रिय।
शिवात्मक शिव श्रीद सुहृच्छ्रीशतनो जय॥ ५॥
सर्व सर्वेश भूतेश गिरिश तवं गिरीश्वरः।
जयोग्ररूप भीमेश भव भर्ग जय प्रभो॥ ६॥

---

(२४) हे त्रिपथाधार (गङ्गाजीके आधार)! (२५) हे त्रिमार्ग (तीनों उपासनापद्धतियोंका अनुसरण करनेवाले)! और (२६) हे त्रिभिरूर्जित (तीन गुणोंसे शक्तिसम्पन्न)! (२७) हे त्रिपुरारे! (२८) हे त्रिधामूर्ते (त्रिमूर्ति)! (२९) हे एकत्रिजटात्मक (एक जटा तथा तीन जटाधारी)! आपकी जय हो॥ ४॥

(३०) हे शशिशेखर (सिरपर चन्द्रमाको धारण करनेवाले)! (३१) हे शूलेश! (३२) हे पशुपाल (प्राणियोंके पालक)! (३३) हे शिवाप्रिय (पार्वतीके प्रिय)! (३४) हे शिवात्मक (शिवाके शरीरसे अभिन्न)! (३५) हे शिव! (३६) हे श्रीद (ऐश्वर्य देनेवाले)! और (३७) हे सुहृत् (स्नेहयुक्त हृदयवाले)! (३८) हे श्रीशतनु (भगवान् विष्णुके विग्रह)! आपकी जय हो॥ ५॥

(३९) हे सर्व (सर्वस्वरूप)! (४०) हे सर्वेश (सम्पूर्ण विश्वके स्वामी)! (४१) हे भूतेश (सम्पूर्ण जीवोंके अधिपति)! (४२) हे गिरिश! और (४३) हे गिरीश्वर आपकी जय हो। (४४) हे उग्ररूप! (४५) हे भीमेश! (४६) हे भव (४७) हे भर्ग (तेजःस्वरूप) प्रभो! आपकी जय हो॥ ६॥

जय दक्षाध्वरध्वंसिन्नन्धकध्वंसकारक।
रुण्डमालिन् कपाली त्व भुजङ्गाऽजिनभूषण॥ ७॥
दिगम्बर दिशानाथ व्योमकेश चितापते।
जयाधार निराधार भस्माधार धराधर॥ ८॥
देवदेव महादेव देवतेशादिदैवत।
वह्निवीर्य जय स्थाणो जयायोनिजसम्भव॥ ९॥
भव शर्व महाकाल भस्माङ्ग सर्पभूषण।
त्र्यम्बक स्थपते वाचाम्पते भो जगताम्पते॥ १०॥

---

(४८) हे दक्षाध्वरध्वंसिन् (दक्षके यज्ञको ध्वंस करनेवाले)! (४९) हे अन्धकध्वंसकारक (अन्धकासुरको मारनेवाले)! (५०) हे रुण्डमालिन् (रुण्डमालाधारी)! आप (५१) कपाली (कपाल धारण करनेवाले हैं) (५२) हे भुजङ्गाजिनभूषण (आभूषणके रूपमें भुजङ्ग) तथा व्याघ्र चर्म धारण करनेवाले! (५३) हे अजिनभूषण! आपकी जय हो॥ ७॥

(५४) हे दिगम्बर! (५५) हे दिशानाथ (दिशाओंके स्वामी)! (५६) हे व्योमकेश! (५७) हे चितापति (श्मशानवासी)! (५८) हे आधार (सबके आश्रय)! (५९) हे निराधार! (६०) हे भस्माधार! तथा (६१) हे धराधर (शेषरूपमें पृथ्वीको धारण करनेवाले) भगवान् शिव आपकी जय हो॥ ८॥

(६२) हे देवदेव! (६३) हे महादेव! (६४) हे देवतेश! (६५) हे आदिदैवत! (६६) हे वह्निवीर्य! (६७) हे स्थाणो! (६८) हे अयोनिजसम्भव (अजन्मा)! आपकी जय हो॥ ९॥

(६९) हे भव! (७०) हे शर्व! (७१) हे महाकाल! (७२)हे भस्माङ्ग (भस्मको शरीरमें लगानेवाले)! (७३) हे सर्पभूषण (सर्पोंको आभूषणके रूपमें धारण करनेवाले)! (७४) हे त्र्यम्बक! (७५) हे स्थपते (शिल्पी)! (७६) हे वाचाम्पते! (७७) हे जगताम्पते (संसारके स्वामी)! आपकी जय हो॥ १०॥

शिपिविष्ट विरूपाक्ष जय लिङ्ग वृषध्वज।
नीललोहित पिङ्गाक्ष जय खट्वाङ्गमण्डन॥ ११॥
कृत्तिवास अहिर्बुध्न्य मृडानीश जटाम्बुभृत्।
जगद्भ्रातर्जगन्मातर्जगत्तात जगद्गुरो॥ १२॥
पञ्चवक्त्र महावक्त्र कालवक्त्र गजास्यभृत्।
दशबाहो महाबाहो महावीर्य महाबल॥ १३॥
अघोरघोरवक्त्र त्वं सद्योजात उमापते।
सदानन्द महानन्द नन्दमूर्ते जयेश्वर॥ १४॥

---

(७८) हे शिपिविष्ट (प्रकाशपुञ्ज)! (७९) हे विरूपाक्ष! (८०) हे लिङ्ग! (८१) हे वृषध्वज! (८२) हे नीललोहित! (८३) हे पिङ्गाक्ष! (८४) हे खट्वाङ्गमण्डन (खट्वाङ्गधारी)! आपकी जय हो॥ ११॥

(८५) हे कृत्तिवास! (८६) हे अहिर्बुध्न्य! (८७) हे मृडानीश (पार्वतीपति)! (८८) हे जटाम्बुभृत् (जटाओंमें जल धारण करनेवाले)! (८९) हे जगद्भ्रातः! (९०) हे जगन्मातः! (९१) हे जगत्तात! (९२) हे जगद्गरो! आपकी जय हो॥ १२॥

(९३) हे पञ्चवक्त्र! (९४) हे महावक्त्र! (९५) हे कालवक्त्र! (९६) हे गजास्यभृत् (गणेशके धारण-पोषणकर्ता)! (९७) हे दशबाहो! (९८) हे महाबाहो! (९९) हे महावीर्य! (१००) हे महाबल! आपकी जय हो॥ १३॥

(१०१) हे अघोरवक्त्र! (१०२) हे घोरवक्त्र! (१०३) हे सद्योजात! (१०४) हे उमापते! (१०५) हे सदानन्द! (१०६) हे महानन्द! (१०७) हे नन्दमूर्ते! (१०८) हे ईश्वर! आपकी जय हो॥ १४॥

एवमष्टोत्तरशतं नाम्नां देवदेवकृतं तु ये।
शम्भोर्भक्त्या स्मरन्तीह शृण्वन्ति च पठन्ति च॥ १५॥
न तापस्त्रिविधस्तेषां न शोको न रुजादयः।
ग्रहगोचरपीडा च तेषां क्वापि न विद्यते॥ १६॥
श्रीः प्रज्ञारोग्यायुष्यं सौभाग्यं भाग्यमुन्नतिः।
विद्या धर्मे मतिः शम्भोर्भक्तिस्तेषां न संशयः॥ १७॥

॥ इति शिवास्तोत्तरशतनामस्तोत्रम् सम्पूर्णम्॥

देवदेवद्वारा विरचित भगवान् शिवके इन १०८ नामोंका जो स्मरण, श्रवण और पठन करते हैं, उन्हें तीनों ताप (दैहिक, दैविक और भौतिक) नहीं सताते तथा न तो उन्हें कभी शोक, व्याधि और ग्रहपीडा ही होती है॥ १५-१६॥

इसका पाठ करनेवालेको श्री, प्रज्ञा, आरोग्य, आयुष्य, सौभाग्य, भाग्य, उन्नति, विद्या, धर्ममें मति और भगवान् शिवमें भक्ति प्राप्त होती है; इसमें संदेह नहीं है॥ १७॥

॥ इस प्रकार शिवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ॥

दानि जो चारि पदारथको, त्रिपुरारि, तिहूँ पुरमें सिर टीको।
भोरो भलो, भले भायको भूखो, भलोई कियो सुमिरें तुलसीको॥
ता बिनु आसको दास भयो, कबहूँ न मिट्यो लघु लालचु जीको।
साधो कहा करि साधन तैं, जो पै राधो नहीं पति पारबतीको॥

(कवितावली १५६)

गौरीपतिशतनामस्तोत्रम्

बृहस्पतिरुवाच

नमो रुद्राय नीलाय भीमाय परमात्मने।
कपर्दिने सुरेशाय व्योमकेशाय वै नमः॥ १॥
वृषभध्वजाय सोमाय सोमनाथाय शम्भवे।
दिगम्बराय भर्गाय उमाकान्ताय वै नमः॥ २॥
तपोमयाय भव्याय शिवश्रेष्ठाय विष्णवे।
व्यालप्रियाय व्यालाय व्यालानां पतये नमः॥ ३॥

बृहस्पतिजी बोले—रुद्र, नील, भीम और परमात्माको नमस्कार है। कपर्दी (जटाजूटधारी), सुरेश (देवताओंके स्वामी) तथा आकाशरूप केशवाले व्योमकेशको नमस्कार है॥ १॥

जो अपनी ध्वजामें वृषभका चिह्न धारण करनेके कारण वृषभध्वज हैं, उमाके साथ विराजमान होनेसे सोम हैं, चन्द्रमाके भी रक्षक होनेसे सोमनाथ हैं, उन भगवान् शम्भुको नमस्कार है। सम्पूर्ण दिशाओंको वस्त्ररूपमें धारण करनेके कारण जो दिगम्बर कहलाते हैं, भजनीय तेज:स्वरूप होनेसे जिनका नाम भर्ग है, उन उमाकान्तको नमस्कार है॥ २॥

जो तपोमय, भव्य (कल्याणरूप), शिवश्रेष्ठ, विष्णुरूप, व्यालप्रिय (सर्पोंको प्रिय माननेवाले), व्याल (सर्पस्वरूप) तथा सर्पोंके स्वामी हैं, उन भगवान्‌को नमस्कार है॥ ३॥

महीधराय व्याघ्राय पशूनां पतये नमः।
पुरान्तकाय सिंहाय शार्दूलाय मखाय च॥ ४॥
मीनाय मीननाथाय सिद्धाय परमेष्ठिने।
कामान्तकाय बुद्धाय बुद्धीनां पतये नमः॥ ५॥
कपोताय विशिष्टाय शिष्टाय सकलात्मने।
वेदाय वेदजीवाय वेदगुह्याय वै नमः॥ ६॥
दीर्घाय दीर्घरूपाय दीर्घार्थायाविनाशिने।
नमो जगत्प्रतिष्ठाय व्योमरूपाय वै नमः॥ ७॥
गजासुरमहाकालायान्धकासुरभेदिने।
नीललोहितशुक्लाय चण्डमुण्डप्रियाय च॥ ८॥

जो महीधर (पृथ्वीको धारण करनेवाले), व्याघ्र (विशेष रूपसे सूँघनेवाले), पशुपति (जीवोंके पालक), त्रिपुरनाशक, सिंह-स्वरूप, शार्दूलरूप और यज्ञमय हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है॥ ४॥

जो मत्स्यरूप, मत्स्योंके स्वामी, सिद्ध तथा परमेष्ठी हैं, जिन्होंने कामदेवका नाश किया है, जो ज्ञानस्वरूप तथा बुद्धि-वृत्तियोंके स्वामी हैं, उनको नमस्कार है॥ ५॥

जो कपोत (ब्रह्माजी जिनके पुत्र हैं), विशिष्ट (सर्वश्रेष्ठ), शिष्ट (साधु पुरुष) तथा सर्वात्मा हैं, उन्हें नमस्कार है। जो वेदस्वरूप, वेदको जीवन देनेवाले तथा वेदोंमें छिपे हुए गूढ़ तत्त्व हैं, उनको नमस्कार है॥ ६॥

जो दीर्घ, दीर्घरूप, दीर्घार्थस्वरूप तथा अविनाशी हैं, जिनमें ही सम्पूर्ण जगत्की स्थिति है, उन्हें नमस्कार है तथा जो सर्वव्यापी व्योमरूप हैं, उन्हें नमस्कार है॥ ७॥

जो गजासुरके महान् काल हैं, जिन्होंने अन्धकासुरका विनाश किया है, जो नील, लोहित और शुक्लरूप हैं तथा चण्ड-मुण्ड नामक पार्षद जिन्हें विशेष प्रिय हैं, उन भगवान् (शिव)-को नमस्कार है॥ ८॥
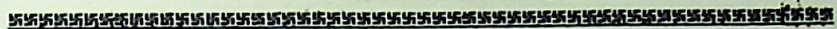
भक्तिप्रियाय देवाय ज्ञात्रे ज्ञानाव्ययाय च।
महेशाय नमस्तुभ्यं महादेव हराय च॥ ९॥
त्रिनेत्राय त्रिवेदाय वेदाङ्गाय नमो नमः।
अर्थाय चार्थरूपाय परमार्थाय वै नमः॥ १०॥
विश्वभूपाय विश्वाय विश्वनाथाय वै नमः।
शङ्कराय च कालाय कालावयवरूपिणे॥ ११॥
अरूपाय विरूपाय सूक्ष्मसूक्ष्माय वै नमः।
श्मशानवासिने भूयो नमस्ते कृत्तिवाससे॥ १२॥
शशाङ्कशेखरायेशायोग्रभूमिशयाय च।

जिनको भक्ति प्रिय है, जो द्युतिमान् देवता हैं, ज्ञाता और ज्ञान हैं, जिनके स्वरूपमें कभी कोई विकार नहीं होता, जो महेश, महादेव तथा हर नामसे प्रसिद्ध हैं, उनको नमस्कार है॥ ९॥

जिनके तीन नेत्र हैं, तीनों वेद और वेदाङ्ग जिनके स्वरूप हैं, उन भगवान् शङ्करको नमस्कार है! नमस्कार है! जो अर्थ (धन), अर्थरूप (काम) तथा परमार्थ (मोक्षस्वरूप) हैं, उन भगवान्‌को नमस्कार है!॥ १०॥

जो सम्पूर्ण विश्वकी भूमिके पालक, विश्वरूप, विश्वनाथ, शङ्कर, काल तथा कालावयवरूप हैं, उन्हें नमस्कार है॥ ११॥

जो रूपहीन, विकृतरूपवाले तथ। सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म हैं, उनको नमस्कार है, जो श्मशान-भूमिमें निवास करनेवाले तथा व्याघ्रचर्ममय वस्त्र धारण करनेवाले हैं, उन्हें पुनः नमस्कार है॥ १२॥

जो ईश्वर होकर भी भयानक भूमिमें शयन करते हैं, उन भगवान्

दुर्गाय दुर्गपाराय दुर्गावयवसाक्षिणे ॥ १३ ॥
लिङ्गरूपाय लिङ्गाय लिङ्गानां पतये नमः ।
नमः प्रलयरूपाय प्रणवार्थाय वै नमः ॥ १४ ॥
नमो नमः कारणकारणाय
मृत्युञ्जयायात्मभवस्वरूपिणे ।
श्रीत्र्यम्बकायासितकण्ठशर्व
गौरीपते सकलमङ्गलहेतवे नमः ॥ १५ ॥

॥ इति गौरीपतिशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

चन्द्रशेखरको नमस्कार है। जो दुर्गम हैं, जिनका पार पाना अत्यन्त कठिन है तथा जो दुर्गम अवयवोंके साक्षी अथवा दुर्गारूपा पार्वतीके सब अङ्गोंका दर्शन करनेवाले हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है॥ १३॥

जो लिङ्गरूप, लिङ्ग (कारण) तथा कारणोंके भी अधिपति हैं, उन्हें नमस्कार है। महाप्रलयरूप रुद्रको नमस्कार है। प्रणवके अर्थभूत ब्रह्मरूप शिवको नमस्कार है॥ १४॥

जो कारणोंके भी कारण, मृत्युञ्जय तथा स्वयम्भूरूप हैं, उन्हें नमस्कार है। हे श्रीत्र्यम्बक! हे असितकण्ठ! हे शर्व! हे गौरीपते! आप सम्पूर्ण मङ्गलोंके हेतु हैं; आपको नमस्कार है॥ १५॥

॥ इस प्रकार गौरीपतिशतनामस्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

शिवसहस्त्रनामस्तोत्रम्

वासुदेव उवाच

ततः स प्रयतो भूत्वा मम तात युधिष्ठिर।
प्राञ्जलिः प्राह विप्रर्षिर्नामसंग्रहमादितः॥ १॥

उपमन्युरुवाच

ब्रह्मप्रोक्तैर्ऋषिप्रोक्तैर्वेदवेदाङ्गसम्भवैः।
सर्वलोकेषु विख्यातं स्तुत्यं स्तोष्यामि नामभिः॥ २॥
महद्भिर्विहितैः सत्यैः सिद्धैः सर्वार्थसाधकैः।
ऋषिणा तण्डिना भक्त्या कृतैर्वेदकृतात्मना॥ ३॥
यथोक्तैः साधुभिः ख्यातैर्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।
प्रवरं प्रथमं स्वर्ग्यं सर्वभूतहितं शुभम्॥ ४॥
श्रुतैः सर्वत्र जगति ब्रह्मलोकावतारितैः।
सत्यैस्तत् परमं ब्रह्म ब्रह्मप्रोक्तं सनातनम्॥ ५॥

वक्ष्ये यदुकुलश्रेष्ठ शृणुष्वावहितो मम।
वरयैनं भवं देवं भक्तस्त्वं परमेश्वरम्॥ ६॥
तेन ते श्रावयिष्यामि यत् तद् ब्रह्म सनातनम्।
न शक्यं विस्तरात् कृत्स्नं वक्तुं सर्वस्य केनचित्॥ ७॥
युक्तेनापि विभूतीनामपि वर्षशतैरपि।
यस्यादिर्मध्यमन्तं च सुरैरपि न गम्यते॥ ८॥
कस्तस्य शक्नुयाद् वक्तुं गुणान् कार्त्स्न्येन माधव।
किं तु देवस्य महतः संक्षिप्तार्थपदाक्षरम्॥ ९ ॥
शक्तितश्चरितं वक्ष्ये प्रसादात् तस्य धीमतः।
अप्राप्य तु ततोऽनुज्ञां न शक्यः स्तोतुमीश्वरः॥ १०॥
यदा तेनाभ्यनुज्ञातः स्तुतो वै स तदा मया।
अनादिनिधनस्याहं जगद्योनेर्महात्मनः॥ ११॥
नाम्नां कञ्चित् समुद्देशं वक्ष्याम्यव्यक्तयोनिनः।
वरदस्य वरेण्यस्य विश्वरूपस्य धीमतः॥ १२॥
शृणु नाम्नां चयं कृष्ण यदुक्तं पद्मयोनिना।
दशनामसहस्राणि यान्याह प्रपितामहः॥ १३॥
तानि निर्मथ्य मनसा दध्नो घृतमिवोद्धृतम्।
गिरेः सारं यथा हेम पुष्पसारं यथा मधु॥ १४॥
घृतात् सारं यथा मण्डस्तथैतत् सारमुद्धृतम्।
सर्वपापापहमिदं चतुर्वेदसमन्वितम्॥ १५॥
प्रयत्नेनाधिगन्तव्यं धार्यं च प्रयतात्मना।
माङ्गल्यं पौष्टिकं चैव रक्षोघ्नं पावनं महत्॥ १६॥
इदं भक्ताय दातव्यं श्रद्दधानास्तिकाय च।
नाश्रद्दधानरूपाय नास्तिकायाजितात्मने॥ १७॥

यश्चाभ्यसूयते देवं कारणात्मानमीश्वरम्।
स कृष्ण नरकं याति सह पूर्वैः सहात्मजैः॥ १८॥
इदं ध्यानमिदं योगमिदं ध्येयमनुत्तमम्।
इदं जप्यमिदं ज्ञानं रहस्यमिदमुत्तमम्॥ १९॥
यं ज्ञात्वा अन्तकालेऽपि गच्छेत परमां गतिम्।
पवित्रं मङ्गलं मेध्यं कल्याणमिदमुत्तमम्॥ २०॥
इदं ब्रह्मा पुरा कृत्वा सर्वलोकपितामहः।
सर्वस्तवानां राजत्वे दिव्यानां समकल्पयत्॥ २१॥
तदाप्रभृति चैवायमीश्वरस्य महात्मनः।
स्तवराज इति ख्यातो जगत्यमरपूजितः॥ २२॥
ब्रह्मलोकादयं स्वर्गे स्तवराजोऽवतारितः।
यतस्तण्डिः पुरा प्राप तेन तण्डिकृतोऽभवत्॥ २३॥
स्वर्गाच्चैवात्र भूर्लोकं तण्डिना ह्यवतारितः।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्॥ २४॥
निगदिष्ये महाबाहो स्तवानामुत्तमं स्तवम्।
ब्रह्मणामपि यद् ब्रह्म पराणामपि यत् परम्॥ २५॥
तेजसामपि यत् तेजस्तपसामपि यत् तपः।
शान्तानामपि यः शान्तो द्युतीनामपि या द्युतिः॥ २६॥
दान्तानामपि यो दान्तो धीमतामपि या च धीः।
देवानामपि यो देव ऋषीणामपि यस्त्वृषिः॥ २७॥
यज्ञानामपि यो यज्ञः शिवानामपि यः शिवः।
रुद्राणामपि यो रुद्रः प्रभा प्रभवतामपि॥ २८॥
योगिनामपि यो योगी कारणानां च कारणम्।
यतो लोकाः सम्भवन्ति न भवन्ति यतः पुनः॥ २९॥

सर्वभूतात्मभूतस्य हरस्यामिततेजसः।
अष्टोत्तरसहस्त्रं तु नाम्नां शर्वस्य मे शृणु।
यच्छ्रुत्वा मनुजव्याघ्र सर्वान् कामानवाप्स्यसि॥ ३०॥
स्थिरः स्थाणुः प्रभुर्भीमः प्रवरो वरदो वरः।
सर्वात्मा सर्वविख्यातः सर्वः सर्वकरो भवः॥ ३१॥
जटी चर्मी शिखण्डी च सर्वाङ्गः सर्वभावनः।
हरश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरः प्रभुः॥ ३२॥
प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च नियतः शाश्वतो ध्रुवः।
श्मशानवासी भगवान् खचरो गोचरोऽर्दनः॥ ३३॥
अभिवाद्यो महाकर्मा तपस्वी भूतभावनः।
उन्मत्तवेषप्रच्छन्नः सर्वलोकप्रजापतिः॥ ३४॥
महारूपो महाकायो वृषरूपो महायशाः।
महात्मा सर्वभूतात्मा विश्वरूपो महाहनुः॥ ३५॥
लोकपालोऽन्तर्हितात्मा प्रसादो हयगर्दभिः।
पवित्रं च महांश्चैव नियमो नियमाश्रितः॥ ३६॥
सर्वकर्मा स्वयम्भूत आदिरादिकरो निधिः।
सहस्त्राक्षो विशालाक्षः सोमो नक्षत्रसाधकः॥ ३७॥
चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्ग्रहो ग्रहपतिर्वरः।
अत्रिरत्र्या नमस्कर्ता मृगबाणार्पणोऽनघः॥ ३८॥
महातपा घोरतपा अदीनो दीनसाधकः।
संवत्सरकरो मन्त्रः प्रमाणं परमं तपः॥ ३९॥
योगी योज्यो महाबीजो महारेता महाबलः।
सुवर्णरेताः सर्वज्ञः सुबीजो बीजवाहनः॥ ४०॥
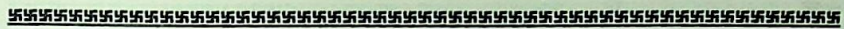
दशबाहुस्त्वनिमिषो नीलकण्ठ उमापतिः।
विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरोऽबलो गणः॥ ४१॥
गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च।
मन्त्रवित् परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः॥ ४२॥
कमण्डलुधरो धन्वी बाणहस्तः कपालवान्।
अशनी शतघ्नी खड्गी पट्टिशी चायुधी महान्॥ ४३॥
स्रुवहस्तः सुरूपश्च तेजस्तेजस्करो निधिः।
उष्णीषी च सुवक्त्रश्च उदग्रो विनतस्तथा॥ ४४॥
दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण एव च।
शृगालरूपः सिद्धार्थो मुण्डः सर्वशुभङ्करः॥ ४५॥
अजश्च बहुरूपश्च गन्धधारी कपर्द्यपि।
ऊर्ध्वरेता ऊर्ध्वलिङ्ग ऊर्ध्वशायी नभःस्थलः॥ ४६॥
त्रिजटी चीरवासाश्च रुद्रः सेनापतिर्विभुः।
अहश्चरो नक्तंचरस्तिग्ममन्युः सुवर्चसः॥ ४७॥
गजहा दैत्यहा कालो लोकधाता गुणाकरः।
सिंहशार्दूलरूपश्च आर्द्रचर्माम्बरावृतः॥ ४८॥
कालयोगी महानादः सर्वकामश्चतुष्पथः।
निशाचरः प्रेतचारी भूतचारी महेश्वरः॥ ४९॥
बहुभूतो बहुधरः स्वर्भानुरमितो गतिः।
नृत्यप्रियो नित्यनर्तो नर्तकः सर्वलालसः॥ ५०॥
घोरो महातपाः पाशो नित्यो गिरिरुहो नभः।
सहस्त्रहस्तो विजयो व्यवसायो ह्यतन्द्रितः॥ ५१॥
अधर्षणो धर्षणात्मा यज्ञहा कामनाशकः।
दक्षयागापहारी च सुसहो मध्यमस्तथा॥ ५२॥

तेजोऽपहारी बलहा मुदितोऽर्थोऽजितोऽवरः।
गम्भीरघोषो गम्भीरो गम्भीरबलवाहनः॥ ५३॥
न्यग्रोधरूपो न्यग्रोधो वृक्षकर्णस्थितिर्विभुः।
सुतीक्ष्णदशनश्चैव महाकायो महाननः॥ ५४॥
विष्वक्सेनो हरिर्यज्ञः संयुगापीडवाहनः।
तीक्ष्णतापश्च हर्यश्वः सहायः कर्मकालवित्॥ ५५॥
विष्णुप्रसादितो यज्ञः समुद्रो वडवामुखः।
हुताशनसहायश्च प्रशान्तात्मा हुताशनः॥ ५६॥
उग्रतेजा महातेजा जन्यो विजयकालवित्।
ज्योतिषामयनं सिद्धिः सर्वविग्रह एव च॥ ५७॥
शिखी मुण्डी जटी ज्वाली मूर्तिजो मूर्द्धगो बली।
वेणवी पणवी ताली खली कालकटंकटः॥ ५८॥
नक्षत्रविग्रहमतिर्गुणबुद्धिर्लयोऽगमः।
प्रजापतिर्विश्वबाहुर्विभागः सर्वगोऽमुखः॥ ५९॥
विमोचनः सुसरणो हिरण्यकवचोद्भवः।
मेढ्रजो बलचारी च महीचारी स्रुतस्तथा॥ ६०॥
सर्वतूर्यनिनादी च सर्वातोद्यपरिग्रहः।
व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरङ्गवित्॥ ६१॥
त्रिदशस्त्रिकालधृक् कर्म सर्वबन्धविमोचनः।
बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणां युधिशत्रुविनाशनः॥ ६२॥
सांख्यप्रसादो दुर्वासाः सर्वसाधुनिषेवितः।
प्रस्कन्दनो विभागज्ञोऽतुल्यो यज्ञविभागवित्॥ ६३॥
सर्ववासः सर्वचारी दुर्वासा वासवोऽमरः।
हैमो हेमकरोऽयज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः॥ ६४॥
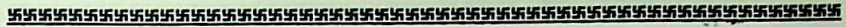
लोहिताक्षो महाक्षश्च विजयाक्षो विशारदः।
संग्रहो निग्रहः कर्ता सर्पचीरनिवासनः॥ ६५॥
मुख्योऽमुख्यश्च देहश्च काहलिः सर्वकामदः।
सर्वकालप्रसादश्च सुबलो बलरूपधृक्॥ ६६॥
सर्वकामवरश्चैव सर्वदः सर्वतोमुखः।
आकाशनिर्विरूपश्च निपाती ह्यवशः खगः॥ ६७॥
रौद्ररूपोंऽशुरादित्यो बहुरश्मिः सुवर्चसी।
वसुवेगो महावेगो मनोवेगो निशाचरः॥ ६८॥
सर्ववासी श्रियावासी उपदेशकरोऽकरः।
मुनिरात्मनिरालोकः सम्भग्नश्च सहस्रदः॥ ६९॥
पक्षी च पक्षरूपश्च अतिदीप्तो विशाम्पतिः।
उन्मादो मदनः कामो ह्यश्वत्थोऽर्थकरो यशः॥ ७०॥
वामदेवश्च वामश्च प्राग् दक्षिणश्च वामनः।
सिद्धयोगी महर्षिश्च सिद्धार्थः सिद्धसाधकः॥ ७१॥
भिक्षुश्च भिक्षुरूपश्च विपणो मृदुरव्ययः।
महासेनो विशाखश्च षष्टिभागो गवां पतिः॥ ७२॥
वज्रहस्तश्च विष्कम्भी चमूस्तम्भन एव च।
वृत्तावृत्तकरस्तालो मधुर्मधुकलोचनः॥ ७३॥
वाचस्पत्यो वाजसनो नित्यमाश्रमपूजितः।
ब्रह्मचारी लोकचारी सर्वचारी विचारवित्॥ ७४॥
ईशान ईश्वरः कालो निशाचारी पिनाकवान्।
निमित्तस्थो निमित्तं च नन्दिर्नन्दिकरो हरिः॥ ७५॥
नन्दीश्वरश्च नन्दी च नन्दनो नन्दिवर्द्धनः।
भगहारी निहन्ता च कालो ब्रह्मा पितामहः॥ ७६॥

चतुर्मुखो महालिङ्गश्चारुलिङ्गस्तथैव च।
लिङ्गाध्यक्षः सुराध्यक्षो योगाध्यक्षो युगावहः॥ ७७॥
बीजाध्यक्षो बीजकर्ता अध्यात्मानुगतो बलः।
इतिहासः सकल्पश्च गौतमोऽथ निशाकरः॥ ७८॥
दम्भो ह्यदम्भो वैदम्भो वश्यो वशकरः कलिः।
लोककर्ता पशुपतिर्महाकर्ता ह्यनौषधः॥ ७९॥
अक्षरं परमं ब्रह्म बलवच्छक्र एव च।
नीतिर्ह्यनीतिः शुद्धात्मा शुद्धो मान्यो गतागतः॥ ८०॥
बहुप्रसादः सुस्वप्नो दर्पणोऽथ त्वमित्रजित्।
वेदकारो मन्त्रकारो विद्वान् समरमर्दनः॥ ८१॥
महामेघनिवासी च महाघोरो वशी करः।
अग्निज्वालो महाज्वालो अतिधूम्रो हुतो हविः॥ ८२॥
वृषणः शङ्करो नित्यं वर्चस्वी धूमकेतनः।
नीलस्तथाङ्गलुब्धश्च शोभनो निरवग्रहः॥ ८३॥
स्वस्तिदः स्वस्तिभावश्च भागी भागकरो लघुः।
उत्सङ्गश्च महाङ्गश्च महागर्भपरायणः॥ ८४॥
कृष्णवर्णः सुवर्णश्च इन्द्रियं सर्वदेहिनाम्।
महापादो महाहस्तो महाकायो महायशाः॥ ८५॥
महामूर्धा महामात्रो महानेत्रो निशालयः।
महान्तको महाकर्णो महोष्ठश्च महाहनुः॥ ८६॥
महानासो महाकम्बुर्महाग्रीवः श्मशानभाक्।
महावक्षा महोरस्को ह्यन्तरात्मा मृगालयः॥ ८७॥
लम्बनो लम्बितोष्ठश्च महामायः पयोनिधिः।
महादन्तो महादंष्ट्रो महाजिह्वो महामुखः॥ ८८॥

महानखो महारोमा महाकोशो महाजटः।
प्रसन्नश्च प्रसादश्च प्रत्ययो गिरिसाधनः ॥ ८९ ॥
स्नेहनोऽस्नेहनश्चैव अजितश्च महामुनिः।
वृक्षाकारो वृक्षकेतुरनलो वायुवाहनः ॥ ९० ॥
गण्डली मेरुधामा च देवाधिपतिरेव च।
अथर्वशीर्षः सामास्य ऋक्सहस्रामितेक्षणः ॥ ९१ ॥
यजुः पादभुजो गुह्यः प्रकाशो जङ्गमस्तथा।
अमोघार्थः प्रसादश्च अभिगम्यः सुदर्शनः ॥ ९२ ॥
उपकारः प्रियः सर्वः कनकः काञ्चनच्छविः।
नाभिर्नन्दिकरो भावः पुष्करस्थपतिः स्थिरः ॥ ९३ ॥
द्वादशस्त्रासनश्चाद्यो यज्ञो यज्ञसमाहितः।
नक्तं कलिश्च कालश्च मकरः कालपूजितः ॥ ९४ ॥
सगणो गणकारश्च भूतवाहनसारथिः।
भस्मशयो भस्मगोप्ता भस्मभूतस्तरुर्गणः ॥ ९५ ॥
लोकपालस्तथालोको महात्मा सर्वपूजितः।
शुक्लस्त्रिशुक्लः सम्पन्नः शुचिर्भूतनिषेवितः ॥ ९६ ॥
आश्रमस्थः क्रियावस्थो विश्वकर्ममतिर्वरः।
विशालशाखस्ताम्रोष्ठो ह्यम्बुजालः सुनिश्चलः ॥ ९७ ॥
कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः।
गन्धर्वो ह्यदितिस्ताक्ष्र्यः सुविज्ञेयः सुशारदः ॥ ९८ ॥
परश्वधायुधो देवो अनुकारी सुबान्धवः।
तुम्बवीणो महाक्रोध ऊर्ध्वरेता जलेशयः ॥ ९९ ॥
उग्रो वंशकरो वंशो वंशनादो ह्यनिन्दितः।
सर्वाङ्गरूपो मायावी सुहृदो ह्यनिलोऽनलः ॥ १०० ॥

बन्धनो बन्धकर्ता च सुबन्धनविमोचनः।
सयज्ञारिः सकामारिर्महादंष्ट्रो महायुधः॥ १०१॥
बहुधा निन्दितः शर्वः शङ्करः शङ्करोऽधनः।
अमरेशो महादेवो विश्वदेवः सुरारिहा॥ १०२॥
अहिर्बुध्न्योऽनिलाभश्च चेकितानो हविस्तथा।
अजैकपाच्च कापाली त्रिशङ्कुरजितः शिवः॥ १०३॥
धन्वन्तरिर्धूमकेतुः स्कन्दो वैश्रवणस्तथा।
धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः॥ १०४॥
प्रभावः सर्वगो वायुरर्यमा सविता रविः।
उषङ्गुश्च विधाता च मान्धाता भूतभावनः॥ १०५॥
विभुर्वर्णविभावी च सर्वकामगुणावहः।
पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्त्रोऽनिलोऽनलः॥ १०६॥
बलवांश्चोपशान्तश्च पुराणः पुण्यचञ्चुरी।
कुरुकर्ता कुरुवासी कुरुभूतो गुणौषधः॥ १०७॥
सर्वाशयो दर्भचारी सर्वेषां प्राणिनां पतिः।
देवदेवः सुखासक्तः सदसत्सर्वरत्नवित्॥ १०८॥
कैलासगिरिवासी च हिमवद्गिरिसंश्रयः।
कूलहारी कूलकर्ता बहुविद्यो बहुप्रदः॥ १०९॥
वणिजो वर्धकी वृक्षो बकुलश्चन्दनश्छदः।
सारग्रीवो महाजत्रुरलोलश्च महौषधः॥ ११०॥
सिद्धार्थकारी सिद्धार्थश्छन्दोव्याकरणोत्तरः।
सिंहनादः सिंहदंष्ट्रः सिंहगः सिंहवाहनः॥ १११॥
प्रभावात्मा जगत्कालस्थालो लोकहितस्तरुः।
सारङ्गो नवचक्राङ्गः केतुमाली सभावनः॥ ११२॥

भूतालयो भूतपतिरहोरात्रमनिन्दितः ॥ ११३ ॥
वाहिता सर्वभूतानां निलयश्च विभुर्भवः ।
अमोघः संयतो ह्यश्वो भोजनः प्राणधारणः ॥ ११४ ॥
धृतिमान् मतिमान् दक्षः सत्कृतश्च युगाधिपः ।
गोपालिर्गोपतिर्ग्रामो गोचर्मवसनो हरिः ॥ ११५ ॥
हिरण्यबाहुश्च तथा गुहापालः प्रवेशिनाम् ।
प्रकृष्टारिर्महाहर्षो जितकामो जितेन्द्रियः ॥ ११६ ॥
गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तो रतिर्नरः ।
महागीतो महानृत्यो ह्यप्सरोगणसेवितः ॥ ११७ ॥
महाकेतुर्महाधातुर्नैकसानुचरश्चलः ।
आवेदनीय आदेशः सर्वगन्धसुखावहः ॥ ११८ ॥
तोरणस्तारणो वातः परिधी पतिखेचरः ।
संयोगो वर्धनो वृद्धो अतिवृद्धो गुणाधिकः ॥ ११९ ॥
नित्य आत्मसहायश्च देवासुरपतिः पतिः ।
युक्तश्च युक्तबाहुश्च देवो दिविसुपर्वणः ॥ १२० ॥
आषाढश्च सुषाढश्च ध्रुवोऽथ हरिणो हरः ।
वपुरावर्तमानेभ्यो वसुश्रेष्ठो महापथः ॥ १२१ ॥
शिरोहारी विमर्शश्च सर्वलक्षणलक्षितः ।
अक्षश्च रथयोगी च सर्वयोगी महाबलः ॥ १२२ ॥
समाम्नायोऽसमाम्नायस्तीर्थदेवो महारथः ।
निर्जीवो जीवनो मन्त्रः शुभाक्षो बहुकर्कशः ॥ १२३ ॥
रत्नप्रभूतो रत्नाङ्गो महार्णवनिपानवित् ।
मूलं विशालो ह्यमृतो व्यक्ताव्यक्तस्तपोनिधिः ॥ १२४ ॥

आरोहणोऽधिरोहश्च शीलधारी महायशाः।
सेनाकल्पो महाकल्पो योगो युगकरो हरिः॥ १२५॥
युगरूपो महारूपो महानागहनोऽवधः।
न्यायनिर्वपणः पादः पण्डितो ह्यचलोपमः॥ १२६॥
बहुमालो महामालः शशी हरसुलोचनः।
विस्तारो लवणः कूपस्त्रियुगः सफलोदयः॥ १२७॥
त्रिलोचनो विषण्णाङ्गो मणिविद्धो जटाधरः।
विन्दुर्विसर्गः सुमुखः शरः सर्वायुधः सहः॥ १२८॥
निवेदनः सुखाजातः सुगन्धारो महाधनुः।
गन्धपाली च भगवानुत्थानः सर्वकर्मणाम्॥ १२९॥
मन्थानो बहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः।
ततस्तालः करस्थाली ऊर्ध्वसंहननो महान्॥ १३०॥
छत्रं सुच्छत्रो विख्यातो लोकः सर्वाश्रयः क्रमः।
मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः॥ १३१॥
हर्यक्षः ककुभो वज्री शतजिह्वः सहस्रपात्।
सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः॥ १३२॥
सहस्रबाहुः सर्वाङ्गः शरण्यः सर्वलोककृत्।
पवित्रं त्रिककुन्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिङ्गलः॥ १३३॥
ब्रह्मदण्डविनिर्माता शतघ्नीपाशशक्तिमान्।
पद्मगर्भो महागर्भो ब्रह्मगर्भो जलोद्भवः॥ १३४॥
गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मी ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः।
अनन्तरूपो नैकात्मा तिग्मतेजाः स्वयम्भुवः॥ १३५॥
ऊर्ध्वगात्मा पशुपतिर्वातरंहा मनोजवः।
चन्दनी । पद्मनालाग्रः सुरभ्युत्तरणो नरः॥ १३६॥

कर्णिकारमहास्रग्वी नीलमौलिः पिनाकधृत्।
उमापतिरुमाकान्तो जाह्नवीधृदुमाधवः॥ १३७॥
वरो वराहो वरदो वरेण्यः सुमहास्वनः।
महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिङ्गलः॥ १३८॥
पीतात्मा परमात्मा च प्रयतात्मा प्रधानधृत्।
सर्वपार्श्वमुखस्त्र्यक्षो धर्मसाधारणो वरः॥ १३९॥
चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा अमृतो गोवृषेश्वरः।
साध्यर्षिर्वसुरादित्यो विवस्वान् सवितामृतः॥ १४०॥
व्यासः सर्गः सुसंक्षेपो विस्तरः पर्ययो नरः।
ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः संख्यासमापनः॥ १४१॥
कलाः काष्ठा लवा मात्रा मुहूर्ताहःक्षपाः क्षणाः।
विश्वक्षेत्रं प्रजाबीजं लिङ्गमाद्यस्तु निर्गमः॥ १४२॥
सदसद् व्यक्तमव्यक्तं पिता माता पितामहः।
स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम्॥ १४३॥
निर्वाणं ह्लादनश्चैव ब्रह्मलोकः परा गतिः।
देवासुरविनिर्माता देवासुरपरायणः॥ १४४॥
देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः।
देवासुरमहामात्रो देवासुरगणाश्रयः॥ १४५॥
देवासुरगणाध्यक्षो देवासुरगणाग्रणीः।
देवातिदेवो देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः॥ १४६॥
देवासुरेश्वरो विश्वो देवासुरमहेश्वरः।
सर्वदेवमयोऽचिन्त्यो देवतात्माऽऽत्मसम्भवः॥ १४७॥
उद्भित् त्रिविक्रमो वैद्यो विरजो नीरजोऽमरः।
ईड्यो हस्तीश्वरो व्याघ्रो देवसिंहो नरर्षभः॥ १४८॥

विबुधोऽग्रवरः सूक्ष्मः सर्वदेवस्तपोमयः।
सुयुक्तः शोभनो वज्री प्रासानां प्रभवोऽव्ययः॥ १४९॥
गुहः कान्तो निजः सर्गः पवित्रं सर्वपावनः।
शृङ्गी शृङ्गप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः॥ १५०॥
अभिरामः सुरगणो विरामः सर्वसाधनः।
ललाटाक्षो विश्वदेवो हरिणो ब्रह्मवर्चसः॥ १५१॥
स्थावराणां पतिश्चैव नियमेन्द्रियवर्धनः।
सिद्धार्थः सिद्धभूतार्थोऽचिन्त्यः सत्यव्रतः शुचिः॥ १५२॥
व्रताधिपः परं ब्रह्म भक्तानां परमा गतिः।
विमुक्तो मुक्ततेजाश्च श्रीमाञ्श्रीवर्धनो जगत्॥ १५३॥
यथाप्रधानं भगवानिति भक्त्या स्तुतो मया।
यन्न ब्रह्मादयो देवा विदुस्तत्त्वेन नर्षयः॥ १५४॥
स्तोतव्यमर्च्यं वन्द्यं च कः स्तोष्यति जगत्पतिम्।
भक्त्या त्वेवं पुरस्कृत्य मया यज्ञपतिर्विभुः॥ १५५॥
ततोऽभ्यनुज्ञां सम्प्राप्य स्तुतो मतिमतां वरः।
शिवमेभिः स्तुवन् देवं नामभिः पुष्टिवर्धनैः॥ १५६॥
नित्ययुक्तः शुचिर्भक्तः प्राप्नोत्यात्मानमात्मना॥ १५७॥
एतद्धि परमं ब्रह्म परं ब्रह्माधिगच्छति।
ऋषयश्चैव देवाश्च स्तुवन्त्येतेन तत्परम्॥ १५८॥
स्तूयमानो महादेवस्तुष्यते नियतात्मभिः।
भक्तानुकम्पी भगवानात्मसंस्थाकरो विभुः॥ १५९॥
तथैव च मनुष्येषु ये मनुष्याः प्रधानतः।
आस्तिकाः श्रद्दधानाश्च बहुभिर्जन्मभिः स्तवैः॥ १६०॥
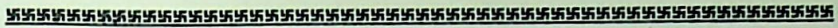
भक्त्या ह्यनन्यमीशानं परं देवं सनातनम्।
कर्मणा मनसा वाचा भावेनामिततेजसः॥ १६१॥
शयाना जाग्रमाणाश्च व्रजन्नुपविशंस्तथा।
उन्मिषन् निमिषंश्चैव चिन्तयन्तः पुनः पुनः॥ १६२॥
शृण्वन्तः श्रावयन्तश्च कथयन्तश्च ते भवम्।
स्तुवन्तः स्तूयमानाश्च तुष्यन्ति च रमन्ति च॥ १६३॥
जन्मकोटिसहस्रेषु नानासंसारयोनिषु।
जन्तोर्विगतपापस्य भवे भक्तिः प्रजायते॥ १६४॥
उत्पन्ना च भवे भक्तिरनन्या सर्वभावतः।
भाविनः कारणे चास्य सर्वयुक्तस्य सर्वथा॥ १६५॥
एतद् देवेषु दुष्प्रापं मनुष्येषु न लभ्यते।
निर्विघ्ना निश्चला रुद्रे भक्तिरव्यभिचारिणी॥ १६६॥
तस्यैव च प्रसादेन भक्तिरुत्पद्यते नृणाम्।
येन यान्ति परां सिद्धिं तद्भावगतचेतसः॥ १६७॥
ये सर्वभावानुगताः प्रपद्यन्ते महेश्वरम्।
प्रपन्नवत्सलो देवः संसारात् तान् समुद्धरेत्॥ १६८॥
एवमन्ये विकुर्वन्ति देवाः संसारमोचनम्।
मनुष्याणामृते देवं नान्या शक्तिस्तपोबलम्॥ १६९॥
इति तेनेन्द्रकल्पेन भगवान् सदसत्पतिः।
कृत्तिवासाः स्तुतः कृष्ण तण्डिना शुभबुद्धिना॥ १७०॥
स्तवमेतं भगवतो ब्रह्मा स्वयमधारयत्।
गीयते च स बुद्ध्येत ब्रह्मा शङ्करसंनिधौ॥ १७१॥
इदं पुण्यं पवित्रं च सर्वदा पापनाशनम्।

योगदं मोक्षदं चैव स्वर्गदं तोषदं तथा॥ १७२॥
एवमेतत् पठन्ते य एकभक्त्या तु शङ्करम्।
या गतिः सांख्ययोगानां व्रजन्त्येतां गतिं तदा॥ १७३॥
स्तवमेतं प्रयत्नेन सदा रुद्रस्य संनिधौ।
अब्दमेकं चरेद् भक्तः प्राप्नुयादीप्सितं फलम्॥ १७४॥
एतद् रहस्यं परमं ब्रह्मणो हृदि संस्थितम्।
ब्रह्मा प्रोवाच शक्राय शक्रः प्रोवाच मृत्यवे॥ १७५॥
मृत्युः प्रोवाच रुद्रेभ्यो रुद्रेभ्यस्तण्डिमागमत्।
महता तपसा प्राप्तस्तण्डिना ब्रह्मसद्मनि॥ १७६॥
तण्डिः प्रोवाच शुक्राय गौतमाय च भार्गवः।
वैवस्वताय मनवे गौतमः प्राह माधव॥ १७७॥
नारायणाय साध्याय समाधिष्ठाय धीमते।
यमाय प्राह भगवान् साध्यो नारायणोऽच्युतः॥ १७८॥
नाचिकेताय भगवानाह वैवस्वतो यमः।
मार्कण्डेयाय वार्ष्णेय नाचिकेतोऽभ्यभाषत॥ १७९॥
मार्कण्डेयान्मया प्राप्तो नियमेन जनार्दन।
तवाप्यहममित्रघ्न स्तवं दद्यां ह्यविश्रुतम्॥ १८०॥
स्वर्ग्यमारोग्यमायुष्यं धन्यं वेदेन सम्मितम्।
नास्य विघ्नं विकुर्वन्ति दानवा यक्षराक्षसाः।
पिशाचा यातुधाना वा गुह्यका भुजगा अपि॥ १८१॥
यः पठेत शुचिः पार्थ ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः।
अभग्नयोगो वर्षं तु सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ १८२॥

इति श्रीमहाभारते अनुशासनपर्वणि शिवसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

आरती

भगवान् गङ्गाधर

ॐ जय गङ्गाधर जय हर जय गिरिजाधीशा।
त्वं मां पालय नित्यं कृपया जगदीशा॥
हर हर हर महादेव॥ १॥

कैलासे गिरिशिखरे कल्पद्रुमविपिने।
गुञ्जति मधुकरपुञ्जे कुञ्जवने गहने॥
कोकिलकूजित खेलत हंसावन ललिता।
रचयति कलाकलापं नृत्यति मुदसहिता॥
हर हर हर महादेव॥ २॥

तस्मिंल्ललितसुदेशे शाला मणिरचिता।
तन्मध्ये हरनिकटे गौरी मुदसहिता॥
क्रीडा रचयति भूषारञ्जित निजमीशम्।
इन्द्रादिक सुर सेवत नामयते शीशम्॥
हर हर हर महादेव॥ ३॥

बिबुधबधू बहु नृत्यत हृदये मुदसहिता।
किन्नर गायन कुरुते सप्त स्वर सहिता॥
धिनकत थै थै धिनकत मृदङ्ग वादयते।
क्वण क्वण ललिता वेणुं मधुरं नाटयते॥
हर हर हर महादेव॥ ४॥

रुण रुण चरणे रचयति नूपुरमुज्ज्वलिता।
चक्रावर्ते भ्रमयति कुरुते तां धिक तां॥
तां तां लुप चुप तां तां डमरू वादयते।
अंगुष्ठांगुलिनादं लासकतां कुरुते॥
हर हर हर महादेव॥ ५॥

कर्पूरद्युतिगौरं पञ्चाननसहितम्।
त्रिनयनशशिधरमौलिं विषधरकण्ठयुतम्॥
सुन्दरजटाकलापं पावकयुतभालम्।
डमरुत्रिशूलपिनाकं करधृतनृकपालम्॥
हर हर हर महादेव॥ ६॥

मुण्डै रचयति माला पन्नगमुपवीतम्।
वामविभागे गिरिजारूपं अतिललितम्॥
सुन्दरसकलशरीरे कृतभस्माभरणम्।
इति वृषभध्वजरूपं तापत्रयहरणम्॥
हर हर हर महादेव॥ ७॥

शङ्खनिनादं कृत्वा झल्लरि नादयते।
नीराजयते ब्रह्मा वेदऋचां पठते॥
अतिमृदुचरणसरोजं हृत्कमले धृत्वा।
अवलोकयति महेशं ईशं अभिनत्वा॥
हर हर हर महादेव॥ ८॥

ध्यानं आरति समये हृदये अति कृत्वा।
रामस्त्रिजटानाथं ईशं अभिनत्वा॥
संगतिमेवं प्रतिदिन पठनं यः कुरुते।
शिवसायुज्यं गच्छति भक्त्या यः शृणुते॥
हर हर हर महादेव॥ ९॥

भगवान् श्रीशङ्कर

जयति जयति जग-निवास, शङ्कर सुखकारी ॥

अजर अमर अज अरूप, सत चित आनंदरूप,

व्यापक ब्रह्मस्वरूप, भव! भव-भय-हारी ॥ जयति० ॥

शोभित बिधुबाल भाल, सुरसरिमय जटाजाल,

तीन नयन अति विशाल, मदन-दहन-कारी ॥ जयति० ॥

भक्तहेतु धरत शूल, करत कठिन शूल फूल,

हियकी सब हरत हूल, अचल शान्तिकारी ॥ जयति० ॥

अमल अरुण चरण कमल, सफल करत काम सकल,

भक्ति-मुक्ति देत विमल, माया-भ्रम-टारी ॥ जयति० ॥

कार्तिकेययुत गणेश, हिमतनया सह महेश,

राजत कैलास-देश, अकल कलाधारी ॥ जयति० ॥

भूषण तन भूति व्याल, मुण्डमाल कर कपाल,

सिंह-चर्म हस्ति खाल, डमरू कर धारी ॥ जयति० ॥

अशरण जन नित्य शरण, आशुतोष आर्तिहरण,

सब बिधि कल्याण-करण, जय जय त्रिपुरारी ॥ जयति० ॥

भगवान् महादेव

हर हर हर महादेव॥

सत्य, सनातन, सुन्दर शिव! सबके स्वामी।
अविकारी, अविनाशी, अज, अन्तर्यामी॥
हर हर हर महादेव॥ १॥

आदि, अनन्त, अनामय, अकल, कलाधारी।
अमल, अरूप, अगोचर, अविचल, अघहारी॥
हर हर हर महादेव॥ २॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, तुम त्रिमूर्तिधारी।
कर्ता, भर्ता, धर्ता तुम ही संहारी॥
हर हर हर महादेव॥ ३॥

रक्षक, भक्षक, प्रेरक, प्रिय औढरदानी।
साक्षी, परम अकर्ता, कर्ता, अभिमानी॥
हर हर हर महादेव॥ ४॥

मणिमय-भवन-निवासी, अति भोगी, रागी।
सदा श्मशान विहारी, योगी वैरागी॥
हर हर हर महादेव॥ ५॥

छाल-कपाल, गरल-गल, मुण्डमाल, व्याली।
चिताभस्मतन, त्रिनयन, अयनमहाकाली॥
हर हर हर महादेव॥ ६॥

प्रेत-पिशाच-सुसेवित, पीतजटाधारी।
विवसन विकट रूपधर, रुद्र प्रलयकारी॥
हर हर हर महादेव॥ ७॥
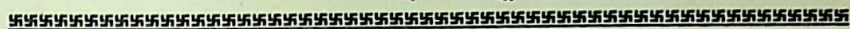
शुभ्र-सौम्य, सुरसरिधर, शशिधर, सुखकारी।
अतिकमनीय, शान्तिकर, शिवमुनि-मन-हारी॥
हर हर हर महादेव॥ ८ ॥

निर्गुण, सगुण, निरञ्जन, जगमय, नित्य-प्रभो।
कालरूप केवल हर! कालातीत विभो॥
हर हर हर महादेव॥ ९ ॥

सत्, चित्, आनँद, रसमय, करुणामय धाता।
प्रेम-सुधा-निधि, प्रियतम, अखिल विश्व-त्राता॥
हर हर हर महादेव॥ १० ॥

हम अति दीन, दयामय! चरण-शरण दीजै।
सब बिधि निर्मल मति कर, अपनो कर लीजै॥
हर हर हर महादेव॥ ११ ॥

~~*~~

भगवान् शिवशङ्कर

हरि कर दीपक, बजावें संख सुरपति,
गनपति झाँझ, भैरों झालर झरत हैं।
नारदके कर बीन, सारदा गावत जस,
चारिमुख चारि वेद बिधि उचरत हैं॥
षटमुख रटत सहस्त्रमुख सिव सिव,
सनक-सनंदनादि पाँयन परत हैं।
'बालकृष्ण' तीनि लोक, तीस और तीनि कोटि,
एते शिवशङ्करकी आरति करत हैं॥

~~*~~

भगवान् कैलासवासी

शीश गंग अर्धंग पार्वती, सदा विराजत कैलासी।
नंदी भृंगी नृत्य करत हैं, धरत ध्यान सुर सुखरासी॥
शीतल मन्द सुगन्ध पवन बह, बैठे हैं शिव अविनाशी।
करत गान गन्धर्व सप्त स्वर, राग रागिनी मधुरा-सी॥
यक्ष-रक्ष भैरव जहँ डोलत, बोलत हैं वनके वासी।
कोयल शब्द सुनावत सुन्दर, भ्रमर करत हैं गुंजा-सी॥
कल्पद्रुम अरु पारिजात तरु, लाग रहे हैं लक्षासी।
कामधेनु कोटिन जहँ डोलत, करत दुग्धकी वर्षा-सी॥
सूर्यकान्त सम पर्वत शोभित, चन्द्रकान्त सम हिमराशी।
नित्य छहों ऋतु रहत सुशोभित, सेवत सदा प्रकृति-दासी॥
ऋषि-मुनि देव दनुज नित सेवत, गान करत श्रुति गुणराशी।
ब्रह्मा-विष्णु निहारत निसिदिन, कछु शिव हमकूँ फरमासी॥
ऋद्धि सिद्धिके दाता शङ्कर, नित सत् चित् आनँदराशी।
जिनके सुमिरत ही कट जाती, कठिन काल-यमकी फाँसी॥
त्रिशूलधरजीका नाम निरंतर, प्रेम सहित जो नर गासी।
दूर होय विपदा उस नरकी, जन्म-जन्म शिवपद पासी॥
कैलासी काशीके वासी, अविनाशी मेरी सुध लीजो।
सेवक जान सदा चरननको, अपनो जान कृपा कीजो॥
तुम तो प्रभुजी सदा दयामय, अवगुण मेरे सब ढकियो।
सब अपराध क्षमाकर शङ्कर, किंकरकी विनती सुनियो॥

भगवान् श्रीभोलेनाथजी

अभयदान दीजै दयालु प्रभु सकल सृष्टिके हितकारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
दीनदयालु कृपालु कालरिपु अलखनिरंजन शिव योगी।
मंगल रूप अनूप छबीले अखिल भुवनके तुम भोगी॥
बाम अंग अति रँगरस-भीने उमा-वदनकी छबि न्यारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
असुर-निकंदन सब दुखभंजन वेद बखाने जग जाने।
रुण्ड-माल गल व्याल भाल-शशि नीलकंठ शोभा साने॥
गंगाधर त्रिशूलधर विषधर बाघम्बरधर गिरिचारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
यह भवसागर अति अगाध है पार उतर कैसे बूझै।
ग्राह मगर बहु कच्छप छाये मार्ग कहो कैसे सूझै॥
नाम तुम्हारा नौका निर्मल तुम केवट शिव अधिकारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
मैं जानूँ तुम सद्गुणसागर अवगुण मेरे सब हरियो।
किंकरकी विनती सुन स्वामी सब अपराध क्षमा करियो॥
तुम तो सकल विश्वके स्वामी मैं हूँ प्राणी संसारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
काम-क्रोध-लोभ अति दारुण इनसे मेरो वश नाहीं।
द्रोह-मोह-मद संग न छोड़ै आन देत नहिं तुम ताँई॥

क्षुधा-तृषा नित लगी रहत है बढ़ी विषय तृष्णा भारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
तुम ही शिवजी कर्ता हर्ता तुम ही जगके रखवारे।
तुम ही गगन मगन पुनि पृथिवी पर्वतपुत्रीके प्यारे॥
तुम ही पवन हुताशन शिवजी तुम ही रवि-शशि तमहारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
पशुपति अजर अमर अमरेश्वर योगेश्वर शिव गोस्वामी।
वृषभारूढ़ गूढ़ गुरु गिरिपति गिरिजावल्लभ निष्कामी॥
सुषमासागर रूप उजागर गावत हैं सब नर-नारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
महादेव देवोंके अधिपति फणिपति-भूषण अति साजै।
दीप्त ललाट लाल दोउ लोचन उर आनत ही दुख भाजै॥
परम प्रसिद्ध पुनीत पुरातन महिमा त्रिभुवन-विस्तारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
ब्रह्मा-विष्णु-महेश-शेष मुनि-नारद आदि करत सेवा।
सबकी इच्छा पूरन करते नाथ सनातन हर देवा॥
भक्ति-मुक्तिके दाता शङ्कर नित्य-निरंतर सुखकारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥
महिमा इष्ट महेश्वरकी जो सीखे सुने नित्य गावै।
अष्टसिद्धि-नवनिधि सुखसम्पति स्वामिभक्ति मुक्ती पावै॥
श्रीअहिभूषण प्रसन्न होकर कृपा कीजिये त्रिपुरारी।
भोलेनाथ भक्त-दुखगंजन भवभंजन शुभ सुखकारी॥

~~ ❋ ~~
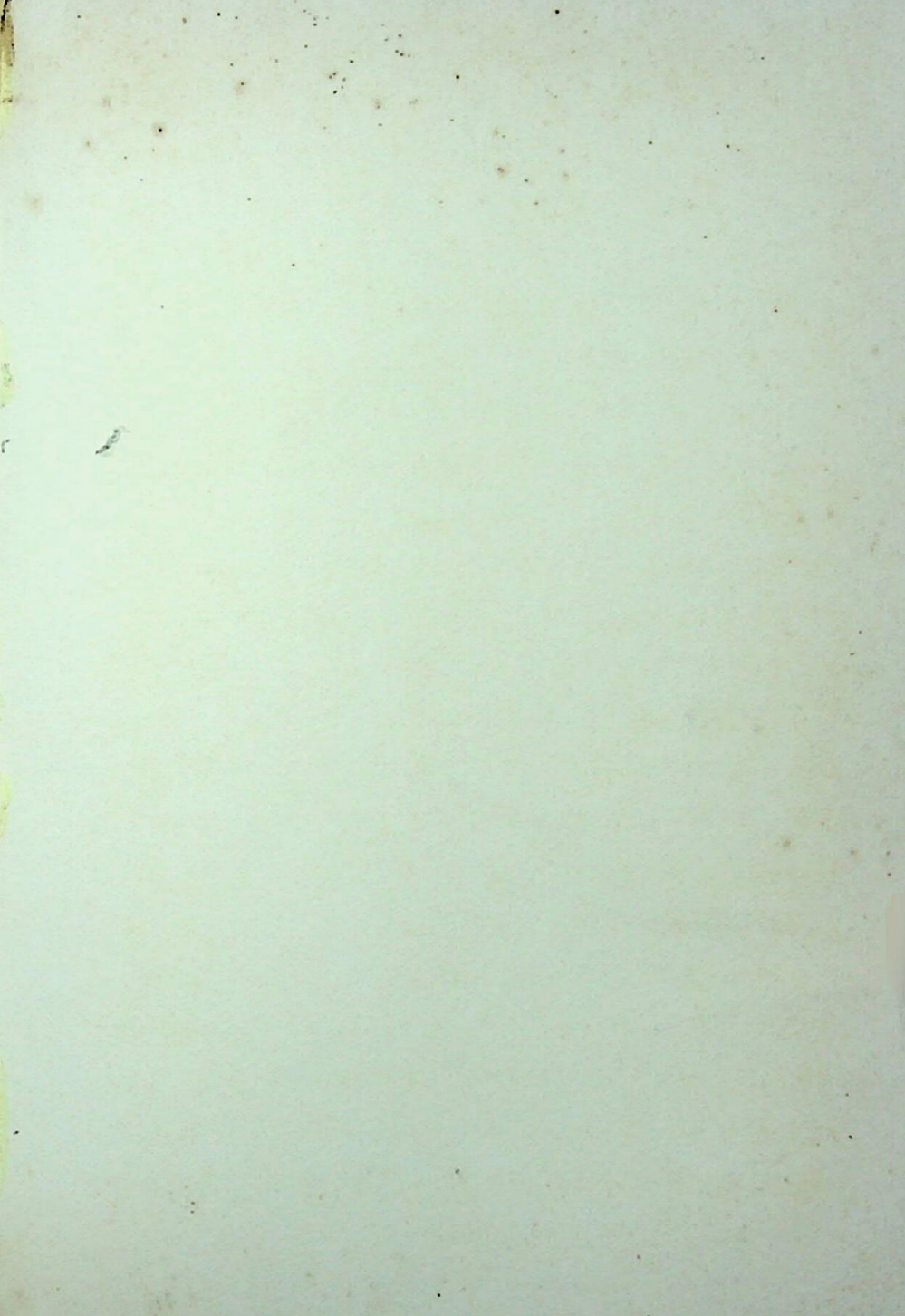
'गीताप्रेस' गोरखपुरकी निजी दूकानें तथा स्टेशन-स्टाल

गोरखपुर-२७३००५ गीताप्रेस—पो० गीताप्रेस ©(०५५१)२३३४७२१, फैक्स २३३६९९७
website : www.gitapress.org / e-mail: booksales@gitapress.org
दिल्ली-११०००६ २६०९, नयी सड़क © (०११) २३२६९६७८; फैक्स २३२५९१४०
कोलकाता-७००००७ गोविन्दभवन-कार्यालय; १५१, महात्मा गाँधी रोड, © (०३३) २२६८६८९४,
e-mail:gobindbhawan@gitapress.org फैक्स २२६८०२५१
मुम्बई-४००००२ २८२, सामलदास गाँधी मार्ग (प्रिन्सेस स्ट्रीट)
मरीन लाइन्स स्टेशनके पास © (०२२) २२०७२६३६
कानपुर-२०८००१ २४/५५, बिरहाना रोड ©(०५१२)२३५२३५१, फैक्स २३५२३५१
पटना-८००००४ अशोकराजपथ, महिला अस्पतालके सामने © (०६१२) २३००३२५
राँची-८३४००१ कोर्ट सराय रोड, अपर बाजार, बिड़ला गद्दीके प्रथम तलपर ©(०६५१)२२१०६८५
सूरत-३९५००१ वैभव एपार्टमेन्ट, नूतन निवासके सामने, भटार रोड
e-mail: suratdukan@gitapress.org; © (०२६१) २२३७३६२, २२३८०६५
इन्दौर-४५२००१ जी० ५, श्रीवर्धन, ४ आर एन. टी. मार्ग © (०७३१)२५२६५१६, २५११९७७
जलगाँव-४२५००१ श्रीवल्लभ कॉम्प्लेक्स, नटवर टाकीज (महाराष्ट्र) ©(०२५७)२२२६३९३
हैदराबाद-५०००९६ ४१, ४-४-१, दिलशाद प्लाजा, सुल्तान बाजार ©(०४०)२४७५८३११
नागपुर-४४०००२ श्रीजी कृपा कॉम्प्लेक्स, ८५१, न्यू इतवारी रोड ©(०७१२)२७३४३५४
कटक-७५३००९ भरतिया टावर्स, बादाम बाड़ी © (०६७१) २३३५४८१
रायपुर-४९२००९ मित्तल कॉम्प्लेक्स, गंजपारा, तेलघानी चौक
(छत्तीसगढ़) © (०७७१) ५०३४४३०
वाराणसी-२२१००१ ५९/९, नीचीबाग © (०५४२) २४१३५५१
e-mail:varanasidukan@gitapress.org
हरिद्वार-२४९४०१ सब्जीमण्डी, मोतीबाजार © (०१३३४) २२२६५७
ऋषिकेश-२४९३०४ गीताभवन, गङ्गापार, पो० स्वर्गाश्रम © (०१३५) २४३०१२२
e-mail:gitabhawan@gitapress.org २४३२७९२

स्टेशन-स्टाल दिल्ली जंक्शन (प्लेटफार्म नं० १२); नयी दिल्ली (नं० ८-९); हजरत निजामुद्दीन [दिल्ली] (नं० ४-५); कोटा [राजस्थान] (नं० १); बीकानेर (नं० १); गोरखपुर (नं० १); कानपुर (नं० १); लखनऊ [एन० ई० रेलवे]; वाराणसी (नं० ४-५); मुगलसराय जं० (नं० ३-४); हरिद्वार (नं० १); पटना जं० (मुख्य प्रवेशद्वार); राँची (नं० १); धनबाद (नं० २-३); मुजफ्फरपुर (नं० १); समस्तीपुर (नं० २); हावड़ास्टेशन (नं० ५ तथा १८ दोनोंपर); सियालदा मेन (नं० ८); आसनसोल (नं० ५); कटक (नं० १); भुवनेश्वर (नं० १); राऊरकेला (पुस्तक-ट्राली); राजगांगपुर (पुस्तक-ट्राली); औरंगाबाद [महाराष्ट्र] (नं० १); सिकन्दराबाद [आं० प्र०] (नं० १); गुवाहाटी जं० (मुसाफिरखाना); खड़गपुर (नं० १-२); रायपुर [छत्तीसगढ़] (नं० १) एवं अन्तर्राज्यीय बस-अड्डा, दिल्ली।

फुटकर पुस्तक-दूकानें

चूरू-३३१००१— ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, पुरानी सड़क
© (०१५६२) २५२६७४
ऋषिकेश-२४९१९२— मुनिकी रेती
तिरुपति-५१७५०४— शॉप नं० ५६, टी० टी० डी० मिनी शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, तिरुमलाई हिल्स

ISBN 81-293-0194-6
9788129301949